धर्मायण

(धार्मिक, सांस्कृतिक एवं राष्ट्रीय चेतना की पत्रिका)

मूल्य : 45 रुपये

अंक 134

भाद्रपद,

2080 वि. सं.

शाप–विमर्श विशेषांक

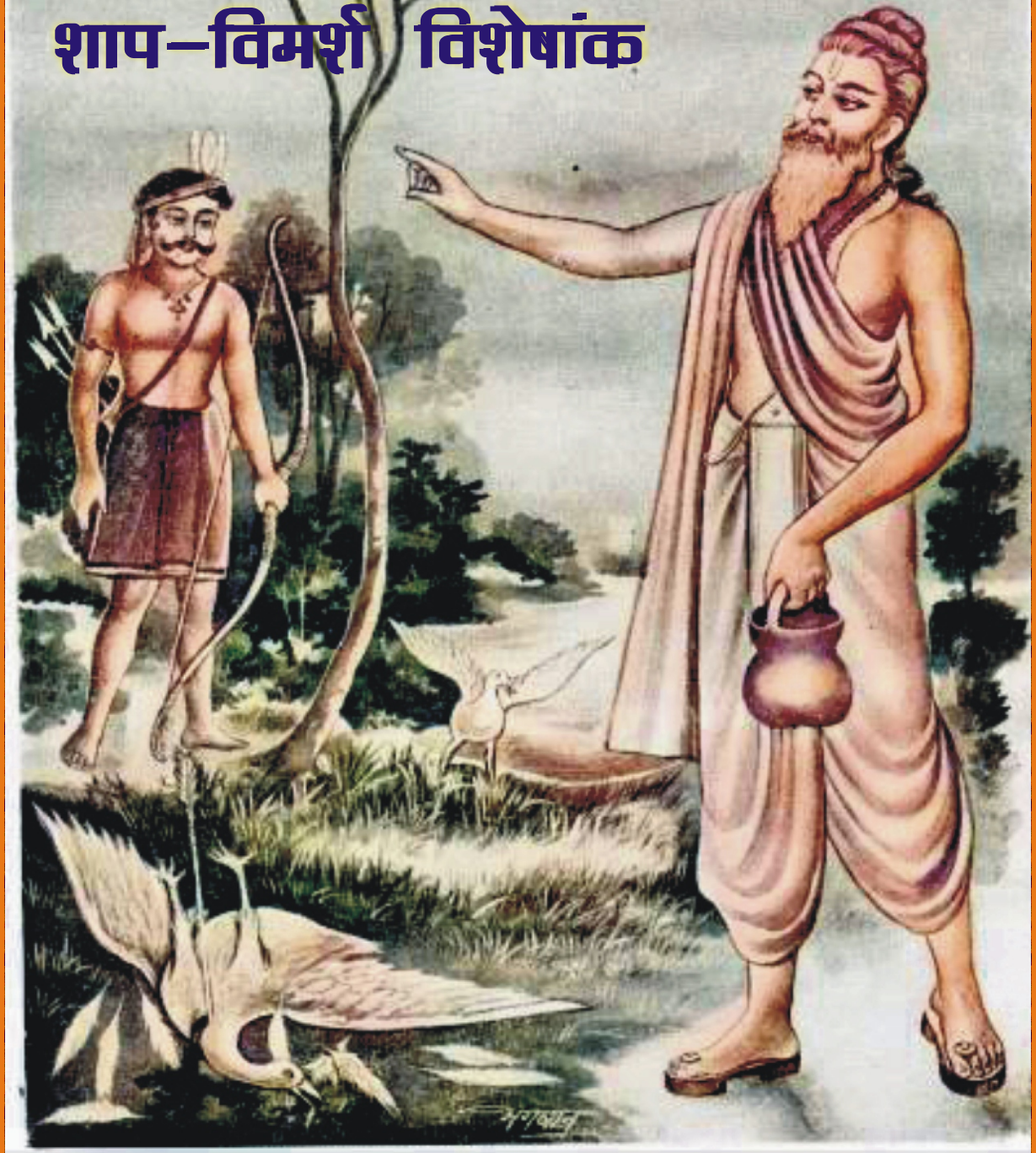

धर्मायण

Title Code–BIHHIN00719

आलेख-सूची

1. शापादपि वरादपि — सम्पादकीय 3
2. महाभारत वनपर्व में पर्यालोचित शाप-प्रकरण — डा. ममता मिश्र 'दाश' 4
3. महाभारत में शाप प्रकरण — विद्यावाचस्पति महेश प्रसाद पाठक 10
4. शाप के सिद्धान्त — निग्रहाचार्य श्रीभागवतानंद गुरु 16
5. 'मानस' में वर्णित शाप तथा उनकी दिशाएँ (पूर्वप्रकाशित अंक 80) — श्रीकांत सिंह 19
6. वरदान होते गए 'मानस' के शाप — डा.कवीन्द्र नारायण श्रीवास्तव 24
7. पौराणिक शाप कथाएँ : भारतीय मिथक — डा. जनार्दन यादव 29
8. श्रीमद्भागवत के द्वितीय खण्ड में शापप्रसंग — पं. शम्भुनाथ शास्त्री 'वेदान्ती' 41
9. जब ब्रह्मा भी शापग्रस्त हुए -श्री महेश शर्मा 'अनुराग' 50
10. जब विष्णु भी हुए शापग्रस्त — डा. सुदर्शन श्रीनिवास शाण्डिल्य 55
11. सनातन धर्म में अधिक मास का माहात्म्य — डा.शारदा मेहता 59
12. ब्रह्माण्डपुराणोक्त श्रीनृसिंहकवच (हिन्दी अनुवाद सहित) — अंकुर नागपाल 63
13. महावीर मन्दिर समाचार (वैदिक सम्मेलन पर विशेष) 68
14. भाद्र मास, 2080 के व्रत-पर्व 79

पत्रिका में प्रकाशित विचार लेखक के हैं। इनसे सम्पादक की सहमति आवश्यक नहीं है। हम प्रबुद्ध रचनाकारों की अप्रकाशित, मौलिक एवं शोधपरक रचनाओं का स्वागत करते हैं। रचनाकारों से निवेदन है कि सन्दर्भ-संकेत अवश्य दें।

धार्मिक, सांस्कृतिक एवं राष्ट्रीय चेतना की पत्रिका

अंक 134
भाद्रपद, 2080 वि. सं.
1 सितम्बर-29 सितम्बर 2023ई.

सम्पादक

भवनाथ झा

पत्राचार :
महावीर मन्दिर,
पटना रेलवे जंक्शन के सामने
पटना–800001, बिहार
फोन: 0612–2223798
मोबाइल: 9334468400

E–mail:
dharmayanhindi@gmail.com

Website:
www.mahavirmandirpatna.org/dharmayan/

Whatsapp:
9334468400

मूल्य : 45 रुपये

पाठकीय प्रतिक्रिया

(अंक संख्या 133, श्रावण, 2080 वि.सं.

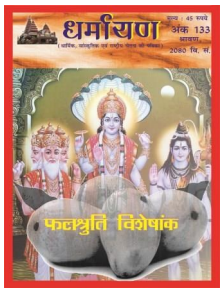

धर्मायण का फलश्रुति अंक पढ़ा। बहुत भ्रान्तियाँ दूर हुई। लोग फलश्रुति के अर्थ को ही सबसे अधिक महत्त्व दे रहे थे, किन्तु इस अंक को पढ़कर लगा कि यह तो केवल आकृष्ट करने का साधन है। फल तो इससे भी कहीं विशिष्ट है। सभी लेखकों की विद्वत्ता इस अंक में झलकती है। विशेष रूप से डा. ममता मिश्र जी का आलेख ज्ञानवर्द्धक लगा। भारतीय परम्परा में स्तुति और उसकी फलश्रुति के बीच के ताना-बाना को आसान शब्दों में स्पष्ट किया गया है। इस अंक को पढ़कर अर्थवाद को समझना आसान हो गया है। ब्राह्मण-ग्रन्थों में निन्दा के प्रसंगों को पूर्व में हम जैसे लोग थोड़ी अस्वाभाविक दृष्टि से देख रहते थे पर इससे स्पष्ट हुआ कि निन्दा वस्तुतः बुरे कार्यों से दूर हटाने का तरीका है। हमें गर्व होता है कि हमारे आचार्यों ने हमें कैसे अंधकार से दूर हटाकर प्रकाशित करने का कार्य किया है।

-जितेन्द्र पाठक,
लक्ष्मणपुरी, सहारनपुर, उ.प्र.

आपको यह अंक कैसा लगा? इसकी सूचना हमें दें। पाठकीय प्रतिक्रियाएँ आमन्त्रित हैं। इसे हमारे ईमेल dharmayanhindi@gmail.com पर अथवा ह्वाट्सएप सं.–+91 9334468400 पर भेज सकते हैं।

'धर्मायण' का अग्रिम अंक **पितृभक्ति-विशेषांक** के रूप में प्रस्तावित है। आज वास्तविकता है कि हमारे सम्बन्ध टूट रहे हैं, समाज टूट रहा है, परिवार तक बिखर रहा है, न्यूक्लियर फैमिली ने सबको अपने चपेट में ले लिया है। इस विषम परिस्थिति के लिए सनातन धर्म की गहराई में समाधान ढूँढ़ने का प्रयत्न किया है। हमारी सनातन अवधारणा है– सप्तपुरुषी सपिण्डता। सात पीढ़ी ऊपर तक की संतान को हम एक ईकाई मानते रहे हैं, उन्हें सपिण्ड मानते रहे हैं। पर, आज पति-पत्नी और बच्चे पर सिमट चुके हैं। जीवित माता-पिता भी हमें परिवार से इतर लगने लगे हैं। क्या सप्तपुरुषी सपिण्डता की अवधारणा का ज्ञान हमें फिर बृहत्तर कुटुम्ब को समझने में सहायक हो सकता है?

विस्तार से– पृ. 58 पर

धर्मायण के सभी अंक Google Books पर भी पूर्णतः पढ़ने हेतु उपलब्ध है। इससे 'धर्मायण' की अन्तरराष्ट्रीय ख्याति हुई है। शोधार्थी उन्मुक्त भाव से इन आलेखों का उपयोग कर पा रहे हैं, लेकिन वहाँ से डाउनलोड करने की स्वतन्त्रता नहीं दी गयी है। वहाँ चार अंकों के समूह में आप पढ़ सकते हैं।

शापादपि वरादपि

सम्पादकीय

—भवनाथ झा

'शप आक्रोशे' धातु से निष्पन्न 'शाप' शब्द आक्रोश व्यक्त करने के अर्थ में प्रयुक्त है। संसार की सभी सभ्यताओं में शाप और वरदान की कथाएँ प्रचलित हैं। यूनानी कथाओं में राजा तूत की ममी का शाप प्रसिद्ध है। शेक्सपीयर ने 'मैकबेथ' के शाप के आधार पर अपने नाटक का ताना-बाना बुना है। पॉलिश राजा के कब्रगाह का शाप भी विख्यात है। इन शापकथाओं में भी अलौकिक चमत्कारों का प्रदर्शन किया गया है।

भारतीय शापकथाओं में थोड़ी भिन्नता पाते हैं। यहाँ शाप प्रत्यक्ष अपराध के दण्ड के रूप में दिया जाता है। कुछ शापकथाओं में अपराध की गम्भीरता और शाप की प्रबलता में हम अस्वाभाविकता की खोज कर सकते हैं पर कहीं न कहीं अपराध वहाँ अवश्य है, सामाजिक व्यवस्था को तोड़ने की बात अवश्य है वह निरर्थक नहीं है। इन सब विवेचन के लिए विभिन्न शापकथाओं के संकलन की दृष्टि से यह आधारभूत अंक तैयार किया गया है। हम यह नहीं कह सकते हैं कि इस अंक में की गयी व्याख्या ही अन्तिम व्याख्या है। विभिन्न दृष्टिकोण से इन शापकथाओं की व्याख्या अग्रतर शोध के लिए की जा सकती है।

कुछ शापकथाएँ वास्तव में अस्वाभाविक लगती है— जैसे लक्ष्मी के द्वारा विष्णु के सिर कट जाने का शाप देवीभागवत में आया है। यहाँ हमें देखना होगा कि इस कथा का एक विशेष उद्देश्य है और वह है— विष्णु का हयग्रीव के रूप में अवतार की पृष्ठभूमि तैयार करना। विष्णु और नारद के बीच का शाप-प्रतिशाप भी सोद्देश्यक है जो अग्रिम कथा की भूमिका प्रस्तुत करता है। हम देवताओं की शापकथाओं को इस सन्दर्भ में देख सकते हैं। ब्राह्मणों तथा ऋषियों की शापकथाओं में सामाजिक-धार्मिक विधानों को तोड़नेवाले को दण्ड देने की बात है।

कहीं-कहीं स्वाभिमान आहत होने पर भी दुर्वासा से ऋषिगण देवता तक को शाप दे बैठते हैं जैसे सरस्वती को पृथ्वीलोक में अवतरित होने के लिए शाप देना। यहाँ वे स्वयं विस्वर वेद का पाठ कर रहे थे किन्तु वे अपनी गलती भुलाकर शाप दे दिया। लेकिन ऐसी शापकथाओं को लोककल्याण से जोड़ने का काम बाणभट्ट ने कर दिया। राजा दशरथ को पुत्रशोक में प्राण त्यागने का शाप भी रामजन्म के सन्दर्भ में नियोजित कर दिया गया। इतना ही नहीं, महाकवि भास ने तो इस कथा को कैकेयी की निरपराधता सिद्ध करने में उपयोग कर लिया। इस प्रकार शापकथाएँ भारतीय पुराकथाओं की सम्पत्ति है, जिसके कारण अनेक कथाएँ जन्मी है। इस विषय पर व्यापक विमर्श के लिए ध्यान आकृष्ट करना ही इस अंक का उद्देश्य है। हम चाहते हैं कि भविष्य में इस विषय पर लेखक विमर्श प्रस्तुत करेंगे।

***

महाभारत वनपर्व में पर्यालोचित शाप प्रकरण

डा. ममता मिश्र 'दाश'
संस्थापक सचिव,
प्रो. के.वी. शर्मा रिसर्च इंस्ट्च्यूट, अड्यार, चेन्नई

वाल्मीकि रामायण एवं महाभारत भारतीय संस्कृति के दो उपजीव्य ग्रन्थ रहे हैं, जिनमें वर्णित कथाओं और ऐतिहासिक घटनाओं का परवर्ती प्रभाव सबसे अधिक रहा है। स्वाभाविक रूप से इनमें वर्णित शापकथाओं का साहित्यिक महत्त्व अधिक होगा। इन शापकथाओं में जो परवर्ती परिवर्द्धन, परिवर्तन तथा विलोपन हुए हैं वे हमारे सांस्कृतिक इतिहास के स्रोत हैं। उनके अध्ययन से हम यह जान सकते हैं कि मूल कथा में परिवर्तन कैसे किया गया है तथा उसकी दिशा क्या है। इस प्रकार महाभारत की कुछ प्रसिद्ध शापकथाओं का विवेचन यहाँ किया गया है। राजा नल, कर्कोटक सर्प, अर्जुन-उर्वशी, ऋषि अष्टावक्र को पिता कहोड़ का शाप -ये सब संस्कृत साहित्य में बहुधा वर्णित हैं, जहाँ इन मूल कथाओं में पर्याप्त परिवर्तन किए गये हैं। महाभारत के शाकुन्तलोपाख्यान में तो कालिदास ने एक शापकथा जोड़कर दुष्यन्त की धीरोदात्तता पर लगे प्रश्नचिह्न को ही मिटा दिया है। इस प्रकार, हमें महाभारत की शापकथाओं को अपने मूल रूप में देखने की आवश्यकता है।

व्यास वसिष्ठो मैत्रेयो नारदो लोमशः शुक्रः।
अन्ये च ऋषयः सर्वे धर्मेणैव सुचेतसः॥
प्रत्यक्षं पश्यसि ह्येतान् दिव्ययोगसमन्वितान्।
शापानुग्रहणे शक्तान् देवेभ्योऽपि गरीयसः॥ [1]

व्यास, वसिष्ठ, नारद, लोमश, शुक्र मुनि आदि सब दिव्य योग से सम्बन्धित हैं। और ये सब शाप एवं अनुग्रह दोनों में सिद्धहस्त हैं। इनकी दिव्यशक्ति के कारण ये सब महर्षियाँ देवताओं से भी बढकर हैं।

भारतीय परम्परा में वेद से लेकर उपनिषद् तक, इतिहास से लेकर पुराण तक देखा जाय, मानव वरदान या शाप से नियन्त्रित है। भगवान् से हम वर माँगते हैं, तो कभी देवोपम मानव खुश होकर वर दे देते हैं। कभी कुछ असावधानता के कारण गलती हो जाती है, कभी कभी दानव या दुष्ट प्रकृति के लोग गर्व के कारण जानबूझ कर गलतियाँ करते भी हैं। तभी ये अभिशाप का शिकार होते हैं। अभिशाप देने के लिये शारीरिक स्थिति या सामाजिक स्वीकृति की आवश्यकता नहीं है। किसी भी कारण मानसिक सन्तुलन खो जाता है या आत्मा को दुःख पहुँचता है तो परिणामस्वरूप मुँह से शाप निकल आता है। नहीं तो श्रवण कुमार के अन्धे पिता के मुँह से महाराज दशरथ को शाप नहीं मिलता और वह शाप फलदायी भी नहीं होता।

वैसे महाभारत में भिन्न भिन्न अवसर पर शाप की अवतारणा की गयी है। शाप का जो भयानक परिणाम

1. महाभारत : वनपर्व, 31. 12-13, खण्ड 1, कोलकाता, 1834, पृ. 450.

है, अगर उसका अनुध्यान किया जाय तो वे सब घटनाएँ बहुत प्रभावशाली हैं। इस निबन्ध में वनपर्व के कुछ शापवृत्तान्तों की सूचना दी जायेगी।

मैत्रेय दुर्योधन शापवृत्तान्त– वनपर्व, दशम अध्याय

पाण्डवों को वनवास की सजा हो गई। पर इससे सब खुश नहीं थे। बहुत लोगों ने धृतराष्ट्र और दुर्योधन के सामने सन्धि या शान्ति प्रस्ताव रखना चाहा, पर दुर्योधन ने किसी की बात नहीं मानी। एक ऐसा उद्यम महर्षि व्यासदेव ने भी किया था। उन्होंने महर्षि मैत्रेय को इस महान काम के लिये चुना। व्यासदेव ने धृतराष्ट्र से कहा– ऋषि मैत्रेय पाण्डवों से मिल कर यहाँ आयेंगे आपके बेटे से शान्ति प्रस्ताव रखने के लिये। अगर आपका बेटा राजी हो गया तो ठीक है, नहीं तो वे आपके बेटे को शाप देंगे। समय पर मैत्रेय महर्षि उपस्थित हुए। वे पहले धृतराष्ट्र को ही समझाने लगे। उन्होंने नहीं समझा तो दुर्योधन के पास गये। मैत्रेय महर्षि ने पाण्डवों की महत्ता, श्रीकृष्ण के साथ उनके सम्बन्ध के बारे में सूचना दी। भीमसेन के द्वारा हिडिम्बा, किर्मिर आदियों के वध की बातें भी याद दिलाने की कोशिश की। पर दुर्योधन के ऊपर कोई असर नहीं पड़ रहा था। शान्ति प्रस्ताव दूर की बात दुर्योधन मैत्रेय महर्षि की बातों पर ध्यान भी नहीं दे रहा था। वह गर्व के साथ खडा रह कर अपनी जंघा को हाथ से बार-बार मार रहा था, और पैर की ऊँगली से भूमि पर रेखांकन कर रहा था। दुर्योधन के इस व्यवहार में क्षुब्ध होकर महर्षि मैत्रेय ने हाथ में जल ले कर दुर्योधन को शाप दिया कि जिस अंहकार के कारण तुम मेरी बातों की अवहेलना कर रहे हो वही अहंकार एक बड़े युद्ध का कारण बनेगा। जो जंघा दिखाकर मेरी बातों का अपमान करते हो, युद्धक्षेत्र में भीमसेन अपनी गदा से उसी जंघा पर प्रहार कर के तुम्हारा वध करेगा।

शाप के बाद धृतराष्ट्र ने मैत्रेयजी को शाप लौटाने के लिये विनती की पर मैत्रेय शान्ति प्रस्ताव पर ही गुरुत्व देकर उस स्थान से निकल पडे।

एवं तु ब्रुवतस्तस्य मैत्रेयस्य विशां पते।
ऊरुं गजकराकारं करेणाभिजघान सः॥
दुर्योधनः स्मितं कृत्वा चरणेनालिखन्महीम्।
न किञ्चिदुक्त्वा दुर्मेधास्तस्थौ किंचिदवाङ्मुखः॥
तमशुश्रूषमाणं तु विलिखन्तं वसुन्धराम्।
दृष्ट्वा दुर्योधनं राजन्मैत्रेयं कोप प्राविशत्॥
स कोपवशमापन्नो मैत्रेयो मुनिसत्तमः।
विधिना संप्रयुक्तश्च शापायास्य मनो दधे॥
ततः स वार्युपस्पृश्य कोपसंरक्तलोचनः।
मैत्रेयो धार्तराष्ट्रं तमशपद् दुष्टचेतसम्॥
यस्मात् त्वं माम् अनादृत्य नेमां वाचं चिकीर्षसि।
तस्मादस्याभिमानस्य सद्यः फलमवाप्नुहि॥
त्वदभिद्रोहसंयुक्तं युद्धमुत्पत्स्यते महत्।
तत्र भीमो गदापातैस्तवोरुं भेत्स्यते बली॥
इत्येवमुक्ते वचने धृतराष्ट्रो महीपतिः।
प्रसादयामास मुनिं नैतदेवं भवेदिति॥[2]

अर्जुन-उर्वशी शाप वृत्तान्त –

वनवास के समय हिमालय से निकल कर अर्जुन देवराज इन्द्र भवन पहुँचे, जो कि उनके पिता का घर था। इन्द्रदेव ने उनका आदर के साथ स्वागत किया। कभी देवराज इन्द्र ने अर्जुन की मानसिक स्थिति देखकर चित्रसेन नामक अपने एक गन्धर्व को उर्वशी के पाश भेजा। उर्वशी के लिये सन्देश था कि वह अर्जुन का मन बहलाये। चित्रसेन गन्धर्व से सन्देश मिलते ही उर्वशी आनन्दित होकर सज धज कर तैयार हुई और अर्जुन के पास पहुँची। पर अर्जुन उनका स्वागत एक माँ के समान किया। उन्हें प्रणाम कर उनका अभिवादन किया। उर्वशी के बार बार अनुरोध

महाभारत : वन 10.25-35, उपर्युक्त, पृ. 425.

करने पर भी अर्जुन को वे कुन्ती, माद्री जैसे दिखने लगी। उर्वशी अर्जुन के प्रत्याख्यान से दुःखित होकर उन्हें अपुमान् (नपुंसक) बनने का शाप दिया– "तुम्हारे पिताजी के कहने पर बहुत कामना मन में रखकर तुम्हारे पास आई थी। तुमने उस आकांक्षा को ही ठुकरा दिया। तुम औरतों के बीच एक नपुंसक बन कर समय बिताओगे।"

उर्वश्युवाच

तव पित्राभ्यनुज्ञातां स्वयं च गृहमागताम्।
यस्मान्मां नाभिनन्देथाः कामबाणवशंगताम्॥
तस्मात् त्वं नर्तनः पार्थ स्त्रीमध्ये मानवर्जितः।
अपुमानिति विख्यातः षण्ढवद् विचरिष्यसि॥
एवं दत्त्वार्जुने शापं स्फुरदोष्ठी श्वसन्त्यथ।
पुनः प्रत्यागता क्षिप्रमुर्वशी गृहमात्मनः॥
ततोऽर्जुनस्त्वरमाणश्चित्रसेनमरिन्दमः ।
सम्प्राप्य रजनीवृत्तं तदुर्वश्या यथातथम्॥
निवेदयामास तदा चित्रसेनाय पाण्डवः।
तत्र चैवं यथावृत्तं शापं चैव पुनः पुनः॥53॥[3]

बाद में यही शाप अर्जुन के लिये मददगार साबित हुआ।

राजा नल और कलि शाप वृत्तान्त –

भीम कन्या दमयन्ती और निषधराज नल के बीच प्रेमसम्पर्क एक हंस के माध्यम से हुआ था। दमयन्ती के स्वयंवर में बहुत सारे देवता उपस्थित हुए थे। कुछ तो नलराजा के वेष में भी थे। इसके बावजूद दमयन्ती ने नल को पहचान लिया। नल से उनका विवाह सम्पन्न हो गया। विवाह के बाद जब देवता सब स्वर्ग के लिये प्रस्थान कर रहे थे तब कलि और द्वापर दमयन्ती के स्वयंवर में योगदान करने के लिये आविर्भूत हए। देवताओं ने दमयन्ती का विवाह नल राजा के साथ होने की सूचना दी। तब कलि को कोप आ गया कि कैसे देवलोक के होते हुए दमयन्ती ने एक नर का वरण किया। नल ने क्रोधपूर्वक कहा –

देवानां मानुषं मध्ये यत् सा पतिमविन्दत।
ततस्तस्य भवेन्न्याय्यं विपुलं दण्डधारणम्॥

देवता और मनुष्य दोनों के रहते रहते कैसे दमयन्ती पति के रूप के एक मनुष्य को चुना। इसलिये दमयन्ती कुछ दण्ड के योग्य है। कलि की कुमति से भयभीत होकर देवताओं ने कहा कि उनकी अनुमति पाकर ही दमयन्ती ने नल को चुना। पर कलि कहाँ सुननवाले थे।

एवंगुणं नलं यो वै कामयेच्छपितुं कले।
कृच्छ्रे स नरके मज्जेदगाधे विपुले प्लवे॥
एवमुक्त्वा कलिं देवा द्वापरं च दिवं ययुः।
ततो गतेषु देवेषु कलिर्द्वापरमब्रवीत्॥
संहर्तुं नोत्सहे कोपं नले वत्स्यामि द्वापर।
भ्रंशयिष्यामि तं राज्यान्न भैम्या सह रंस्यते॥
त्वमप्यक्षान्समाविश्य कर्तुं साहाय्यमर्हसि॥[4]

कलि ने अपना प्रभाव दिखाया। यहां नल और दमयन्ती का कोई दोष नहीं था। उनके ऊपर देवताओं का आशीर्वाद भी था। फिर भी कलि के शाप ने नल राजा के साथ साथ दमयन्ती को भी बहुत कष्ट दिया।

महाभारत के इस नलोपाख्यान में और एक दो शाप वृत्तान्त भी वन पर्व में मिलता है। द्यूत क्रीडा में पराजित होकर नलराजा को सब कुछ त्यागना पडा, अपनी प्राणप्रिया पत्नी को भी। जब नल दमयन्ती का विच्छेद हुआ तो कभी दमयन्ती अतीव पीडा में रहकर रोती हुई विलखती हुई बोलती है -

उवाच भैमी निःश्वस्य रुदत्यथ पतिव्रता।
यस्याभिशापाद् दुःखार्तो दुःखं विन्दति नैषधः।
तस्य दुःखस्य नो दुःखाद् दुःखमप्यधिकं भवेत्॥

3. महाभारत : वनपर्व, उपर्युक्त, 46/49-53.
4. महाभारत : वनपर्व, 58/11-13, उपर्युक्त, पृ. 488.

अपापचेतसं पापो य एवं कृतवान् नलम्।
तस्माद् दुःखतरं प्राप्य जीवत्वसुखजीविकाम्॥[5]

दमयन्ती-निषध शाप वृत्तान्त –

दमयन्ती वन में नल राजा को ढूंढते हुए एक अजगर सांप का शिकार बन गयी। अजगर ने उन्हे निगला तो दमयन्ती जोर जोर से रोने लगी। एक व्याध वहां पर पहूंचा और अजगर को चीर कर उसके मुंह से दमयन्ती को निकाला। पर दमयन्ती की सुन्दरता से प्रभावित होकर कामवश होकर दमयन्ती से मिलना चाहा। पर दमयन्ती उसका अभिप्राय समझ कर उसको शाप दिया–

दमयन्ती तु दुःखार्ता पतिराज्यविनाकृता।
अतीतवाक्पथे काले शशापैनं रुषा किल॥
यथाहं नैषधादन्यं मनसापि न चिन्तये।
तथायं पततां क्षुद्रः परासुर्मृगजीवनः॥
उक्तमात्रे तु वचने तया स मृगजीवनः।
व्यसुः पपात मेदिन्यामग्निदग्ध इव द्रुमः॥[6]

दमयन्ती के मुँह से शाप निकलते ही वह व्याध उसी क्षण ही एक पेड़ की तरह जल कर भस्म गया।

नल-कर्कोटक नाग वृत्तान्त–

कलि से प्रपीडित नलराज को बहुत दुःख झेलना पडा। उन्हें द्यूतक्रीडा में फँसा दिया गया। इसी बहाने कलि को सुयोग मिला नल राजा के शरीर में प्रवेश करने के लिये।

एक दिन वैसे घूमते-घूमते उन्होंने देखा कि जंगल में आग लगी हुई थी और उस आग से आवाज आ रही थी कि ओ नल, मुझे बचा लो।

स नागः प्राञ्जलिर्भूत्वा वेपमानो नलं तदा।
उवाच विद्धि मां राजन्नागं कर्कोटकं नृप॥
मया प्रलब्धो ब्रह्मर्षिर्नागाः सुमहातपाः।
तेन मन्युपरीतेन शप्तोऽस्मि मनुजाधिप॥
तस्य शापान्न शक्नोमि पदाद्विचलितुं पदम्।
उपदेक्ष्यामि ते श्रेयस्त्रातुमर्हति मां भवान्॥
सखा च ते भविष्यामि मत्समो नास्ति पन्नगः।
लघुश्च ते भविष्यामि शीघ्रमादाय गच्छ माम्॥[7]

आवाज सुनकर आश्वासना देते हुए नल राजा वहाँ पहुँचे और कर्कोटक नाग का उद्धार किया। वह कर्कोटक भी एक शाप के कारण सांप का रूप लिया था। नल राजा को प्रत्युपकार के तौर पर कर्कोटक ने डँसा। फल स्वरूप उसके शरीर के अन्दर विष फैलने लगा। नल राजा का चेहरा विष से प्रभावित हो गया तो उन्हें कोई पहचान नहीं पाया और नल के शरीर में कलि जो वास कर रहे थे, उन्हें उस विष से बहुत पीडा भी होने लगी। बाद में इसी विष से प्रपीडित होकर कलि को नल का शरीर त्यागना पडा। नल राजा को अपना राज्य, अपना परिवार सब मिल गया।

अगस्त्य वातापि वृत्तान्त –

अगस्त्यमहर्षि के पितृपुरुष को दुष्ट वातापि और इल्वल ने इन्द्रतुल्य एक पुत्र माँगा। यह क्या सम्भव था? तभी दोनों भाइ कोप में छद्मरूप में रहकर उन्हें मांस भोजन करवाया। परिणाम स्वरूप वे एक कुएँ में उलटा लटकने लगे। जब अगस्त्य महर्षि ने उन्हें इसी हालत में देखा और प्रतीकार पूछा तो उन्होंने कहा– 'अगर तुम एक उत्तम पुत्र को जन्म दोगे, तो वह हमें इस पीड़ा से मुक्त कर सकता है।' अगस्त्य महर्षि विवाह के लिये प्रस्तुत तो हो गये पर अपने लिये एक सुयोग्य पत्नी उन्हें नहीं मिलती थी। बाद में विदर्भ राजकन्या लोपामुद्रा का हाथ अपने लिये विदर्भ राजा से माँगा। विदर्भ राज तैयार न हो सके अपनी सुकन्या का हाथ एक तपस्वी के हाथ में देने के लिये। वे अपनी

5. महाभारत : वनपर्व, 63.16-17, उपर्युक्त, पृ. 492
6. महाभारत : वनपर्व, 63.36-38, उपर्युक्त, पृ. 493
7. महाभारत, वनपर्व, 66.3-7, उपर्युक्त, पृ. 500.

चिन्ता लेकर अपनी पत्नी के पास पहुँचे तो वहाँ पर उपस्थित लोपामुद्रा पिताजी की चिन्ता देख कर प्रस्तुत हो गयी। बोली-

ततः स भार्यामभ्येत्य प्रोवाच पृथिवीपतिः।
महर्षिर्वीर्यवानेष क्रुद्धः शापाग्निना दहेत्॥
तं तथा दुःखितं दृष्ट्वा सभार्यं पृथिवीपतिम्।
लोपामुद्राभिगम्येदं काले वचनमब्रवीत्॥
न मत्कृते महीपाल पीडामभ्येतुमर्हसि।
प्रपच्छ मामगस्त्याय त्राह्यात्मानं मया पित॥ [8]

जमदग्नि शाप वृत्तान्त –

जमदग्नि की पत्नी रेणुका प्रसेनजित् की बेटी थी। विवाह के बाद जमदग्नि के साथ आश्रम में रहती थी। जमदग्नि और रेणुका के पांच पुत्र थे। एक दिन पांच पुत्र जंगल से फल संग्रह करने निकलेने के बाद रेणुका नहाने के लिये पुष्करिणी पर गयी। पुष्करिणी में राजा मार्तिकावतक, जिनका अपर नाम चित्ररथ भी था अपनी पत्नियोंके साथ जलक्रीडा करते हुए देखा। जलक्रीडा देखकर रेणुका मन ही मन में चितरथ की तरफ आकृष्ट हो गयी। इसी भवना से वह अपवित्र हो गयी। स्नान के बाद जब आश्रम लौटी तो उनके मनमें अपराध की भावना तो थी और उनके पति जमदग्नि को भी प्रतिभात हो गयी। उनके पुत्र जंगल से फल संग्रह करके जब घर आये तो उन्हें मां को मारने का आदेश दिया। पर

रुमण्वान्, सुषेण, वसु और विश्वावसु चारों पुत्र मातृहत्या के लिये प्रस्तुत न हो सके। तब गुस्से से जमदग्नि ने उन सबको शाप दिया। वे सब चेतना विहीन हो गए और पशु पक्षि के समान व्यवहार करने लगे।

तानानुपूर्व्याद् भगवान् वधे मातुरचोदयत्।
न च ते जातसंस्नेहाः किञ्चिदूचुर्विचेतसः॥
ततः शशाप तान् क्रोधात् ते शप्ताश्चेतनां जहुः।
मृगपक्षिसधर्माणः क्षिप्रमासञ्जडोपमाः॥ [9]

बाद में परशुराम आये, पिता के कहने पर माँ की हत्या की पर फिर पिताजी से वरदान पाकर माँ को पुनर्जीवित किया, भाइयों का समुद्धार भी किया।

कहोड अष्टावक्र शाप वृत्तान्त –

उद्दालक महर्षि के एक परम शिष्य थे कहोड। कहोड की गुरुभक्ति तथा ज्ञान से तृप्त हो कर उद्दालक महर्षि ने कहोड साथ अपनी बेटी सुजाता का विवाह करवाया। कुछ दिनों बाद सुजाता गर्भवती हुई। गर्भस्थ पुत्र गर्भ में होते हुए भी अग्निकल्प प्रज्वलित हो रहा था। एक दिन कहोड अपने छात्रों को वेद की शिक्षा देते समय गर्भस्थ शिशु कहने लगा– 'पिताजी! आप इस समय जो पढा रहे हैं या उच्चारण कर रहे हैं यह सम्यक् प्रतीत नहीं होता है।' शिष्यों के सामने ऐसी बात सुनकर कहोड को बहुत कोप आया और उन्होंने गर्भस्थ शिशु को अष्ट भाग में वक्र होने का शाप दिया। जन्म लेने के बाद अपनी शारीरिक ढंग के कारण अष्टावक्र नाम से प्रसिद्ध हुए।

तस्या गर्भः समभवदग्निकल्पः
सोऽधीयानं पितरं चाप्युवाच।
सर्वां रात्रिमध्यनं करोषि
नेदं पितः समयगिवोपवर्तते॥
उपालब्धः शिष्यमध्ये महर्षिः
स तं कोपादुदरस्थं शशाप।
यस्मात्कुक्षौ वर्तमानो ब्रवीषि
तस्माद्वक्रो भवितास्यष्टकृत्वः॥
स वै तथा वक्र एवाभ्यजायद्
अष्टावक्रः प्रथितो वै महर्षिः।[10]

8. महाभारत : वन 97. 4-6, उपर्युक्त, पृ.550.
9. महाभारत : वनपर्व, 116.11-12 उपर्युक्त, पृ. 572
10. महाभारत : वनपर्व, 132. 10-11, उपर्युक्त, पृ. 587.

अगस्त्य-कुबेर शाप वृत्तान्त –

वन में घूमते-घूमते श्रीकृष्ण के साथ पाँच पाण्डव और द्रौपदी हिमालय पर गये। वहां कुबेर का साम्राज्य देखकर बहु खुस हुए। पहले भीम ही गये थे। जब भीम गये तब बहुत सारे यक्ष, राक्षस उनका पथरोध किया। पर भीम के लिये उन यक्ष और राक्षसोंको मार गिराना कोई मुश्किल बात नहीं थी। बहुत राक्षस मारे गये, कुछ भयभीत होकर उस स्थान छोडकर चले भी गये। इसी समय कुबेर आ पहुँचे। सभी को थोडा डर था कि कुबेर राक्षसों की मृत्यु के लिये कोप करेंगे। पर कुबेर ने कहा – ओ भीमसेन! आपने मुझे शापमुक्त कर दिया। वह शाप ऐसा था– अगस्त्य महर्षि यमुना नदी के किनारे धूप में हाथ ऊपर किये सूरज की तरफ देखकर कठोर तपस्या कर रहे थे। तभी कुबेर के यक्ष गण से कोई उनके ऊपर थूक दिया। कोपवशात् अगस्त्य ने किसी मर्त्यलोक के मानव के द्वारा उन यक्ष और राक्षसों का वध होनेका शाप दिया था। कुबेर के ऊपर भी यह शाप लागू था कारण उन यक्ष और राक्षसों का अधिपति कुबेर ही थे। पर यक्ष राक्षस तो मारे गये पर कुबेर कैसे शापमुक्त होते। उनके लिये शाप यही था कि, जब किसी मर्त्य के आदमी से उनकी मुलाकात हो जायेगी, उसी दिन कुबेर भी शापमुक्त हो जायेंगे। भीम से मुलकात होने के बाद वे शापमुक्त हो गये।

नैष्ठिवदाकाशगतो महर्षेस्तस्य मूर्धनि।
स कोपान्मामुवाचेदं दिशः सर्वाः दहन्निव॥
मामवज्ञाय दुष्टात्मा यस्मादेष सखा तव।
धर्षणां कृतवानेतां पश्यतस्ते धनेश्वरः॥
तस्मात् सहैभिः सैन्यैस्ते वधं प्राप्स्यति मानुषात्।

× × ×

सैन्यानां तु तवैतेषां पुत्रपौत्रबलान्वितम्।
न शापं माप्यते घोरं तत् तवाज्ञां करिष्यति॥
एष शापो मया प्राप्तः प्राक् तस्मादृषिसत्तमात्।
स भीमेन महाराज भ्रात्रा तव विमोक्षितः॥ [11]

इन सब शाप वृत्तान्तों के अलावा वनपर्व में अगस्त्य महर्षि के द्वारा नहुष को शाप मिलना और युधिष्टिर के द्वारा नहुष शापमुक्त होना (वन अ. 179), मण्डूकराज और उनकी बेटी सुशोभना शाप (वन अ. 192. 35), कौशिक ऋषि का धर्मव्याध को शाप (वन अ. 215-16), कुबेर का रावण को शाप (वन अ 275), कबन्ध (जो कि गन्धर्व विध्वावसु था) को एक ब्राह्मण का शाप (वन अ. 279), कुन्ती को सूर्य देवका शाप की धमकी (वन अ. 306) आदि बहुत शाप प्रसंग महाभारत की कथावस्तु को कभी रुचिपूर्ण करते हैं तो कभी संवेदनशील प्रसंगों से हमें शिक्षा भी मिलती है, कभी कथावस्तु प्रभावशाली भी हो जाता है।

महाभारत के दूसरे पर्व भी शाप वृत्तान्तों से भरपूर है। शिखण्डि-कुबेर शाप (वन, अ. 179), परशुराम-कर्ण शाप वृत्तान्त (कर्ण, अ. 42. 12-13), दक्ष-चन्द्रमा शाप वृत्तान्त (शल्य, अ. 35), त्रित मुनि का उदपान तीर्थ क्षेत्र पर अपने दोनों भाईयों (एकत और द्वित) को ऋक्ष और वानर बनने का शाप (शल्य अ. 36), श्रीकृष्ण-अश्वत्थामा शाप (सौप्तिक अ 16. 9-16), गान्धारी-श्रीकृष्ण शाप (पतिशुश्रूषया यन्मे तपः किञ्चिदुपार्जितम्। तेन त्वां दुरवापेन शप्स्ये चक्रगदाधर ------ स्त्रीपर्व अ.25.42-46), **युधिष्ठिरस्य स्त्रीणां कृते शापः** (अतो मनसि यद् गुह्यं स्त्रीणां तन्न भविष्यति, स्त्री पर्व अ.27.29) इत्यादि।

इन शाप-वृत्तान्तों से यही शिक्षा मिलती है कि, अगर कोई नीति से दूर जाता है तो उसको शाप मिलता है। जिसका शाप देने में सामर्थ्य है वे ही शाप से मुक्त करते हैं। वे भी प्रसन्नचित्त होकर वरदान देते हैं। एक को शाप मिलता है, तो दूसरे उससे भयभीत होते हैं और दुष्कर्म से दूर होते हैं।

***

महाभारत : वनपर्व, 161. 59-63, **उपर्युक्त,** पृ. 630.

महाभारत में शाप प्रकरण

विद्यावाचस्पति महेश प्रसाद पाठक
"गार्ग्यपुरम्" श्रीसाईं मन्दिर के पास, बरगण्डा, पो–जिला-गिरिडीह, (815301), झारखण्ड, Email: pathakmahesh098@gmail.com

शाप का विवेचन करते हुए हमारे मन में अकसर यह भावना बन जाती है कि इस शाप में शाप देने वाले की गलती है और हम हमेशा मान लेते हैं कि जिसे शाप मिला है वह दया का पात्र था। उसकी असमर्थता हमें झलकने लगती है और मानस की पंक्ति "सापत ताड़त परुष कहन्ता" की व्याख्या के समय शाप की मूल अवधारणा को भूल जाते हैं। महाभारत के शाप प्रसंगों का विवेचन इस सन्दर्भ में महत्त्वपूर्ण हो जाता है। यहाँ हम देखते हैं कि शापग्रस्त व्यक्ति किसी प्रकार से असहाय नहीं है, लेकिन उसने गलती की है तो सरमा कुतिया भी उसे शाप दे देती है, क्योंकि उसने एक माता के पुत्र को बैठने नहीं दिया, उसे मार भगाया। शापग्रस्त व्यक्ति यहाँ और कोई नहीं राजा जनमेजय हैं। कर्ण -सा वीर योद्धा भी जब अपना परिचय छुपाकर गुरु के सामने अपराध कर बैठता है तो शाप का भागी होता है। महाभारत के शाप-प्रसंग स्पष्ट करते हैं कि अपराधी को वाग्दण्ड के द्वारा शाप मिलना ही चाहिए।

'शाप' का अर्थ ही होता है अभिशाप, धिक्कारना, फटकारना। शाप को सामान्यतः अहितकामना से भी जोड़कर देखा जाता है। इसलिए 'शाप' को क्रोधपूर्वक किसी के लिये कहे गये अनिष्ट का उद्घोष कहा जाता है। किसी न किसी भाव में इसे दुर्वचन भी समझा जाता है। किसी महान् नैतिक अपराध के होने पर विशेषकर ऋषि, मुनि, तपस्वी, साधक, व्रती आदि के द्वारा कहे गये अनिष्ट-कथन ही शाप कहलाते हैं। शाप किसी की अनियन्त्रित शक्ति को संयमित करने का एक साधन भी कहें तो अतिशयोक्ति नहीं। शाप को पंजाबी में 'सराप', राजस्थानी में– 'सरापणों', सिन्धी में– 'सिरापु', मलयालम में 'सापम', तेलगू में 'सापमु' के अतिरिक्त 'श्राप', 'साप', 'सिराप' आदि भी कहे जाते हैं।

कभी-कभी शाप के वचन किसी के लिये वरदान भी बन जाते हैं, जैसे मुनि वाजश्रवा के द्वारा अपने पुत्र को दिये गये शाप के कारण नचिकेता को मृत्युदेव के द्वारा दिये गये अमृतोपमज्ञान का लाभ मिला। यह कथा कठोपनिषद् में विस्तार से वर्णित है। इसप्रकार शाप के बीज में भावी जीवन को उत्कृष्ट बनाने के अंकुर भी छिपे रहते हैं। बात-बात में क्रोधित होने वाले ऋषि दुर्वासा का शाप जगत्प्रसिद्ध है। मेघदूत[1] तथा रघुवंशम्[2] जैसे अनेक ग्रन्थों में शाप के सन्दर्भ देखे जा सकते हैं।

1 कालिदास : उत्तरमेघ.29
2 रघुवंश 1.78,5.56

सनातन साहित्य में 'पञ्चम वेद' कहे जाने वाले बृहत्कायग्रन्थ महाभारत में शाप (के अतिरिक्त वरदान के भी) के अनेक ऐसे प्रकरणों का समावेश है, जिनको इस आलेख में समेटना अत्यन्त कठिन है। शाप के कुछ संक्षिप्त दृष्टान्त निम्न हैं-

(1) सरमा का शाप-

परीक्षित् के पुत्र जनमेजय अपने भाइयों के साथ दीर्घकाल तक चलने वाले यज्ञ का अनुष्ठान कर रहे थे। तभी उस यज्ञ में देवताओं की कुतिया सरमा का पुत्र सारमेय भी वहीं आसपास बैठा हुआ था। इसे बैठा देखकर जनमेजय के भाइयों ने सारमेय को मारा। जब यह अपनी माँ के पास आकर सभी बातों का बतलाया, तब सरमा ने जनमेजय के पास जाकर पूछा— मेरे पुत्र ने न तो कोई अपराध किया हैं, न ही आपके यज्ञ हविष्य को चाटा है; तब आपने इसे क्यों मारा? जनमेजय द्वारा कोई उत्तर नहीं दिये जाने पर सरमा ने शाप दिया कि तुम्हारे ऊपर अकस्मात् ऐसा भय उपस्थित होगा, जिसकी पहले कोई सम्भावना नहीं थी। (आदिपर्व : 3.1 -10)। इस प्रकरण से यह सिद्ध होता है कि श्रेष्ठ कुतिया भी शाप देने में सक्षम थी।

(2) अग्निदेव को शाप-

पुलोमा नामक राक्षस महर्षि भृगु की पत्नी को हर लेने की इच्छा से आया था, लेकिन भृगुपुत्र च्यवन के तेज के डर से राक्षस जलकर भस्म हो गया।भृगुपत्नी का पता अग्निदेव ने ही पुलोमा को बतलाया था, इसलिये महर्षि ने अग्निदेव को शाप दिया, तुम सर्वभक्षी हो जाओ—

शशापाग्निमतिक्रुद्धः सर्वभक्षी भविष्यसि।[3]

(3) कद्रू द्वारा अपने पुत्रों को शाप-

समुद्रमन्थन से उच्चैःश्रवा नामक एक अश्व उत्पन्न हुआ। प्रजापतिदक्ष की दो कन्याएँ कद्रू एवं विनता जो ऋषिकश्यप की पत्नी थी-इनके बीच एक बाजी लगी कि यह अश्व किस रंग का है? विनता ने कहा— यह श्वेतवर्ण का है। लेकिन कद्रू ने कहा—अश्व का वर्ण श्वेत अवश्य हैं किन्तु इसकी पूँछ काली है। इस शर्त में बाजी लगी कि जिसकी बात ठीक निकलेगी, दूसरे को उसकी दासी बनकर रहना पड़ेगा। कद्रू कुटिलता का सहारा लेते हुए अपने सर्पपुत्रों से कहा कि तुमसभी घोड़े के पूँछ से चिपककर रहना, जिससे अश्व की पूँछ देखने में काली लगे, इससे मैं बाजी जीत जाऊँगी और मैं दासी बनने से बच जाऊँगी। लेकिन सर्पों ने अपनी माता का कहना नहीं माना। फलतः कद्रू ने अपने समस्त पुत्रों को शाप दे दिया कि-जाओ, जनमेजय के सर्पयज्ञ की अग्नि में तुमसब भस्म हो जाओगे।

सर्पसत्रे वर्तमानः पावको वः प्रधक्ष्यति।
जनमेजयस्य राजर्षेः पाण्डवेयस्य धीमतः॥[4]

(4) परीक्षित् को शाप-

परीक्षित् मृगया करते हुए शमीकमुनि के आश्रम में जाकर यह पूछने पर कि मुनिवर आपने इधर से जाते किसी मृग को देखा है। तपश्चर्या में लीन मुनिवर के मौन रहने पर परीक्षित् को क्रोध आ गया और वहीं पर पड़े एक मृत सर्प को उठाकर मुनि के गले में ड़ाल दिया। इस घटनाक्रम का पता जब शमीकपुत्र श्रृंगी को लगा तब प्रचण्ड क्रोधावेश में आकर कहा-जिसने मेरे निरपराध पिता पर मृत सर्प को ड़ाल दिया है, उस पापी की आज से सात रात्रि के बाद मेरे वाक्शक्ति से प्रेरित होकर पन्नगोत्तम तक्षक के काटने से मृत्यु हो जायेगी।[5] इसी शाप के कारण परीक्षित् की मृत्यु हुई थी।

(5) देवयानी और कच का परस्पर शाप-

बृहस्पति के पुत्र कच जब गुरु शुक्राचार्य से संजीवनी-विद्या को प्राप्त कर लिया था, तभी विद्या को ग्रहण करने के काल में ही गुरुपुत्री देवयानी ने कच से अपना प्रणय-निवेदन करने पर तथा गुरुपुत्री की मर्यादा को रखते हुए कच ने उसके निवेदन को अस्वीकार कर

3 महाभारत : आदिपर्व, 6.14 4 महाभारत : आदिपर्व, 20.8 5 महाभारत : आदि पर्व, 50.9-11

दिया। जिससे देवयानी कुपित होकर कच को यह शाप दे बैठी कि तुम्हारी संजीवनीविद्या सिद्ध नहीं होगी। इसपर कच ने भी देवयानी को शाप दे डाला-कोई भी ऋषिपुत्र तुम्हारा पाणिग्रहण नहीं करेगा।[6]

(6) शुक्राचार्य द्वारा ययाति को बूढ़े होने का शाप-

एक लम्बी कथा का सार यही है कि एकबार राजा ययाति की पत्नी देवयानी, शर्मिष्ठा के रूप में ययाति की दूसरी पत्नी (असुरराज वृषपर्वा की पुत्री एवं देवयानी की दासी शर्मिष्ठा) एवं राजा ययाति के बीच आपसी कलह होने पर शुक्राचार्य ने अपने जमाता ययाति को बूढ़े होने शाप दे दिया था, लेकिन यह व्यवस्था भी दी कि यदि तुम चाहो तो किसी अन्य का यौवन लेकर उसे अपना बुढ़ापा दे सकते हो।[7]

(7) महाभिष को ब्रह्मदेव का शाप-

इक्ष्वाकुवंश में उत्पन्न महाभिष नामक एक प्रसिद्ध राजा हुए। एकबार ये ब्रह्माजी की सेवा में समीप ही बैठे थे कि सरिताओं में श्रेष्ठ गंगा वहाँ पधारी ही थी कि वायु के झोंके ने उनके वस्त्र को खिसका दिया। इस अवस्था में सभी देवता अपना मुँह झुकाए बैठे थे, किन्तु महाभिष निःशंक होकर गंगा को देखते रहे। इसी कारण ब्रह्माजी ने महाभिष को यह शाप दे डाला कि अगले जन्म में तुम पुनः मनुष्य होओगे तथा गंगा मनुष्य लोक में तुम्हारे विपरित आचरण करेगी। कालान्तर में महाभिष ही प्रतीप के पुत्र होकर शान्तनु कहलाये, जिन्होंने गंगा से विवाह कर भीष्म जैसे पुत्र को जन्म दिया।[8]

(8) माण्डव्य का धर्मराज को शाप-

तपस्वी एवं मौनव्रती माण्डव्य के आश्रम में कुछ चोर अपने लुटे हुए सामान को रखकर भाग गये थे। राजा के सैनिकों को मुनि पर ही संदेह होने लगा और ये इन्हें राजा के पास ले आये। राजा ने इन्हें पहचाना नहीं और शूली पर चढ़ाने का दण्ड दे डाला। कुछ समय के बाद पता चला कि ये मुनि माण्डव्य हैं, अतः क्षमा माँगकर इन्हें शूली से मुक्त कर दिया। परमात्मतत्त्व के ज्ञाता माण्डव्य ने धर्मराज को उलाहना देते हुए कहा मैंने जो बालअवस्था में पाप किये थे तथा वह अनजान में किये थे,लेकिन वह क्षमायोग्य होते हुए भी तुमने मुझे मृत्युतुल्य शूली का दण्ड दिया। ब्राह्मण का वध सम्पूर्ण प्राणियों के वध से भी अधिक भयंकर है। अतः तुम मनुष्य होकर शुद्रयोनि में जन्म लो,यही धर्मराज मुनि के शाप के कारण विदूररूप शुद्र योनि में उत्पन्न हुए।

धर्मो विदुरपेण शूद्रयोनावजायत।[9]

(9) मृगरूपधारी मुनि द्वारा पाण्डु को शाप-

एक समय राजा पाण्डु मृग एवं सर्पों से सेवित वन में देखा-एक मृग जो मृगी के साथ समागम कर रहा था। पाण्डु ने दोनों को बाणों से बींध डाला। ये और कोई नहीं बल्कि ऋषिपुत्र एवं इनकी पत्नी थी। मृत्यु को प्राप्त होते-होते राजा पाण्डु पर कुपित होकर इन्होंने शाप दे दिया कि-जब तुम काम से मोहित होकर अपनी पत्नी के साथ समागम करने लगोगे, तभी मेरी तरह तुम भी इसी अवस्था में यमलोक प्रस्थान करोगे।[10]

(10) कल्माषपाद को शक्तिमुनि का शाप-

इक्ष्वाकुवंश के राजा कल्माषपाद वन से हिंस्र पशुओं को मारकर वापस लौट रहे थे, तभी एक ऐसे संकरे रास्ते में आ गये जहाँ से मात्र एक ही व्यक्ति आ -जा सकता था। तभी सामने से वसिष्ठपुत्र शक्ति भी उसी रास्ते आ गये। दोनों के बीच उत्तर-प्रत्युत्तर में एक कहता— तुम हटो, तो दूसरा कहता— तुम हटो। कल्माषपाद को क्रोध आ गया और शक्तिमुनि पर कोड़े बरसाने लगा। शक्तिमुनि को भी क्रोध आ गया और शाप देते हुए कहा— नीच कल्माषपाद! तू एक

6 महाभारत : आदिपर्व, 77
7 महाभारत : आदिपर्व, 83
8 महाभारत : आदिपर्व, 96.4-7
9 महाभारत : आदिप०-107.19
10 महाभारत : आदिप०, अ०-117

तपस्वी ब्राह्मण को कोड़े से राक्षस की भाँति मार रहा है, जा तु आज से नरभक्षी राक्षस होकर विचरण किया करेगा।[11]

(11) उर्वशी द्वारा अर्जुन को शाप-

एक प्रकरण में पाण्डुपुत्र अर्जुन अस्त्र-शस्त्र विद्या ग्रहण करने इन्द्र के पास गये थे। वहाँ अर्जुन ने उपसंहारसहित महान् अस्त्रों की शिक्षा एवं गन्धर्वराज चित्रसेन से संगीत की शिक्षा ग्रहण कर वापस आने लगे, तब अप्सराओं में श्रेष्ठ उर्वशी अपना प्रणयनिवेदन लेकर अर्जुन के पास आती है, तभी अर्जुन ने उर्वशी को गुरुजनोचित सत्कार कर चरणों में प्रणाम निवेदन किया। यह देखकर उर्वशी के होश-हवास उड़ गये। उर्वशी द्वारा पूछे जाने पर अर्जुन कहते हैं-आप पूरुवंश की जननी है, आप कुन्ति, माद्री एवं शची के समान हैं, अतः आप मुझपर पुत्रवत् स्नेह बनाये रखकर मेरी रक्षा करें। उर्वशी कहती है— अर्जुन! मैं तुमपर मोहित होकर कामबाण से घायल हूँ, फिरभी तु मेरा आदर नहीं करते! अतः तुम्हें स्त्रियों के बीच सम्मानरहित होकर नर्तक बनकर रहना होगा और तुम नपुंसक कहलाओगे। तुम्हारा आचार-व्यवहार भी इसी के अनुरूप होगा।[12] विदित है अर्जुन को अपने अज्ञातवास के समय विराटनगर में बृहन्नला के रूप में रहना पड़ा था।

(12) गान्धारी के द्वारा श्रीकृष्ण को शाप-

युद्ध में मारे गये योद्धाओं को देखने के लिये वेदव्यासजी के अनुग्रह से कुछ काल के लिये गान्धारी दिव्यदृष्टि से सम्पन्न हुई थी। रणक्षेत्र में मारे गये योद्धाओं को देख शोक से मुर्छित होकर गिर पड़ी एवं गान्धारी के समस्त अंग क्रोधावेश में व्याकुल हुए जा रहे थे। गान्धारी युद्ध का समस्त दोष श्रीकृष्ण को देते हुए कह रही थी-तुम शक्तिशाली थे, प्रतिष्ठित थे, दोनों पक्षों से अपनी बात मनवा सकते थे; लेकिन तुमने जानबुझकर कुरुकुल का नाश होने दिया। तुमने मारकाट मचाते हुए कुटुम्बी कौरवों एवं पाण्डवों की उपेक्षा की। मैंने अपने पतिव्रत जैसे दुर्लभ तपोबल से जो कुछ भी शक्तियाँ प्राप्त की है, उसके प्रभाव से मैं तुम्हें शाप देती हूँ— मधुसुदन! आज से छत्तीसवाँ वर्ष उपस्थित होने पर तुम्हारे सभी कुटुम्बी, मन्त्री, पुत्रादि आपस में ही लड़कर मर जायेंगे। तुम अपरिचित एवं सबकी आँखों से ओझल होकर अनाथ के समान वन में विचरते हुए किसी निन्दित उपाय से मृत्यु को प्राप्त होगे।[13]

(13) नचिकेता को शाप-

ऋषि उद्दालक के पुत्र नचिकेता को इनके पिता ने पुत्र के कार्यकलाप से रुष्ट होकर शाप देते हुए यमराज के पास जाने को कह दिया। इतना कहते ही नचिकेत निष्प्राण होकर गिर पड़ा। महर्षि भी शोक में डूब गये। कुछ देर पश्चात् नचिकेत का शरीर हिलाने-डुलने लगा और ऐसा उठा जैसे अभी सो कर उठा हो। नचिकेता के शरीर से सुगन्ध निकल रही थी। पूछने पर नचिकेता कहने लगा कि मैंने यमपुरी में जाकर महाराज यम से भेंट की और यमपुरी की भव्यता के दर्शन ही नहीं किये बल्कि उनसे दान-धर्म की शिक्षा भी ग्रहण की।[14] सम्पूर्ण कठोपनिषद् की कथा नचिकेता एवं यम के बीच हुए संवाद पर आधारित है

(14) नहुष को महर्षि भृगु का शाप-

प्रतापी राजा नहुष अपने पुण्यकर्म के प्रभाव से इन्द्र का पद प्राप्त कर लिया था। नहुष ने ब्रह्मदेव से यह वरदान माँगा था कि 'जो मेरी दृष्टिपथ में आ जाय वह मेरे अधीन हो जाय।'(अनु०- 99.17)। 'मैं इन्द्र हूँ' इसी अहंकार से वशीभूत होकर नहुष धर्म और कर्म से भ्रष्ट हो चुके थे। दुर्बुद्धि नहुष बारी-बारी से श्रेष्ठ ऋषियों से अपनी पालकी अथवा रथ में जोतने भी लगे। यह कथन है— 'सौभाग्यनाश के समय व्यक्ति अनुचित वर्ताव भी करने लगता है।' बल और पद में उन्मत्त नहुष ने महर्षि अगस्त्य को अपना रथ ढ़ोने के लिये

11 महाभारत :आदिप०175.1-14
12 महाभारत : वनप०, अ०-46
13 महाभारत : स्त्री पर्व-25.37-45
14 महाभारत : अनु०पर्व,अ०-71

बुलाया। महर्षि भृगु ने अगस्त्य से कहा आज मैं आपकी जटाओं के मध्य सूक्ष्मरूप में बैठा रहूँगा और आपसे नहुष तो अपना रथ खींचने तो कहेगा ही और यही हुआ भी। नहुष महर्षि अगस्त्य को चाबुक मारते हुए हाँकना शुरू किया ही था कि इन्द्रनहुष ने महर्षि के सिर बायें पर से प्रहार कर बैठा। इनके मस्तक पर चोट लगते ही जटाओं के मध्य बैठे भृगु ने कुपित होकर शाप दे डाला-ओ दुर्मते ! तुमने महामुनि के मस्तक पर लात मारी, इसलिये तु शीघ्र ही सर्प होकर पृथ्वी पर चला जा। इसप्रकार नहुष का स्वर्ग से पतन हुआ और शतक्रतुइन्द्र पुनः स्वर्ग में इन्द्रपद पर आसीन हुए।[15]

(15) कर्ण को शाप-

जब कर्ण भगवान् परशुराम से अस्त्र-शस्त्र की विद्या सीखने आया था, तब गुरुसेवा करते-करते परशुराम को निद्रा आ गयी। तभी एक कीड़ा (वस्तुतः यह सतयुगकाल का दंश नामक एक महाअसुर था जो भृगु के शाप के कारण शापित कीड़ा बन गया था तथा यह अलर्क के नाम से जाना जाता था) कर्ण की जाँघ को कुरेदकर घाव बना डाला था और उससे रक्त की धारा बहने लगी थी। चूँकि गुरुदेव की निद्रा भग्न न हो इसलिए कर्ण अपने असह्य संताप को झेल रहा था। जब रक्त की धारा बहते-बहते गुरु के पास आ गयी तो परशुराम की निद्रा भग्न हो गयी और रोष में भरकर कर्ण से पूछा— तुम्हारा परिचय क्या है, तुम धैर्य में तो क्षत्रिय सदृश हो। कर्ण कहता है मैं सूतपुत्र हूँ। इसी मिथ्याचार के कारण परशुरामजी ने कर्ण को शाप दिया कि मेरी द्वारा दी गयी दिव्यास्त्र की शिक्षा को यथासमय भूल जाओगे।[16] एक अन्य प्रकरण में कर्ण द्वारा एक ब्राह्मण के होमधेनु का मारे जाने पर ब्राह्मण ने कर्ण को शाप दिया था कि— 'तुम जिससे सदा ईर्ष्या रखते हो और परास्त करने की चेष्टा रखते हो, उसके साथ युद्ध करते हुए तेरे रथ के पहिये को धरती निगल जायेगी। इस समय तुम अचेत हो जाओगे और तभी शत्रु के द्वारा तुम्हारे मस्तक का उच्छेदन होगा।'[17]

शाप से पुनर्जन्म

यह भी देखा गया है कि अमुक व्यक्ति ने शापवश अन्य योनियों में जन्म लिया। पुनर्जन्म के सिद्धान्त एवं संकेत हमारे श्रुतियों में भी मिलते हैं-

(क) पुनर्जन्म—

गीता में— **मामुपेत्य तु कौन्तेय पुनर्जन्म न विद्यते।**[18]

(ख) गतजन्म-

गीता में— **अपरं भवतो जन्म परं जन्म विवस्वतः।**[19]

(ग) पुनर्भव-

प्रश्नोपनिषद् में—

तेजो ह वा उदानस्तस्मादुशान्ततेजाः पुनर्भवमिन्द्रियैर्मनसि सम्पद्यमानै।[20]

(घ) पुनर्भव—

कालाग्निरुद्रोपनिषद् में—

तत्समाचरेन्मुक्षुर्न पुनर्भवाय। (4)।

(ङ) पुनरावृति—

मुक्तिकोपनिषद् में -

पुनरावृतिरहितां मुक्तिं प्राप्नोति मानवः।[21]

(च) परलोक-

कठोपनिषद् में—

15 महाभारत : अनुशासन पर्व, 100.23-24
16 महाभारत : शान्तिपर्व, 1.1-30
17 महाभारत : शान्तिपर्व-2.24-25
18 श्रीमद्भगवद्-गीता : 8.16
19 श्रीमद्-भगवद्-गीता 4.4
20 प्रश्नोपनिषद् 3.9
21 मुक्तिकोपनिषद् 1.20

अयं लोको नास्ति पर इति मानी पुनः पुनर्वशमापद्यते मे।[22]

(छ) अन्य लोकों में शरीर धारण—

कठोपनिषद्—

ततः सर्गेषु लोकेषु शरीरत्वाय कल्पते।[23]

कितने ही जीवात्मा अन्य योनियों को प्राप्त करते हैं — **योनिमन्ये प्रपद्यन्ते शरीरत्वाय देहिनः।**[24]

इस प्रकार पुनर्जन्म के अर्थ गतजन्म, पुनर्भव, परलोक, अन्यलोक आदि जैसे नामों से व्यक्त हैं। निम्नलिखित कुछ उदाहरण हैं जिनमें यह वर्णन मिलता है कि शापवश अन्य योनियों में जन्म लिया एवं भगवान् की कृपा एवं शापावधि के क्षीण होने पर उनकी मुक्ति हुई।

(1) यमलार्जुन-

ये धनाध्यक्ष कुबेर के पुत्र नलकूबर और मणिग्रीव थे। ये वारुणी मदिरा का पान कर मतवाले हो गये थे। ये इतने मतवाले हो गये थे कि इन्हें इस बात का पता ही नहीं चला कि ये नंग-धडंग हैं। संयोगवश नारदजी उधर से ही निकल रहे थे, दोनों के द्वारा जडवत् व्यवहार किये जाने के कारण तथा इस अवस्था में देखकर नारदजी ने इन्हें वृक्षयोनि में जन्म लेने का शाप दिया और कहा-सौ वर्षों के बाद इन दोनों को श्रीकृष्ण का अनुग्रह प्राप्त होगा और ये अपने लोक चले जायेंगे। ये दोनों ही वृक्षरूप उत्पन्न होकर यमलार्जुन के नाम से प्रसिद्ध हुए। जब बालकृष्ण के कमर में बँधी हुई ऊखल घसीटते हुए दोनों वृक्षों के बीच से निकल रहे थे, तब ऊखल टेढ़ा होकर वृक्षों के बीच अटक गया, तनिक जोर लगाने से दोनों वृक्ष जड़ सहित उखड़ गये थे। तभी वृक्ष से अग्नि के समान दो तेजस्वी पुरुष नलकूबर और मणिग्रीव निकलकर श्रीकृष्ण को प्रणाम कर उत्तरदिशा की और चले गये।[25]

(2) गज और ग्राह-

गजेन्द्र पूर्वजन्म में द्रविड़देश में पाण्ड्यवंशी राजा था, इसका नाम था इन्द्रद्युम्न। महर्षि अगस्त्य के शाप के कारण इसे हाथी की योनि प्राप्त हुई थी। ग्राह पूर्वजन्म में 'हूहू' नामक एक गन्धर्व था। देवलमुनि के शाप के कारण इसे ग्राह की योनि मिली।इसी गजराज को जब ग्राह ने पकड़ रखा था, तब यह अपने सूँड़ में कमल का पुष्प लेकर और उसे उठाकर भगवान् श्रीहरि की प्रार्थना करने लगा। श्रीहरि तत्काल उपस्थित होकर गजेन्द्रोद्धार किया।[26]

(3) कालियनाग एवं काकभुशुण्डि-

स्वायम्भुव मन्वन्तर में भृगुवंशीय वेदशिरा एवं अश्वशिरा नामक मुनि हुए। वेदशिरा विन्ध्याचल में तपस्या कर रहे थे,तभी अश्वशिरा भी इनके बगल में तपस्या करने बैठ गये। वेदशिरा ने कहा कि आप अन्यत्र तपस्या करें, नहीं तो मेरा एकान्त भंग हो जायेगा। इसी बात पर दोनों में कहासुनी हो गयी और एक दूसरे को शाप दे बैठे। वेदशिरा कालियनाग के रूप में जन्म लिये तथा अश्वशिरा काकभुशुण्डि के रूप में जन्म लिये। ये वही नीलपर्वत पर रहने वाले काकभुशुण्डि हैं, जिन्होंने महात्मा गरुड़ को रामायण की कथा सुनाई थी।[27]

इस प्रकार हमारे ग्रन्थों में शाप और उनकी मुक्ति के अनेकानेक उदाहरण भरे पड़े हैं। शाप के माध्यम से हमें शिक्षित करने का भी प्रयास किया गया है कि जीवन में सदाचार एवं अपने कर्तव्यकर्मों को स्मरण रखते हुए तदनुरूप पालन करना चाहिये।

***

22 कठोपनिषद् 1.2.6
23 कठोपनिषद् 2.3.4
24 कठोपनिषद्-2.2.7
25 श्रीमद्भागवत : 10.अ० 10
26 श्रीमद्भागवत : 8.4.2-10
27 गर्ग संहिता : वृन्दावन खण्ड, अध्याय 13

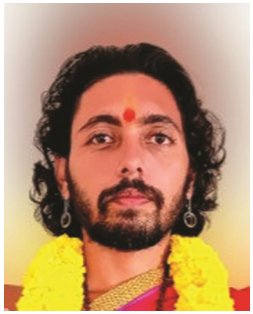

शाप के सिद्धान्त

निग्रहाचार्य श्रीभागवतानंद गुरु
धार्मिक उपदेशक, शोध-लेखक, सनातन धर्म के शास्त्रीय स्वरूप के लिए शास्त्रचिन्तक, अध्येता। सम्प्रति: टेंडर, रातु, राँची, झारखंड।

बुरे कार्य करने वाले को शाप तथा अच्छे कार्य करने वालों को वरदान मिलना यह भारतीय पुराकथाओं के लिए सामान्य प्रसंग हैं। बल्कि शापकथाओं के माध्यम से अनेक बार हमें यह भी शिक्षा दी गयी है कि ऐसे कार्य हमें नहीं रकना चाहिए। एक ही व्यक्ति को अच्छे कार्य के लिए वरदान भी मिला है और बुरा कार्य करने पर शाप भी। रावण ने तपस्या के द्वारा बहुत सारे वरदानों का लाभ उठाया पर जब उसी ने रमाभा तथा पुजिकस्थला का बलात्कार किया तो भयंकर शाप भी मिला। इस प्रकार, शाप देने वाले किसी न किसी रूप में धर्म, समाज, परम्परा आदि के संरक्षक होते हैं। उन्नकी दृढ़ता अपने धर्म के प्रति होती है। अतः इस दृष्टि से शापप्रदायक देव, ऋषि अथवा ब्राह्मण की व्याख्या की जा सकती है। अनेक शापों में तो हम इस सृष्टि से निरूह से निरीह प्राणियों के द्वारा शाप देने की बात देखते हैं। कुतिया जब जनमेजय को शाप देने का सामर्थ्य रखती है तो हमें निश्चित रूप से मानना होगा कि शापप्रसंग दुराचार से निवृत्त करने हेतु हैं और वरदान प्रसंग सदाचार की ओर हमें प्रेरित करते हैं।

शाप और वरदान सनातन संस्कृति का महत्त्वपूर्ण भाग रहे हैं। क्रोध एवं आह्लाद की चरमाभिव्यक्ति शाप तथा वरदान के रूप में होती है। एक दूसरे के सर्वथा विपरीत होने के बाद भी कई बार एक कारण और दूसरा परिणाम बन जाता है।

यद्यपि शास्त्रीय मर्यादा के अनुसार किसी भी व्यक्ति को शाप या वरदान देने का अधिकार सभी लोगों को नहीं होता है, फिर भी सद्भाव अथवा दुर्भाव के रूप में जनसामान्य की चित्तस्थिति हमारे प्रारब्ध को प्रभावित करती है। यथा, हमारे द्वारा किये गये कर्म के परिणामस्वरूप देवदत्ताद्यमुकामुक जनों के हृदय में उद्भूत होने वाला हर्ष या क्षोभ हमें उनकी सहजेच्छा के रूप में तत्काल ही सुख या दुःख का भागी तो नहीं बनाता किन्तु स्थायी रूप से तदनुसार हमारे प्रारब्ध का निर्माण अवश्य करता है। हाँ, विशेष तपोयोगसिद्धि-सम्पन्न ऋषि, देवता अथवा सज्जनों की वाणी के माध्यम से शाप अथवा वरदान कई बार प्रारब्धाति-क्रमण करके कर्मफल को प्रत्यक्ष कर देते हैं, यह भी शास्त्रोक्त प्रकरणों एवं सामाजिक अनुभवों से समझना चाहिए।

मनुष्ययोनि को कर्मयोनि तथा मनुष्यातिरिक्त योनियों को भोगयोनि कहा जाता है। मनुष्ययोनि में पूर्वकृत कर्म के फल का उपभोग करता हुआ जीव कर्तृत्वाभिमानवशात् क्रियमाण कर्मों के आधार पर नवप्रारब्ध का सृजन भी करता जाता है। यह वैचित्र्य मनुष्य की विवेकबुद्धि के कारण है। शेष योनियों की

अपेक्षा इसमें आहार, निद्रा, सुरक्षा एवं प्रजनन की सामान्य भोगभावना के अतिरिक्त आत्मोत्थान, लोकोपकार, ब्रह्मात्मैक्य-बोधसम्बन्धित योग-भावना भी होती है। यद्यपि कुछ विशिष्ट स्थितियों में अनिच्छावश ही महनीय तत्त्वों के प्रभाव के कारण अन्य योनियों में गये जीव का भी आत्मोद्धार देखा गया है, यथा बृहद्धर्मपुराण के अनुसार गङ्गाजल के प्रभाव से कुत्ते का मुक्त हो जाना अथवा पद्मपुराण के अनुसार श्रीमद्भगवद्गीता के प्रभाव से घोड़े की योनि में गये जीव का उद्धार हो जाना किन्तु सामान्यतः प्रारब्धनिर्माण की ऐच्छिक क्षमता मनुष्ययोनि में ही है।

मनुष्ययोनि के ही समान किंवा दीर्घकालिक आयु, बल, ऐश्वर्य और सिद्धि से सम्पन्न देवयोनिगत जीवों को भी स्वकर्म से प्रारब्धनिर्माण करते और भोगते देखा गया है, यद्यपि वे भोगयोनि ही हैं। विशिष्ट क्षमता वाले लोगों से विशेष सुदृढ आचरण की कामना की जाती है किन्तु यदि उनमें प्रमाद दिखे तो उनका दण्ड भी सामान्य से विशिष्ट ही होता है। शाप और वरदान, ये मनुष्य ही नहीं अपितु देवताओं और असुरों के लिए भी प्रभावी होते हैं। मनुष्ययोनि में स्थित अर्जुन को अनेकानेक वरदान मिले तो उनके पिता पाण्डु शापित होकर मृत्यु को प्राप्त हुए। असुरों में रावणादि ने ब्रह्मदेव से तपस्या के फलस्वरूप वरदान प्राप्त किया तो वहीं रम्भा और पुञ्जिकस्थला का बलात्कार करने के कारण नलकूबर तथा ब्रह्मदेव से शापित भी हुआ। देवताओं में भगवान् नारायण ने श्रीशिवजी की आराधना के फलस्वरूप वरदान में सुदर्शन चक्र प्राप्त किया तो महर्षि भृगु, नारद और वृन्दा आदि के द्वारा विभिन्न प्रकरणों में शापित भी हुए। और तो और, देवराज इन्द्र तथा चन्द्रमा आदि के स्वकर्मों के ही कारण अनेकों बार शापित होने की बातें लोकप्रसिद्ध ही हैं।

शाप का प्रयोग ऐसे तो विनाशकारी परिणाम को जन्म देता है, किन्तु इसके रक्षात्मक उदाहरण भी देखने को मिलते हैं। अनेकानेक स्तोत्र, मन्त्र और साधनों को ब्रह्मदेव, वशिष्ठ, विश्वामित्र, महादेव, श्रीकृष्ण, शुक्राचार्य, गौतम, अगस्त्य, वरुण, अग्नि, परशुरामजी आदि देवताओं और ऋषियों के द्वारा शापित किया गया है जिससे अनधिकृत व्यक्ति उनकी शक्तियों का दुरुपयोग न कर सकें। 'योगिनीतन्त्र' के बारहवें से सोलहवें पटल के मध्य महर्षि वशिष्ठ के द्वारा अयोग्य जनों के दुराचार को रोकने हेतु भगवती कामाख्या को कुछ शताब्दियों के लिए लुप्त होने का शाप दिया गया है।

शाप ही बहुत बार वरदान के रूप में भी परिणत हो जाता है। जैसे कुबेरपुत्रों को यमलार्जुन होने का जो शाप देवर्षि नारद ने दिया, वह अन्ततः भगवद्दर्शनरूपी अनुग्रह के रूप में ही फलित हुआ।

तौ दृष्ट्वा मदिरामत्तौ श्रीमदान्धौ सुरात्मजौ।
तयोरनुग्रहार्थाय शापं दास्यन्निदं जगौ॥[1]

ज्ञातं मम पुरैवैतद् ऋषिणा करुणात्मना।
यत् श्रीमदान्धयोर्वाग्भिः विभ्रंशोऽनुग्रहः कृतः॥[2]

ऐसे ही गन्धर्वराज हूहू, राक्षसराज उत्कच, महाराज सहस्राक्ष आदि का महर्षि देवल, लोमश, दुर्वासा आदि के शाप के कारण ग्राह, शकटासुर, तृणावर्त आदि की तामसी योनि में जाना भी भगवल्लोकप्राप्तिकारक बन गया।

भारवि किरातार्जुनीयम् के प्रथम सर्ग के आठवें श्लोक में कहते हैं –

समुन्नयन्भूतिमनार्यसङ्गमाद्
वरं विरोधोऽपि समं महात्मभिः॥

[1] श्रीमद्भागवतमहापुराण, स्कन्ध 10, पूर्वार्ध, अध्याय 10, श्लोक 07
[2] श्रीमद्भागवतमहापुराण, स्कन्ध 10, पूर्वार्ध, अध्याय10, श्लोक 40

अतः दुष्टों के साथ समृद्धि को प्राप्त लोग ऐश्वर्यरूपी वरदान के बाद भी नरक चले जाते हैं किन्तु यदि कदाचित् वैरोध्यभाव से भी सत्संगति हो जाये तो उससे प्राप्त शाप भी व्यक्ति को मोक्ष दे सकता है। चित्रकेतु विद्याधर का उदाहरण द्रष्टव्य है -

अतः पापीयसीं योनिमासुरीं याहि दुर्मते।
यथेह भूयो महतां न कर्ता पुत्र किल्बिषम्॥[3]

देहिनां देहसंयोगाद् द्वन्द्वानीश्वरलीलया।
सुखं दुःखं मृतिर्जन्म शापोऽनुग्रह एव च॥[4]

राजा नहुष का देवराज के पद पर बैठना और शापित होकर अजगर बनना भला उनके लिए कौन से सुख का कारण बना होगा? राजा पाण्डु का मुनिशाप से अमैथुनी बन जाने से उनके जीवन की विषमता ही बढ़ी है। किन्तु दिति के द्वारा अदिति को मृतवत्सा होने का शाप पूर्वदुःखद होने के बाद भी सुखद हो गया क्योंकि उन्हें जगत्पिता की जननी बनने का सौभाग्य मिला।

यथा मे कर्तितो गर्भस्तव पुत्रेण छद्मना।
तथा तन्नाशमायातु राज्यं त्रिभुवनस्य तु॥
यथा गुप्तेन पापेन मम गर्भो निपातितः।
अदित्या पापचारिण्या यथा मे घातितः सुतः॥
तस्याः पुत्रास्तु नश्यन्तु जाता जाताः पुनः पुनः।
कारागारे वसत्वेषा पुत्रशोकातुरा भृशम्॥
अन्यजन्मनि चाप्येव मृतापत्या भविष्यति।[5]

और भी,

अंशेन भविता तत्र वसुदेवसुतो हरिः।
तदाहं प्रभविष्यामि यशोदायां च गोकुले॥
कार्यं सर्वं करिष्यामि सुराणां सुरसत्तमाः।
कारागारे गतं विष्णुं प्रापयिष्यामि गोकुले॥
शेषं च देवकीगर्भात्प्रापयिष्यामि रोहिणीम्।[6]

शाप मिलता तो कष्ट देने के उद्देश्य से किन्तु यदि व्यक्ति मूलतः संस्कारी हो और शापदाता दयालु सज्जन हो तो ऐसा शाप भी शल्य चिकित्सा के समान आंशिक कष्ट देकर अन्ततः पापरूपी रोग के नाश के सुख से व्यक्ति को लाभान्वित करता है। किन्तु यदि इसमें स्वार्थ और घृणा का स्थान है तो दमयन्ती के कारण देवर्षि नारद तथा पर्वत के मध्य हुए शापविनिमय के समान अनर्थकारी और अशुभ हो जाता है।

***

3 श्रीमद्भागवतमहापुराण, स्कन्ध - 06, अध्याय - 17, श्लोक - 15
4 श्रीमद्भागवतमहापुराण, स्कन्ध - 06, अध्याय - 17, श्लोक - 29
5 श्रीमद्देवीभागवतमहापुराण, स्कन्ध - 04, अध्याय - 03, श्लोक - 47-50
6 श्रीमद्देवीभागवतमहापुराण, स्कन्ध - 04, अध्याय - 19, श्लोक - 34-35

धर्मायण की अंक संख्या 80 में पूर्वप्रकाशित आलेख

'मानस' में वर्णित शाप तथा उनकी दिशाएँ

डा. श्रीकान्त सिंह
वरीय प्राध्यापक
स्नातकोत्तर हिन्दी विभाग कॉलेज ऑफ कॉमर्स
पटना-20

आधुनिक समाज पर गोस्वामी तुलसीदास द्वारा रचित रामचरितमानस का सबसे अधिक प्रभाव पड़ा है। शापकथाओं को लेकर वर्तमान काल में जो भी अवधारणा बनी है, उसके पीछे इस ग्रन्थ का सर्वादिक योगदान रहा है। अतः शाप-प्रसंगों पर रामचरितमानस का विवेचन आवश्यक है। हमें गर्व है कि इस आलेख के लेखक डा. सिंह ने इसी विषय पर अपनी पुस्तक का ही लेखन किया है। इनका विस्तृत शोध इस पर है। यह आलेख पूर्व में भी 'धर्मायण' की अंक संख्या 80 में प्रकाशित हो चुका है। इस अंक के लिए प्रासंगिक जानकर हमने इसे साभार पुनर्ग्रहण किया है। लेखक ने 'मानस' की शापकथाओं को अनेक भागों में विभाजित कर उसके फलाफल का निरूपण किया है।

गोस्वामी तुलसीदास द्वारा विरचित 'रामचरित-मानस' में शाप के अनेक प्रसंग वर्णित हैं। उनकी अवधारणात्मक परिकल्पनाएँ भी अपनी प्रकृति में पृथक्-पृथक् हैं। किन्तु, परिणाम की दृष्टि से उनके फलाफल कुछ विशिष्ट दिशाओं की ओर संकेत करते हैं। इनके वर्गीकृत रूप निम्नांकित हैं-

(क) शाप जो सर्वथा भयावह एवं अनिष्टकर सिद्ध हुए

इस कोटि के शाप प्रदाता शाप के ग्रहीता को अनेक दुर्वचन कहते हुए उसके बददुआ की कामना करते हैं, अपने मुख से अहितकामना सूचक शब्द निःसृत करते हैं। कभी-कभी प्रदाता वाचिक रूप से अनिष्ट कामना न करके कायिक अभिव्यक्ति के द्वारा ग्रहीता का अमंगल साधता है। असमर्थ पात्र तो मानसिक रूप से ही आलम्बन के अपकार के प्रति कुभावना व्यक्त करता है। जब प्रदाता अत्यन्त खिन्न, विक्षुब्ध एवं क्रुद्ध होकर मनसा वचसा कर्मणा ग्रहीता के अनिष्ट की घोषणा करता है तो तत्काल या कालान्तर में वह शाप सर्वथा भयावह एवं अनिष्टकर सिद्ध होता है। 'मानस' में इस कोटि के तीन शाप प्राप्त होते हैं।

इस कोटि में प्रथम शाप की प्रदात्री सती हैं और भोक्ता, शिव की निन्दा करने एवं सुननेवालों के साथ-साथ स्वयं प्रजापति दक्ष हैं। ध्यातव्य है कि पति के परित्याग से सन्तप्ता सती दुःखमय जीवन जी रही थीं। उससे किंचित् मुक्ति एवं राहत के लिए वह पिता के यज्ञ में अनाहूत होने के बावजूद जाती हैं। लेकिन, उनको राहत एवं मान की जगह वहाँ अपमान प्राप्त

होता है और यज्ञ में शंकर का घोर अपमान भी दृष्टिगत होता है। सती को पति-गृह से लेकर पितृ-गृह तक घोर दुःखावह जीवन का सामना करना पड़ता है। पति गृह में वह निजी अपराध के कारण दुःख का वरण करती हैं। महिलाएँ जब ससुराल से निराश हो जाती हैं तो वह मायके की आशा रखती हैं। लेकिन, सती को पिता से आशा या स्नेह के दो शब्द मिलना तो दूर, अपमान और ग्लानि प्राप्त होती है। पति के घर में प्राप्त अपमान का बेता अथवा द्रष्टा कोई दूसरा नहीं था। वह व्यक्तिगत स्तर पर ही अपमानजन्य दुःख झेल रही थी पति परित्याग के अतिरिक्त उनको अन्य तरह का क्लेश भी नहीं था। लेकिन, पितृ-गृह में उनका अपमान पिता के द्वारा ही सार्वजनिक रूप से होता है। यहाँ तक कि उस अभिमानी पिता ने शिव के अपमानार्थ ही यज्ञ का आयोजन किया था। सती एवं शंकर के अपमान में सती की माता को छोड़कर उनकी बहनें भी सहायिका होती हैं और उस यज्ञ में उपस्थित लगभग सभी सहभागी भी इस प्रकार टूटन, कुण्ठा भग्नाशा, अपमान, दुःख एवं व्यंग्यादि से जर्जर शरीर को समाप्त कर देना ही सती ने श्रेयस्कर समझा। चूँकि, सती वहाँ लाचारी की स्थिति में थी असमर्थ थी, पुनः पति के घर जाने लायक भी नहीं रह गयी थी। अतएव, अभिमानी पिता के अनिष्ट की कामना करते हुए तथा शंकर के निन्दकों एवं श्रवकों को भी शाप प्रदान करते हुए सती ने योगाग्नि में अपना शरीर भस्म कर दिया। यहाँ शाप प्रदात्री स्वयं अपने हाथों घोर अनिष्ट अर्थात् मृत्यु को प्राप्त होती है। अतः यह शाप प्रदाता के लिए भी सर्वथा भयावह एवं अनिष्टकर सिद्ध हुआ। दूसरी तरफ ग्रहीता के लिए भी यह शाप सर्वथा भयावह एवं अनिष्टकर साबित होता है। उसके यज्ञ का विध्वंस होता है, उसका धड़ से सर अलग होता है पुनः वह बकरे का सिर धारण करता है। किसी की आँखें फूटीं तो किसी के दाँत टूटे और कोई यज्ञाग्नि की भेंट ही चढ़ गया। इस प्रकार प्रदाता और ग्रहीता दोनों का विनाश होता है। सती प्रकरण का यह अभिशाप-प्रसंग कारण कार्य भाव से सर्वथा भयावह और अनिष्टकर है। इसमें विच्छेद, विध्वंस और आत्मदाह की घटना के साथ-साथ आक्रोश और संघर्ष के व्यापक परिणाम सामने आए हैं।

'मानस' में इसी कोटि का दूसरा प्रसंग शंकर एवं कामदेव से सम्बद्ध है। शिव के क्रुद्ध एवं प्रलयकारी स्वभाव तथा उनकी तृतीय नेत्राग्नि का प्रभाव जानकर भी कामदेव आक्रोशित होकर उनके हृदय में तीक्ष्ण शरसंधान करता है जिसका कुफल यह होता है कि वह तत्काल शंकर के तृतीय नेत्र के उन्मीलित होते ही वहीं भस्मीभूत हो जाता है। यहाँ प्रदाता शंकर ने कामदेव को वाचिक रूप से नहीं बल्कि कायिक रूप से दण्डित किया है। ग्रहीता कामदेव ने दूर से तीर चलाकर शंकर को विक्षुब्ध किया तो शंकर ने भी तदनुकूल दूर से ही अपने तृतीय नेत्र की अग्नि को प्रज्वलित कर उसको भस्मीभूत कर दिया। इस प्रकार शंकर के मनसा एवं कर्मणा शाप से कामदेव का दहन हो जाता है। अतएव यह शाप भी सर्वथा भयावह एवं अनिष्टकर सिद्ध होता है।

'मानस' में इसी कोटि का तीसरा और अंतिम शाप श्रवण कुमार के पिता एवं दशरथ से सम्बद्ध है। दशरथ के बाणों से श्रवण कुमार की मृत्यु होती है। और दशरथ द्वारा उसकी मृत्यु की खबर सुनकर उसके अंधे माता-पिता अतिशय विकल-विक्षुब्ध होते हैं। पुनः वे अंधे तपस्वी दशरथ को भी इसी नियति को प्राप्त होने का घोर शाप देते हुए स्वयं मृत्यु को प्राप्त करते हैं। यहाँ प्रदाता पुत्र वियोगाग्नि में तड़प-तड़पकर मृत्यु को प्राप्त होता है और वह ग्रहीता को भी इसी अवस्था में पहुँचने की अनिष्ट कामना करता है। कालान्तर में दशरथ की मृत्यु भी इसी शाप के कारण होती है। अस्तु, शाप का यह प्रकरण भी अत्यन्त भवावह एवं अनिष्टकर है। इस प्रकार इस कोटि के तीनों शाप ग्रहीता की मृत्यु के

निमित्त बनते हैं। इस कारण के दो प्रदाता तो स्वयं भी मृत्यु का वरण करते हैं और तीसरे की समाधि भंग होती है जो तारकासुर की मृत्यु का कारण बनती है। अतएव, हर प्रकार से ये शाप सर्वथा भयावह एवं अनिष्टकर हैं। इस प्रकार इस कोटि में कुल तीन शाप आते हैं-

क) सती द्वारा दक्षादि को प्रदत्त शाप

ख) शंकर द्वारा कामदेव को प्रदत्त शाप

ग) अंधे तपस्वी द्वारा दशरथ को प्रदत्त शाप

ख) शाप जो शिवाशिव सिद्ध हुए-

इस वर्ग में शाप के वे प्रसंग हैं जो प्रथम दृष्ट्या तो अकल्याणकर सिद्ध हुए, किन्तु उनके दूरगामी परिणाम कल्याणकर साबित हुए। ऐसे प्रसंगों के भी दो वर्ग हैं। प्रथम वर्ग में वैसे प्रसंग हैं जिनका विस्तृत वर्णन हुआ है और दूसरे प्रसंग में शाप की सूचना या संकेत मात्र है। सन्दर्भानुसार गोस्वामी तुलसीदास ने शाप की चर्चा मात्र की है और उनका उत्स पुराणादि ग्रन्थों में अनुस्यूत है। आगे शिवाशिव शापों के फलाफल का क्रमवार विवेचन किया जा रहा है-

'मानस' में इस कोटि का पहला शाप सनकादि एवं जय-विजय से सम्बद्ध है। सनकादि से शापित होकर जय विजय तीन जन्मों के लिए असुर का तामसी शरीर धारण करते हैं। विष्णु के द्वारपाल पद से च्युत होकर वे राक्षस की योनि को प्राप्त होते हैं। यह उनके जीवन का अशिव पक्ष है जो उनको सनकादि के शाप से प्राप्त हुआ है। लेकिन, पुनः उनके शाप शमन के लिए विष्णु का रामावतार होता है और वे दोनों भाई उनके हाथो देहान्तर को प्राप्त होते. हैं और अपने पूर्वपद को भी उनके साथ-साथ अन्यों का भी कल्याण होता है और भगवान् विष्णु का पवित्र लीला-विस्तार होता है। अतः यह शाप शिवाशिव कोटि का है।

रामावतार हेतु प्रकरण में कतिपय अन्य शापों की भी चर्चा है जो शिवाशिव-कोटिक हैं। वृन्दा, नारद एवं ब्राह्मणों द्वारा क्रमशः विष्णु, शिवगण— विष्णु तथा भानुप्रताप आदि को प्रदत्त शाप भी शिवाशिव सिद्ध होते हैं। वृन्दा के शाप के कारण विष्णु नर-तन धारण करते हैं, अनेक कष्टों का सहन करते हैं, जलंधर रूप रावण द्वारा उनकी पत्नी का हरण होता है। यह ग्रहीता के लिए अत्यन्त अकल्याणकारी है।

लेकिन, उसी शाप के कारण वृन्दा का पातिव्रत्य प्रसिद्धि पाता है, उसके पति का उद्धार होने के साथ ही अन्यों का भी उद्धार होता है। अतः इस शाप के भी दोनों पक्ष हैं— कल्याणपरक, अकल्याणपरक ।

देवर्षि नारद ने भी लगभग वृन्दा की तरह ही विष्णु को शाप प्रदान किया है, साथ ही उनपर व्यंग्य करनेवाले शिवगण भी उनके शाप का शिकार हो राक्षस योनि को प्राप्त होते हैं। विष्णु और शिवगणों के लिए शाप का यह अशिव पक्ष है। लेकिन, इसी शाप के कारण रामावतार होता है और रावणादि का उद्धार यह उस शाप का शिव पक्ष है। उपर्युक्त पात्रों को शाप प्रदान करनेवाले नारद स्वयं भी दक्ष प्रजापति के शाप से शापित हैं और उसी के कारण निरंतर भिक्षुकों की तरह भ्रमित होते रहते हैं। यह उनके लिए अकल्याणकारी है। लेकिन, इसी कारण, वे दूसरों की खैर-खबर लेते रहते हैं, नारायण की रट लगाते रहते हैं, यह इस शाप का शिव पक्ष है।

'मानस' के आगे की कथा में कतिपय ऐसे पात्रों की चर्चा है जो मुनियों के शाप से राक्षस एवं महामायाविनी 'मगरी' का रूप धारण करते हैं। लेकिन, कालान्तर में प्रभु श्रीराम के हाथों एवं राम भक्त हनुमान् के चरणों उनका उद्धार होता है और वे पूर्वरूप को प्राप्त करते हैं। समर्थ मुनि शुक्राचार्य, दुर्वासा, अगस्त्य एवं किसी अज्ञातमुनि के द्वारा क्रमशः राजा दण्ड, नर्तक, गन्धर्व, वेदज्ञ ब्राह्मण, रति को अनंगीकार करनेवाले अप्सरा शापित होकर अपने स्थान से स्खलित होते हैं, अनिष्टकारी बनते हैं, अशिवता को प्राप्त होते हैं। लेकिन, कालान्तर में सबका उद्धार होता

है और वे राम तथा रामभक्त हनुमान् के द्वारा शिवरूप का वरण करते हैं। इसी तरह मतंग द्वारा बाली को दिया गया शाप भी इसी कोटि का है। मतंग का शाप जहाँ बाली की जान को जोखिम में डालनेवाला है, बिलकुल अकल्याणकारी है। उसी शाप के बल पर सुग्रीव की जान बच रही है। अतः यह शाप सुग्रीव के लिए शुभसूचक और कल्याणप्रद हो जाता है। अस्तु, उपर्युक्त जितने शापों को चर्चा इस खण्ड में की गयी है वे सभी शिवाशिव कोटि के हैं जो मंगलामंगल का विधान करते हैं। इस प्रकार इस कोटि में कुल दस शाप हैं—

1. सनकादि द्वारा जय-विजय को प्रदत्त शाप
2. जलन्धर पत्नी वृन्दा द्वारा विष्णु को प्रदत्त शाप
3. नारद द्वारा विष्णु एवं शिवगणों को प्रदत्त शाप
4. दक्ष प्रजापति द्वारा नारद को प्रदत्त शाप
5. ब्राह्मणों द्वारा भानुप्रताप आदि को प्रदत्त शाप
6. शुक्राचार्य द्वारा राजा दण्ड को प्रदत्त शाप
7. दुर्वासा द्वारा कबन्ध को प्रदत्त शाप
8. मतंग द्वारा वाली को प्रदत्त शाप
9. अगस्त्य द्वारा शुक्र को प्रदत्त शाप
10. अज्ञात मुनि द्वारा अप्सरा को प्रदत्त शाप

(ग) शाप जो मंगलमय वरदान बन गए

इस वर्ग में शाप के वैसे प्रसंग हैं जो प्रथमतः अत्यन्त दारुण रूप से दृष्टिगत होते हैं लेकिन अन्ततः उनकी परिणति महामांगलिकता में होती है। शाप प्रदाता क्रोधावेश में कामना करता है। भोक्ता उस नियति को प्राप्त होने की अनिष्ट कामना करता है। भोक्ता उस नियति को प्राप्त भी होता है। तत्समय शापित पात्र की आर्त्तता पर आर्द्र होकर शापप्रदायक दूरगामी रूप में सम्बद्ध वर्ग के शाप मंगलमय वरदान बन जाते हैं। 'मानस' में इस वर्ग के सभी शापित पात्र अपने शाप को मंगलमय मानते हैं तथा शाप प्रदाता के प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करते हैं। उन्हें मालूम है कि मंगलमय स्थिति के समुपस्थित होने में पूर्व शाप का ही योगदान है। वे अपने को खरा रूप में पाते हैं। जैसे सोना अग्नि में जलने के पश्चात् कुन्दन बन जाता है उसी प्रकार प्रचण्ड शापाग्नि से मंडित होते ही तत्सम्बद्ध पात्र का शाप-शोधन एवं कल्मष परिष्कार हो जाता है और वह दिव्य रूप धारण कर शिव स्वरूप हो जाता है। 'रामचरितमानस' में इस कोटि का पहला प्रसंग महर्षि गौतम, उनकी भार्या अहल्या एवं इन्द्र से सम्बद्ध है तथा दूसरा और अन्तिम प्रसंग भगवान् शंकर, महर्षि लोमश एवं काकभुशुण्डि से राम के द्वारा शाप मुक्त होने के पश्चात् अहल्या पति प्रदत्त शाप को 'परम अनुग्रह' के रूप में स्वीकार करती हैं—

मुनि साप जो दीन्हा अतिभल कीन्हा
परम अनुग्रह मैं माना। [1]

इन्द्र राम के दूल्हा रूप के सौन्दर्य को हजार नेत्रों से देखते हैं और गौतम प्रदत्त शाप को परम हित' मान रहे हैं

रामहि चितन सुरेस सुजाना।
गौतम श्रापु परम हित माना॥[2]

गौतम से शाप स्वरूप प्राप्त 'सहस्र भग' इन्द्र के लिए 'सुभाग' सिद्ध हो जाता है। यही स्थिति काकभुशुण्डि की भी है। वे भी अत्यन्त कृतज्ञ भाव से शाप प्रदाता के अनुगृहीत होते हुए कहते हैं—

मुनि दुर्लभ बर पायउँ देखहु भजन प्रताप।[3]

शिव-शाप के समय गुरु ने कहा—

एहि कर होड़ परम कल्याना ।
सोइ कर अब कृपानिधाना॥ [4]

यह वचन लोमश-शापानुग्रह के पश्चात् मंगलमय वरदान बन जाता है और काकभुशुण्डि अपने प्रदाता के

1. रामचरितमानस : 1.211.9
2. रामचरितमानस : 1317.6
3. रामचरितमानस : 7.114 (ख)
4. रामचरितमानस : 1.109.1

प्रति आभार प्रदर्शित करते हैं।

अस्तु, प्रस्तुत प्रकरण के तीनों ग्रहीता अपने शाप प्रदाता एवं उनके शाप को क्रमशः 'परम अनुग्रह', 'परमहित', 'परम कल्याण' एवं 'मुनि दुर्लभ वरदान' के रूप में स्वीकार कर रहे हैं और धन्यता का अनुभव भी कर रहे हैं। अतएव यहाँ उनके शाप मंगलमय वरदान की कोटि में हैं। इस प्रकार इस कोटि में कुल तीन शाप हुए-

i) गौतम द्वारा अहल्या एवं इन्द्र को प्रदत्त शाप

(ii) शिव द्वारा काकभुशुण्डि को प्रदत्त शाप

(iii) लोमश द्वारा काकभुशुण्डि को प्रदत्त शाप

(घ) शाप के वरदान में परिणत होने की प्रक्रिया एवं प्रविधि-

'रामचरितमानस' मंगल काव्य है। तुलसीदास 'वन्दे वाणी विनायकौ' कहकर वाणी की विविधि गतियों का उद्घाटन करते हैं। अन्तःकरण की सारी बातें वाणी के द्वारा ही अभिव्यक्ति पाती हैं। वाणी के कुछ ऐसे स्वरूप हैं जो मनुष्य के सम्पूर्ण व्यक्तित्त्व की शक्ति को एक केन्द्र में प्रस्थापित करके किसी का अनिष्ट या मंगल कर सकते हैं। वणी की तरह जीवन में इच्छाओं की भी अनन्त गतियाँ होती हैं जिनसे भावों के दुःख-सुखात्मक प्रसंग क्रमशः शाप और वरदान की भाषा में अभिव्यक्ति पाते हैं।

शाप और वरदान दोनों इच्छाशक्ति की वाचिक अभिव्यक्तियाँ हैं। ये परस्पर प्रतिगामी अर्थ के वाचक हैं। शाप क्रोध का ही एक क्रियार्थक रूप है। एक तरफ यह असमर्थ पात्र के मुख से 'आह' के रूप में निकलता है तो दूसरी तरफ यह समर्थ पात्र की आत्मशक्ति का प्रसाद है जिसमें अनिष्ट करने के साथ अनिष्ट के सुधारने की भी क्षमता है। समर्थ लोग शाप के द्वारा दिव्य अद्भुत तत्त्वों का प्रकाशन करते हैं। दिव्य तत्त्व वे हैं जिनका आविर्भाव और तिरोभाव अकस्मात् कराया जा सकता है। ये अवास्तविक होकर भी वास्तविक रूप में प्रकट होते हैं। इसमें प्रयोक्ता का ऐश्वर्य तत्त्व निहित होता है। यह तत्त्व देवों में और देवशक्तियों में दर्शाया जाता है। साधना के बल पर ऋषियों और योगियों में भी दिव्य तत्त्वों के उत्पन्न करने की क्षमता होती है। ये दिव्य तत्त्व अष्ट सिद्धियों के नाम से तन्त्र-विद्या के भी अंग कहे गए हैं।

बहरहाल, जब हम शाप उत्पादन के कारणों पर विचार करते हैं तो ग्रहीता की गलती और प्रदाता का कोप दृष्टिगोचर होता है। किसी पात्र के कुकृत्यों से क्षुब्ध होकर समर्थ व्यक्ति दण्डस्वरूप तत्सम्बद्ध पात्र को शाप देता है। कभी-कभी प्रदाता अपनी गलती एवं गलतफहमी के कारण भी किसी निरपराध को शापित कर डालता है। शापित व्यक्ति आर्त्त होकर ज्योंही त्राहि -त्राहि करता है प्रदाता का शरण्य बनता है त्योंही 'वज्रादपि कठोराणि' शाप 'मृदूनि कुसुमादपि' का मंगलमय रूप धारण कर लेता है। कभी वह शाप अनिवार्य होता है, कभी दुर्निवार, तो कभी वरदान साबित होता है।

'मानस' में अधिकतर शाप प्रदाता समर्थ व्यक्ति (मुनि, ऋषि) हैं। 'कोप' और 'कृपा' उनके 'दाहिनें-बायें' चलते नजर आते हैं। अतः ज्योंही शापित पात्र निष्कलुष भाव से 'कृपण' बन अपराध-क्षमापन की गुहार लगाता है, वह शाप प्रदाता के द्वारा कृतार्थ कर दिया जाता है। यही शाप को वरदान में परिणत होने की प्रक्रिया एवं प्रविधि है।

गौतम ऋषि के द्वारा अहल्या एवं इन्द्र को क्रमशः पत्थर एवं विरूप होने का शाप, शिव के द्वारा शूद्र ब्राह्मण को चाण्डाल पक्षी (काकः पचिषु चण्डालः) होने का शाप निश्चय ही अत्यन्त भयानक है। लेकिन, उपर्युक्त सभी शाप कालान्तर में मंगलमय वरदान बन जाते हैं और शाप-ग्रहीता 'परम अनुग्रह 'परम हित' और 'मुनिदुर्लभ वर' के रूप में उस शाप की महामांगलिकता का बखान करते हैं।

***

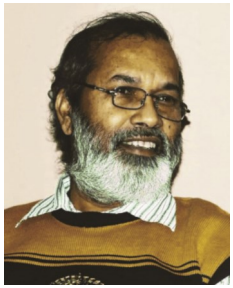

वरदान होते गए मानस के शाप

डॉ कवीन्द्र नारायण श्रीवास्तव
पूर्व न्यूज़ एडिटर, प्रेस ट्रस्ट आफ इंडिया (पी टी आई) ,
नई दिल्ली।

गोस्वामी तुलसीदास विरचित रामचरितमानस मंगल काव्य है। इसकी कथाओं में सर्वत्र जगन्मंगल की भावना छिपी हुई है। यहाँ अनेक प्रकार से शापकथाओं का प्रयोग हुआ है। इन शापकथाओं को लेकर जो आधुनिक सामाजिक परिप्रेक्ष्य में विवेचन हो रहे हैं उन्की सीमा है, उनका एक उद्देश्य है। अतः 'मानस' की शापकथाओं को उसके मूल उत्स के साथ उसके विकास को भी देखने की जरूरत है। यद्यपि इसके व्यापक अध्ययन के लिए हमें इन शापकथाओं के पौराणिक स्वरूप के अन्वेषण की आवश्यकता है पर तत्काल इस आलेख के लेखक ने इनका यथारूप संकलन कर पाठकों के लिए एकत्र प्रस्तुत किया है। हम आशा करते हैं कि रामकथा के प्राचीन ग्रन्थों में इनके उल्लेख कहाँ पर आये हैं, अथवा ये गोस्वामीजी की अपनी कल्पना है, इस दृष्टि से विचार कर भविष्य के शोधकर्ता अपना कार्य करेंगे। तत्काल हम आधुनिक पत्रकार, जिसे सामाजिक सरोकार भी निभाने का दायित्व वहन करना पड़ता है, उसकी दृष्टि में 'मानस' की शापकथाओं को देखें।

महाभक्त कवि शिरोमणि बाबा तुलसीदास कृत श्रीरामचरितमानस में जितने भी शाप के प्रसंग आए हैं, उन्हें यदि सूक्ष्मता से देखा जाए तो सभी शाप विषयान्तर से मानव समाज के लिए और जिस व्यक्ति के लिए शाप दिये गए उसके लिए, वरदान ही साबित हुए हैं। इस सच्चाई की पुष्टि गोस्वामी तुलसीदास जी ने भी की है। वानरी स्वभाव के कारण नल और नील अपने बाल्यावस्था में जब ऋषियों द्वारा पूजा की जाने वाली मूर्तियों को नदी में फेंक दिया करते थे तो ऋषियों ने नल नील को शाप दिया था कि जो भी पत्थर उन दोनों के हाथों से स्पर्श होगा वह पानी में नहीं डूबेगा। ऋषियों द्वारा दिया हुआ यही शाप नल नील के लिए वरदान साबित हुआ और साथ ही साथ रावण पर विजय प्राप्त करने के लिए प्रभु श्रीराम के लिए भी वरदान हुआ और पूरे मानव समाज के लिए भी।

नाथ नील नल कपि द्वौ भाई।
लरिकाईं रिषि आसिष पाई॥[1]

प्रसंग के अनुसार समुद्र ने भगवान् श्री राम से कहा कि लड़कपन में नल और नील ने ऋषियों से आशीर्वाद प्राप्त किया था कि जो भी पत्थर वे स्पर्श करेंगे वह पानी में डूबेगा नहीं बल्कि तैरने लगेगा। इसी आधार पर भगवान् ने समुद्र पार करने के लिए रामेश्वरम पुल बनवाया था। नल और नील को ऋषियों द्वारा दिया गया शाप, उनके लिए तो वरदान हुआ ही साथ साथ पूरे जगत के लिए कल्याणकारी भी

1 रामचरितमानस: सुन्दरकाण्ड, 59.1

साबित हुआ।

मानस में शाप के जितने भी प्रसंग आये हैं, उनको विश्लेषित करने से अंत में यही निष्कर्ष निकलता है कि वे सब वास्तवकिता में समूचे मानव जाति के लिए वरदान ही साबित हुए। तात्पर्य यह है कि विप्रों द्वारा दिया गया शाप, शुरू शुरू में तो जरूर अहितकारी लगता है लेकिन अंत में वह वरदान साबित होता है। इसलिए गोस्वामी जी ने साफ साफ बिना किसी लाग लपेट के प्रभु श्रीरामजी के मुख से कहला दिया

सापत ताड़त परुष कहंता।
बिप्र पूज्य अस गावहिं संता॥[2]

कई तथाकथित विद्वान कहते हैं कि ब्राह्मणों का वर्चस्व स्थापित करने के लिए इसे कहा गया है लेकिन वास्तविकता में ऐसा नहीं है। जो ऐसा कहते हैं वे एक सतही विचार के पोषक हैं, इस बात पर यही कहा जा सकता है कि

जिन्ह के रही भावना जैसी।
प्रभु मूरति तिन्ह देखी तैसी॥[3]

जो जैसा स्वयं रहता है वह दूसरों को वैसा ही देखता है।

चूँकि विषय शाप से सम्बंधित है और हमारे धर्म ग्रन्थों में अधिकतर शाप ब्राह्मणों द्वारा ही दिये गए हैं इसलिए इसे स्पष्ट करते चलें। गोस्वामी जी ने बिप्र कहा है और बिप्र की व्याख्या भी परिभाषित कर दी है। उन्होंने विप्र को परिभाषित करते हुए प्रभु श्रीराम जी के ही मुख से कहलाया

देव एक गुनु धनुष हमारें।
नव गुन परम पुनीत तुम्हारें॥
सब प्रकार हम तुम्ह सन हारे।
छमहु बिप्र अपराध हमारे॥[4]

अब जिसके पास ये नौ गुण हों वही विप्र होने का अधिकारी है और यही विप्र जब किसी भी बात पर किसी को भी शाप देगा तो वह उसके लिए अंततोगत्वा वरदान ही साबित होगा। विप्र के बारे में भगवान् के विचार से भी अवगत होते चलें तो और अधिक स्पष्ट हो जाएगा। भगवान् श्रीकृष्ण भागवत महापुराण में स्वयं कहते हैं

न ब्राह्मणान्मे दयितं रूपमेतच्चतुर्भुजम।
सर्ववेदमयो विप्रः सर्वदेवमयो ह्यहम्॥
दुष्प्रज्ञा अविदित्वैवमवजानन्त्यसुयवः।
गुरुं मां विप्रमात्मानमर्चादाविज्यदृष्टयः॥[5]

अर्थात् मुझे अपना यह चतुर्भुज रूप भी ब्राह्मणों की अपेक्षा अधिक प्रिय नहीं है। क्योंकि ब्राह्मण सर्ववेदमय हैं और मैं सर्वदेवमय हूँ। दुर्बुद्धि मनुष्य इस बात को न जानकर केवल मूर्ति आदि में ही पूज्य बुद्धि रखते हैं और गुणों में दोष निकालकर मेरे स्वरूप जगद्गुरु ब्राह्मण का, जो कि उनका आत्मा ही है, तिरस्कार करते हैं।

भगवान् की इस घोषणा के बाद यह साफ हो जाता है कि यदि भगवद् स्वरूप विप्र शाप भी दे तो वह कालांतर वरदान ही साबित होगा इसमें कोई संदेह नहीं है बशर्ते वह भगवान् श्री के मानदंडों वाला 'विप्र' हो।

मानस में विप्रों द्वारा शाप देने का पहला प्रसंग देवर्षि नारद जी द्वारा भगवान् को ही शाप दिये जाने का आता है।

नारद शाप दीन्ह एक बारा।
कलप एक तेहि लगि अवतारा॥[6]

भोले शंकर जी पार्वती जी को बताते हैं कि नारद

2 मानस अरण्यकांड 33.1
3 मानस बालकांड 240.2
4 मानस बालकांड 281.4
5 भागवत महापुराण 10.87.54-55
6 मानस बालकाण्ड 123.3

जी ने एक बार भगवान् को शाप दिया था जिसके चलते भगवान् को एक कल्प में अवतार लेना पड़ा था। यहाँ पर पूरी कहानी उद्धृत करना प्रासंगिक नहीं होगा लेकिन इतना बताना जरूर सामयिक और प्रासंगिक होगा कि बिना किसी तर्क वितर्क के नारद जी विप्र श्रेष्ठ हैं और उन्होंने भगवान् को जो शाप दिया वह इस पूरे लोक जन समुदाय के लिए वरदान ही साबित हुआ। और तो और वह शाप स्वयं नारद जी के लिए भी वरदान साबित हुआ। लोक और जन समुदाय के लिए इसलिए वरदान साबित हुआ क्योंकि यदि भगवान् का अवतार नहीं होता तो इस धरती से अत्याचारी का अंत नहीं होता और नारद जी के लिए इसलिए वरदान साबित हुआ कि काम को जीतने का उनके अंदर जो अहंकार आ गया था, वह खत्म नहीं होता।

जिता काम अहमिति मन माहीं।[7]

नारद जी को अहंकार हो गया था कि उन्होंने काम को जीत लिया है और इसी अहंकार के साथ वह भगवान् के पास जाकर अपने पुरुषार्थ का बखान करने लगे थे। अपने बालक रूपी भक्त के इस अहंकार को खत्म करने के लिए भगवान् ने माया रचाया और अन्जाने में नारद जी द्वारा दिये गए शाप को ग्रहण किया और अपने भक्त नारद जी के अहंकार को खत्म किया। इस शाप के बारे में जब नारद जी ने भगवान् से पूछा कि

तब बिबाह मैं चाहउँ कीन्हा।
प्रभु केहि कारन करै न दीन्हा॥[8]

इस पर भगवान् ने उन्हें विस्तार से उपदेश दिया कि किस कारण से बाल भक्तों को युवती स्त्रियों से दूर रहना चाहिए।

यह शाप इस मायने में भी वरदान साबित हुआ कि चाहे जितना बड़ा भक्त हो लेकिन उसे तनिक भी अहंकार नहीं होना चाहिए, और यदि उसे अपनी भक्ति या सिद्धि का अहंकार होगा तो भगवान् अपने हिसाब से उसे ठीक करेंगे ही करेंगे। इस तरह मानस में शाप दिये जाने का यह प्रसंग अत्यधिक लोक कल्याणकारी होकर संसार के लिए वरदान ही साबित हुआ। इसी प्रसंग में नारद जी ने शिव जी के दो गणों को भी शाप दिया था जो कालांतर उन्हें शिव लोक से मुक्त कर विष्णु लोक का अधिकारी बना दिया। भगवान् ने स्वयं अपने हाथों से रावण और कुंभकर्ण रूपी उन दोनों गणों को मुक्त किया।

समर मरन हरि हाथ तुम्हारा।
होइहहु मुकुत न पुनि संसारा॥[9]

यह शाप भी उन दोनों गणों के लिए वरदान ही साबित हुआ क्योंकि दोनों बिना किसी परिश्रम के संसार के आवागमन के चक्कर से मुक्ति पा गए।

मानस में विप्रों द्वारा शाप दिये जाने का दूसरा प्रमुख प्रसंग राजा प्रतापभानु को शाप दिये जाने का है। यदि समान्य तौर पर देखा जाए तो यह लगेगा कि राजा प्रतापभानु बहुत ही धर्मात्मा और प्रजा का कल्याण करने वाला राजा था, ऐसा मानस में उसके लिए कहा भी गया है।

भूप प्रतापभानु बल पाई।
कामधेनु भै भूमि सुहाई॥
सब दुख बरजित प्रजा सुखारी।
धरमसील सुंदर नर नारी॥[10]

राजा प्रताप भानु का बल पाकर भूमि सुंदर कामधेनु (मनचाही वस्तु देने वाली) हो गई। प्रजा सब दुखों से रहित और सुखी थी, और सभी स्त्री-पुरुष सुंदर और धर्मात्मा थे। इसी प्रतापभानु के लिए आगे कहा

7 रामचरितमानस : बालकाण्ड, 126.3
8 रामचरितमानस : अरण्यकाण्ड, 42.2
9 रामचरितमानस : बालकाण्ड, 138.4
10 रामचरितमानस : बालकाण्ड, 154.1

गया है कि

भूप धरम जे बेद बखाने।
सकल करइ सादर सुख माने।
दिन प्रति देइ बिबिध बिधि दाना।
सुनइ सास्त्र बर बेद पुराना॥[11]

वेदों में जो राजाओं के जो धर्म बताए गए हैं, राजा सदा आदरपूर्वक सुख मानकर उन सबका पालन करता था। प्रतिदिन अनेक प्रकार के दान देता और उत्तम शास्त्र, वेद और पुराण सुनता था। अब प्रश्न यह उठता है कि जब राजा इतना धर्मात्मा था तो उसे विप्रों के शाप के चलते राक्षस क्यों बनना पड़ा और इसमें विप्रों का शाप उसके लिए किस तरह वरदान साबित हुआ। सूक्ष्मता से देखा जाए तो यह स्पष्ट हो जाएगा। राजा प्रतापभानु वास्तविकता में अमर होना चाहता था लेकिन वह यह भूल गया कि इस नश्वर शरीर से कोई भी अमर नहीं हो सकता है।

जरा मरन दुख रहित तनु समर जितै जनि कोउ।
एकक्षत्र रिपुहीन महि राज कलप सत होउ॥[12]

मेरा शरीर वृद्धावस्था, मृत्यु, और दुख से रहित हो जाए। मुझे युद्ध में कोई जीत न सके और पृथ्वी पर मेरा सौ कल्प तक एक क्षत्र अकण्टक राज्य हो। ऐसी राजा प्रतापभानु की आंतरिक इच्छा थी। यह सोचने वाली बात है कि ऐसी इच्छा तो केवल भगवान् की ही हो सकती है। इस असम्भव इच्छा को पूरी करने के लिए भगवान् ने उसके ऊपर अहैतुकी कृपा करते हुए विप्रों से शाप दिलवाया जो उसकी इच्छा पूरी करने वाला वरदान साबित हुआ।

उपजे जदपि पुलस्त्यकुल पावन अमल अनूप।
तदपि महीसुर शाप बस भए सकल अघ रूप॥[13]

यद्यपि वे पुलस्त्य ऋषि के पवित्र, निर्मल और अनुपम कुल में उत्पन्न हुए, तथापि ब्राह्मणों के शाप के कारण वे सब पाप रूप हुए।

यहाँ पूरी कहानी बतलाने का कोई औचित्य नहीं है सिर्फ इतना कहना है कि यदि इतने प्रतापी और धर्मात्मा राजा की ऐसी आंतरिक इच्छा थी कि वह अमर हो जाए तो उसकी यह इच्छा विप्रों के शाप के कारण ही भगवान् ने पूरी की। विप्रों ने जो उसे शाप दिया उसके चलते वह रावण बना जिसे भगवान् ने अपने हाथों मुक्त किया और अंततोगत्वा भगवान् के परम धाम को गया तथा अमर हो गया। अमर तो वह होना ही चाहता था। इस तरह विप्रों का शाप उसकी आंतरिक इच्छा पूरी करने के लिए वरदान ही साबित हुआ।

मानस में विप्रों के शाप के साथ साथ भोले शंकर द्वारा कागभुशुंडि जी को शाप देने का प्रसंग आया है। जब विप्रों का शाप वरदान होता गया तो महादेव का शाप कैसे अहितकारी हो जाएगा। मानस के सर्वोच्च कथाकार देवतुल्य कागभुशुंडिजी ने स्वयं कहा है कि

मानी कुटिल कुभाग्य कुजाती।
गुर कर द्रोह करउँ दिनु राती॥[14]

अभिमानी, कुटिल, दुर्भाग्य और कुजाति मैं दिन रात गुरु जी से द्रोह करता। अब प्रश्न यह उठता है कि जो व्यक्ति गुरु-विप्र द्रोही हो जाए तो उसका कल्याण तो भगवान् ही करेंगे। इसलिए उनका कल्याण करने के लिए शंकर जी ने कागभुशुंडि जी को शाप दिया। प्रसंग आया है—

एक बार हर मन्दिर जपत रहेउँ सिव नाम।
गुर आयउ अभिमान ते उठि नहिं कीन्ह प्रनाम॥
सो दयाल नहिं कहेउ कछु उर न रोष लवलेस।

11 रामचरितमानस : बालकाण्ड 154.3
12 रामचरितमानस : बालकाण्ड, 164
13 रामचरितमानस : बालकाण्ड, 176
14 रामचरितमानस : उत्तरकाण्ड, 105.4

अति अघ गुर अपमानता सहि नहिं सके महेस॥[15]

एक दिन मैं शिवजी के मन्दिर में शिव नाम जप रहा था। उसी समय गुरुजी वहाँ आये, पर अभिमान के मारे मैंने उठकर उनको प्रणाम नहीं किया। गुरुजी दयालु थे, मेरा दोष देखकर भी उन्होंने कुछ नहीं कहा, उनके हृदय में लेशमात्र भी क्रोध नहीं हुआ। पर गुरु का अपमान बहुत बड़ा पाप है, अतः महादेव जी उसे नहीं सह सके।

मन्दिर माझ भई नभ बानी।
रे हतभाग्य अग्य अभिमानी॥
जद्यपि तव गुर के नहि क्रोधा।
अति कृपाल चित सम्यक बोधा॥
तदपि साप सठ दैहउँ तोही।
नीति बिरोध सोहाइ न मोही॥[16]

इस तरह भोले शंकर जी ने कागभुशुंडि जी को शाप दिया लेकिन यह शाप भी उनके लिए अंततोगत्वा वरदान ही साबित हुआ, वह अपने अहंकार को खत्म करने में सफल होकर भगवान् के परम भक्त हुए। इसके साथ साथ अभूतपूर्व लोक कल्याण भी हुआ, उनके इसी शाप को शांत करने के लिए संत गोस्वामी जी ने रुद्राष्टक की रचना की जो आमजनों के लिए शिव स्तुति में बहुत ही सहायक सिद्ध हुआ है।

मानस में कागभुशुंडि जी को एक बार और शाप मिला। लोमश ऋषि ने कागभुशुंडि जी को उस समय शाप दिया जब वह भगवान् के निर्गुण रूप की जगह सगुण रूप पर विशेष आग्रह कर रहे थे।

उत्तर प्रतिउत्तर मैं कीन्हा।
मुनि तन भए क्रोध के चीन्हा॥[17]

मैंने उत्तर प्रत्युत्तर किया, इससे मुनि के शरीर में क्रोध के चिन्ह उत्पन्न हो गए। लोमश ऋषि ने उनसे कहा

सत्य बचन बिस्वास न करही।
बायस इव सबही से डरही॥
सठ स्वपच्छ तव हृदयँ बिसाला।
सपदि होहिं पच्छी चंडाला॥
लीन्ह शाप मैं सीस चढ़ाई।
नहिं कछु भय न दीनता आई॥[18]

मेरे सत्य वचन पर विश्वास नहीं करता। कौए की भाँति सभी से डरता है। अरे मूर्ख तेरे हृदय में अपने पक्ष का बड़ा भारी हठ है, अतः तू शीघ्र चांडाल पक्षी (कौआ) हो जा। मैंने आनंद के साथ मुनि के शाप को सिर पर चढ़ा लिया। उससे मुझे न कुछ भय हुआ, न दीनता ही आई। यह शाप भी आखिर में कागभुशुंडि जी के लिए तो वरदान साबित हुआ क्योंकि वह इस संसार के सर्वोच्च राम कथाकार बने और लोक के लिए भी यह बहुत ही कल्याणकारी हुआ क्योंकि कागभुशुंडि के माध्यम से करोड़ों जन्मों से लोग राम कथा का आनंद ले रहे हैं।

इस तरह मानस में शाप के जितने भी प्रसंग आये हैं, वे सभी किसी न किसी रूप में उस व्यक्ति विशेष के लिए और आमजन के लिए वरदान के रूप में अन्ततोगत्वा परिवर्तित होते चले गए।

***

15 रामचरितमानस : उत्तरकाण्ड, 106 क.ख
16 रामचरितमानस : उत्तरकाण्ड, 106.1-2
17 रामचरितमानस : उत्तरकाण्ड, 110.7
18 रामचरितमानस : उत्तरकाण्ड, 111.7-8

(धर्मायण की अंक संख्या 72 में पूर्व प्रकाशित आलेख)

पौराणिक शापकथाओं का विमर्श

डा. जनार्दन यादव

भारतीय साहित्य उपादेशात्मक हैं और इनका अन्ततः उद्देश्य है अभ्युन्नति। अतः हम यहाँ सुखान्त परिणिति देखते हैं। यहाँ के साहित्य की अनन्य विशेषता है कि आरम्भ और मध्य भले झंझावातों से क्यों न भरा हो पर अन्त तो सुखमय ही होगा। वैदिक वाङ्मय सहित सभी साहित्य उपदेशपरक हैं। वैदिक साहित्य और स्मृतियाँ पिता समान उपदेश देते हैं तो पुराण मित्र के समान कथाओं के द्वारा हमें सन्मार्ग पर प्रेरित करते हैं। शापकथाओं का ताना-बाना भी वैसा ही बुना गया है ताकि वह वैदिक साहित्य के निन्दार्थवाद का स्वरूप ले सके। श्रुति कहती है- 'सत्यं वद।' पुराण कहता है- 'देखो भैया, कर्ण ने गुरु से झूठ कहा तो उसे शाप मिला।' इसी पर काव्य लिखा जायेगा तो वहाँ हमें अलंकार, ध्वनि, नवरस भी मिलेंगे। पर, तीनों जगहों पर एक ही बात मिलेगी- 'झूठ मत बोलो।'

इस परिप्रेक्ष्य में पौराणिक शापकथाओं की शैली तथा विमर्श यहाँ हम देख सकते हैं।

भारतीय पौराणिक ग्रन्थों में अनेक कथाओं के पात्र शापग्रस्त हैं। ये शाप ऋषियों और देवताओं द्वारा दिये गये हैं। देवता भी शापग्रस्त हैं। वस्तुतः ये शाप समय-समय पर गलत काम करने के कारण, आज्ञा न मानने के कारण अपमानित होने के कारण अहं का प्रदर्शन करने के कारण- एक पक्ष द्वारा दूसरे पक्ष को दिये गये हैं। शाप के अनुसार ही पात्रों के चरित्र का विकास होता है तथा अवसान भी। इन कथाओं में शापोद्धार का प्रसंग भी वर्णित है। शापोद्धार के लिए अनेक पात्र जन्म-जन्मान्तर की यात्रा करते हैं और पूर्व निर्दिष्ट समयानुसार उन पात्रों को शाप से मुक्ति मिलती है।

प्रश्न यह उठता है कि अनेक पात्र शापग्रस्त क्यों हो गये? शाप एक-दूसरे को दुःखी होकर देते हैं। आज भी भारतीय समाज में शाप दिये जाने की प्रथा काम कर रही है। जो व्यक्ति गलत काम करता है वह दूसरे का कोपभाजन बनता है और अभिशप्त हो जाता है। लेकिन आज के समय में लोग एक-दूसरे को अभिशप्त तो कर सकते हैं लेकिन शापोद्धार का कोई उपाय नहीं बतला सकते। इसलिये प्रत्येक व्यक्ति को शाप देने से बचना चाहिये, क्योंकि शाप देते समय ब्रह्मतेज अर्थात् उर्जा का क्षय होता है। प्रत्येक व्यक्ति को अभिशप्त होने से बचने का उपक्रम करना चाहिये।

यदि पौराणिक साहित्य के अनेक पात्र शापग्रस्त नहीं होते तो पौराणिक कथाओं का स्वरुप ही कुछ दूसरा होता। लेकिन एक बात है कि अभिशप्त और शापोद्धार का प्रसंग कथाओं में जुड़ जाने के कारण धर्म-अर्धम, नैतिकता-अनैतिकता, मर्यादा, नीति अनीति, सुख-दुख, पाप-पुण्य, उदारता-अनुदारता,

लाभ-हानि, जीवन-मरण, नियति, भाग्य, दैवी कोप, सर्जन-संहार, मान-अपमान, घृणा प्रेम, प्रवृत्ति निवृत्ति, कामना-साधना, आस्तिकता- नास्तिकता, राग-द्वेष, वीरता, साहस, दाम्पत्य भाव, भक्ति भाव की अनेक बातें कथाओं में जुड़ गई हैं और हमारे मन-प्राणों में बस गई हैं। ये कथाएँ भारतीय सांस्कृतिक और धार्मिक जीवन को उद्वेलित करती रही हैं।

कुछ शापित कथा प्रसंगों का उल्लेख करती रही हैं। कुछ शापित कथा प्रसंगों का उल्लेख करते हुए आलेख को आगे बढ़ाता हूँ। जब सत्यवादी राजा हरिश्चन्द्र काशी में ऋषि का ऋण चुकाने के लिये सपरिवार बिक रहे थे, उसी समय विश्वामित्र दक्षिणा माँगने के लिये पहुँचे। आकाश में विमान पर पाँचों विश्वेदेवों ने विश्वामित्र को धिक्कारते हुए यह पारम्परिक श्लोक कहा-

धिक् तपो धिग् व्रतमिदं धिग् ज्ञानं धिग् बहुश्रुतम्।
नीतवानसि यद् ब्रह्मन् हरिश्चन्द्रमिमां दशाम्॥

विश्वेदेवों को क्षत्रियों का पक्षपाती कहकर शाप दिया कि अभी विमान से गिरो, क्षत्रिय कुल में तुम्हारा जन्म हो और वहाँ भी लड़कपन में ही ब्राह्मण के हाथों मारे जाओ। यही पाँचों विश्वेदेव विश्वामित्र के शाप से द्वापर युग में द्रौपदी के पाँच पुत्र के रूप में उत्पन्न हुए थे, जिन्हें अश्वत्थामा ने महाभारत की आखिरी रात उनके शैशव में ही पाण्डव-शिविर पर हमला करके मार डाला था।

चन्द्रवंशी राजा ययाति का विवाह असुर गुरु शुक्राचार्य की पुत्री देवयानी से हुआ और साथ में दासी बनकर असुर राजा वृषपर्वा की बेटी शर्मिष्ठा आई। शर्मिष्ठा के आग्रह पर राजा ने उसे भी अपनी पत्नी बना लिया। देवयानी ने इस बात की शिकायत अपने पिता से की और पिता ने ययाति को शाप दिया कि इसी समय बूढ़ा हो जा।

ययाति ने क्षमायाचना की तो शुक्राचार्य ने शाप निवारण के लिये कहा कि यदि कोई पुरुष अपनी जवानी देकर बुढ़ापा ले ले तो काम चल सकता है। इस पर ययाति ने अपने पाँचों पुत्रों से निवेदन किया। पाँचवाँ पुत्र पुरु ने पिता को यौवन लौटा दिया और जंगल की ओर प्रस्थान कर गये।

जयद्रथ सिन्धु देश का राजा वृद्धक्षत्र का पुत्र था। बहुत तपस्या के बाद वह पैदा हुआ था। जन्म के समय ही आकाशवाणी हुई कि यह यशस्वी होगा। लेकिन एक श्रेष्ठ क्षत्रिय के द्वारा सिर काटे जाने से इसकी मृत्यु होगी। इस पर पिता ने शाप दिया कि जो इसका सिर काटकर अपने हाथ से धरती पर गिरायेगा, उसके सिर के सौ टुकड़े होंगे। जब अर्जुन ने युद्धभूमि में जयद्रथ का सिर काट लिया तो श्रीकृष्ण के आदेशानुसार उसके पिता की गोद में गिरा दिया। इसके पिता तपस्या में थे। जब आँखें खुलीं और जयद्रथ का सिर देखते ही हाथ से गिर पड़ा। उसी समय उसके सिर के सौ टुकड़े हो गये। दूसरी कथा है कि जयद्रथ के पिता ने शंकर से वरदान ले रखा था कि जिसके द्वारा मेरे पुत्र का मस्तक पृथ्वी पर गिरे, उसके अपने मस्तक के सौ टुकड़े हो जाये। जिस समय उसका सिर कटा, उस समय उसके पिता कुरुक्षेत्र से दूर किसी पवित्र स्थान में तप कर रहे थे।

राजा के सिपाही व सरदार ने महर्षि माण्डव्य के आश्रम में डाकुओं को पकड़ा और राजाज्ञा के कारण डाकुओं के साथ में महर्षि को भी सूली पर चढ़ा दिया। ज्ञात हुआ कि महर्षि सूली पर भी जीवित हैं तो राजा क्षमाप्रार्थी हुए। इसके बाद माण्डव्य धर्मदेव के पास गये और पूछा कि कौन से पाप के कारण दारुण दुःख झेलना पड़ा?

धर्मराज ने बताया- बचपन में आपने चिड़ियों और टिड्डियों को पकड़कर सताया था। लेकिन बचपन में किये गये कर्म को पाप न समझकर मुनि ने धर्मराज को शाप दिया कि तुम मर्त्यलोक में जाकर मनुष्य योनि में जन्म लो, क्योंकि मुझे न्यायोचित मात्रा से अधिक दण्ड मिला है। इसी शाप के कारण अम्बालिका की दासी विनता के गर्भ से धर्मराज ने विदुर के रूप में जन्म लिया विदुर बहुत बड़े नीतिज्ञ, दार्शनिक थे। भगवान्

श्रीकृष्ण इनके साग खाकर तृप्त हुए। विदुर का विवाह राजा देवक की अत्यन्त रूपवती कन्या परशवी से हुआ था।

द्वापर के अन्त में राजा प्रतीप के पुत्र शान्तनु हुए। शान्तनु गंगा तट पर सुन्दर स्त्री पर आसक्त हुए। यह स्त्री गंगा थी। गंगा ने शान्तनु से शर्त के अनुसार विवाह किया था। गंगा को आठ पुत्र हुए। सात को उसने नदी में बहा दिया। गंगा महर्षि जहनु की कन्या थी। वशिष्ठ ने आठ वसुओं को अपनी कामधेनु गाय चुराने के आरोप में मर्त्यलोक में जन्म लेने का शाप दिया था और वसुओं ने गंगा से माता बनने की प्रार्थना की थी। आठवाँ पुत्र 'द्यु' नामक वसु था जो देवव्रत और आगे चलकर भीष्म के नाम से विख्यात हुआ। गंगा भीष्म को छोड़कर शान्तनु के जीवन से चली गई। गाय चुराने में आठवें वसु की अहम् भूमिका थी। वशिष्ठ ने वसुओं की प्रार्थना पर शापमुक्ति का उपाय बताते हुए कहा था कि सात वसुओं की मुक्ति तो शीघ्र हो जाएगी लेकिन आठवें द्यु' नामक वसु को पृथ्वी पर शापमुक्ति के लिये लम्बे समय तक रहना पड़ेगा। इसी कारण भीष्म पितामह को महाभारत युद्ध समाप्ति के उनसठवें दिन सूर्य के उत्तरायण होने पर ही शाप से मुक्ति मिल सकी। उन्होंने आजीवन ब्रह्मचर्य का पालन किया था, इसलिये इच्छा मृत्यु प्राप्त हुई। वे एक महान् योद्धा थे तथा अपने गुरु महर्षि परशुराम को भी युद्ध में परास्त किया था जिस कारण परशुराम ने किसी क्षत्रिय को युद्ध कला की शिक्षा नहीं देने की शपथ ली थी। पूर्व में महर्षि परशुराम का चरित्र क्षत्रियविनाशक का रहा था।

महर्षि जमदग्नि के पुत्र पशुराम विष्णु के अंशावतार थे। वे वीर और तपस्वी थे। उनमें क्षात्रशौर्य भी था और उग्र ब्राह्म तेज भी संस्कृत में उनके विषय में एक श्लोक प्रसिद्ध है-

अग्रतः चतुरो वेदाः पृष्ठतः सशरं धनुः ।
इदं ब्राह्म इदं क्षात्रं शापादपि शरादपि ॥

अर्थात् परशुराम के आगे चारों वेद और पीठ पर बाणयुक्त धनुष है। एक ब्राह्मणत्व है, एक क्षत्रियत्व। वे शत्रु को शाप से भी पराजित करते हैं और शर से भी कर्ण परशुराम से शापित हुए थे। महेन्द्र पर्वत पर परशुराम का आश्रम था। यह पर्वत उड़ीसा से लेकर मदुरा तक विभिन्न श्रृंखलाओं में बिखरा हुआ है। परशुराम ने सम्पूर्ण भारत की यात्रा की थी। जहाँ रहे वही आश्रम रहा। यही पर कर्ण शस्त्र शिक्षा के लिये गये थे और पूर्णिमा के दिन शापित हुए थे। कर्ण ने उनसे झूठ बोला था कि वे ब्राह्मण कुमार हैं, क्षत्रिय नहीं। तब महर्षि ने उन्हें अपना शिष्य बनाया। एक दिन गर्मी में महर्षि कर्ण की जंघा पर सिर रखकर सो गये थे। उसी समय अलर्क नामक एक जहरीला कीड़ा ने कर्ण की जंघा में काट लिया। अलर्क नामक कीड़ा बहुत कुछ पटार, कानखजूरा आदि कीड़ों की ही जाति है। अलर्क को लेकर कहा गया है कि उसके आठ पैर, शरीर पर सूई जैसे रोंगटे और तीखी दाढ़ होती है। इसके डंक मारने पर असह्य पीड़ा होती है। कर्ण की जंघा से लहू की बहती धारा के स्पर्श होने से महर्षि की नींद टूटी तो उन्होंने कर्ण से पूछा और उन्हें यह भी शक हो गया कि ऐसा सहनशीलता ब्राह्मण कुमार में नहीं हो सकती। निश्चित ही यह क्षत्रिय है और तत्क्षण उन्होंने शाप दिया कि समय पड़ने ब्रह्मास्त्र की विद्या तुम्हें विस्मृत हो जाएगी। भीष्म पितामह, द्रोणाचार्य ने भी महर्षि परशुराम से शस्त्र-विद्या सीखी थी। कर्ण के जीवन से एक और शाप कथा जुड़ी हुई है जो इस प्रकार है-

एक दिन कर्ण महेन्द्र पर्वत पर अकेला बाण चलाने का अभ्यास कर रहा था कि इतने में दैवयोग से आश्रम के नजदीक चरनेवाली एक गाय को उसका बाण लग गया और वह गाय मर गई। जिस ब्राह्मण की वह गाय थी उसने क्रोध में आकर कर्ण को शाप दिया कि युद्ध में तुम्हारे रथ का पहिया कीचड़ में धँस जाएगा और तुम भी उसी तरह मारे जाओगे जैसे मेरी गाय मारी गई। वास्तव में युद्ध के समय रक्त के कीचड़ में

कर्ण के रथ का चक्का धँस गया था जिसे वह निकालने का प्रयत्न कर रहा था। उसी समय अर्जुन ने अपने बाण से कर्ण का सिर काटकर पृथ्वी पर गिरा दिया और वह गाय की तरह ही मरा।

भीम के पौत्र और घटोत्कच के पुत्र बर्बरीक बहुत बलवान् थे। जब श्रीकृष्ण ने पाण्डव पक्ष के सभी योद्धओं से पूछा कि कौन कितने दिनों में महाभारत का युद्ध समाप्त कर सकता है तो बर्बरीक ने कहा कि मैं पलक झपकते युद्ध समाप्त सकता हूँ और उसने इसका प्रमाण भी दिया। तत्क्षण श्रीकृष्ण ने सुदर्शन चक्र से उसकी गर्दन काट ली। बबरीक के मरने पर सब लोग भौंचक्के रह गये। पाण्डव शोक में डूब गये। घटोत्कच मूर्छित होकर गिर पड़ा। उसी समय वहाँ चौदह देवियाँ आईं। उन्होंने घटोत्कच और पाण्डवों को बताया कि बर्बरीक पूर्व जन्म में सूर्यवर्चा नामक यक्ष था। देवता ब्रह्माजी के साथ जब पृथ्वी का भार उतारने के लिये पर्वत पर भगवान् नारायण की स्तुति कर रहे थे, अहंकारवश उस यक्ष ने कहा था- "पृथ्वी का भार तो मैं ही दूर कर दूँगा।" उसके गर्व के कारण रुष्ट होकर ब्रह्मजी ने शाप दे दिया कि भूमि का भार दूर करते समय भगवान् उनका वध करेंगे। ब्रह्माजी के उस शाप को सत्य करने के लिये ही भगवान् श्रीकृष्ण ने बर्बरीक को मारा है।

एक दिन महाराजा पाण्डु वन में शिकार खेलने गये। वहीं जंगल में हरिण के रूप में किर्दम ऋषि-दम्पती भी विहार कर रहे थे। पाण्डु ने अपने तीर से हिरण को मार गिराया। उनको पता नहीं था कि वे ऋषि दम्पती हैं। ऋषि ने मरते-मरते पाण्डु को शाप दिया कि "पापी, अपनी पत्नी के साथ क्रीड़ा करते हुए ही तुम्हारी भी मृत्यु हो जाएगी।" ऋषि के शाप से दुखी पाण्डु लौटकर पितामह भीष्म और विदुर को राज्य का भार सौंपकर अपनी पत्नियों के साथ वन में जाकर ब्रह्मचारी जैसा जीवन बिताने लगे। एक दिन वसन्त ऋतु के प्रभाव से उनके मन में कामवासना जाग्रत हो उठी। वे माद्री के साथ क्रीड़ा करने का आतुर हो उठे। माद्री ने बहुत रोका, परन्तु पाण्डु न माने। कामवश बुद्धि खो बैठे और ऋषि के शाप का असर हो गया। तत्काल उनकी मृत्यु हो गई। उन्हीं की चिता पर माद्री भी जल गयी।

महाभारत युद्ध के दिनों कुन्ती ने अपने पाँचों पुत्रों से यह बात छिपा रखी थी कि कर्ण उसका बड़ा भाई है क्योंकि कर्ण ने ही कुन्ती से ऐसा वचन लिया था। युद्ध के बाद महाराज युधिष्ठिर को यह बात जानकर बहुत व्यथा हुई। उन्होंने कुन्ती से कहा- "माँ! तुमने कर्ण के जन्म के रहस्य को छिपाये रखा। इस कारण हमें उसका असली परिचय न मिल सका। इसी कारण मुझे इतनी व्यथा हो रही है। यह सब तुम्हारे कारण ही हुआ। मैं शाप देता हूँ कि आज से स्त्रियाँ किसी भी रहस्य को गुप्त न रख सकेगी।" कथा पौराणिकों की कल्पना मालूम होती है। प्रायः लोग समझते हैं कि स्त्रियाँ किसी भी रहस्य को हजम नहीं कर सकतीं। इसी लोकमत के आधार पर इस कहानी की सुन्दर ढंग से कल्पना की गई है। किसी रहस्य को गुप्त रखने से दुनियादारी की दृष्टि से चाहे फायदा हो या नुकसान, धार्मिकता की दृष्टि है। यह इतना उत्तम गुण नहीं समझा जाता। अतः स्त्रियों को इस बात को कभी महसूस करने की कोई आवश्यकता नहीं। किसी बात को गुप्त रखने की शक्ति न होना धर्म के पथ पर रोड़ा नहीं बन सकता। सम्भव है कि स्वाभाविक प्रेम के कारण ही स्त्रियाँ किसी बात को गुप्त रखने में असमर्थ होती हों। लोकमत ऐसा होने पर भी कितनी ही स्त्रियाँ ऐसी हैं जो रहस्यों को भली-भाँति गुप्त रख लिया करती हैं। यह भी नहीं कहा जा सकता है कि सभी पुरुषों में बात पचाने की सामर्थ्य होती है। भिन्न-भिन्न अभ्यासों व वृत्तियों के कारण प्रायः लोग में जो भिन्नताएँ दिखाई देती हैं। उन्हें स्त्र्योचित या पुरुषोचित कहकर विभक्त कर देना संसार का स्वभाव है।

काम्यक वन में मैत्रेय ऋषि को युधिष्ठिर से भेंट हुई और उन्होंने ऋषि को हस्तिनापुर में घटी घटना का

सारा वृतान्त सुनाया। वे हस्तिनापुर आये और दुर्योधन को समझाया कि पाण्डवों को धोखा देने का विचार छोड़ दो, वे बड़े वीर हैं उनके साथ सन्धि कर कर लो, इसी में तुम्हारी भलाई है। लेकिन जिद्दी व नासमझ दुर्योधन ने उनकी ओर देखा तक नहीं, कुछ बोला भी नहीं, बल्कि अपनी जाँघ पर हाथ ठोंकता और पैर के अंगूठे से जमीन कुरेदता वह मुस्कुराता हुआ खड़ा रहा। दुर्योधन की इस ढिठाई को देखकर महर्षि बड़े क्रोधित हुए। उन्होंने कहा- दुर्योधन, तुम इतने अभिमानी हो कि जो तुम्हारा भला चाहते हैं, उनकी बातों पर ध्यान न देकर गरूर में जाँघ ठोंक रहे हो। याद रखो, अपने घमण्ड का फल तुम अवश्य चखोगे। लड़ाई के मैदान में भीमसेन की गदा से तुम्हारी यह जाँघ टूटेगी और इसी से तुम्हारी मृत्यु होगी। इस प्रकार शाप देकर वे चले गये। महाभारत युद्ध के दिनों गान्धारी ने अपनी आँखों की पट्टी खोलकर अपने पुत्र दुर्याधन के सम्पूर्ण शरीर को वज्र बना दिया लेकिन जाँघ पर वस्त्र रहने के कारण जाँघ वज्र नहीं बन सकी क्योंकि गान्धारी ने दुर्योधन को सम्पूर्ण शरीर अनावृत करके आने के लिये कहा था। लाज के मारे वह ऐसा नहीं कर पाया। दूसरी बात यह भी थी कि दुर्याधन इन्हीं जँघाओं पर पांचाली को अनावृत करके बैठाना चाहता था और भीम ने प्रतिज्ञा की थी कि तेरी जँघा चूर-चूर करूँगा और गदा-युद्ध में उसने ऐसा ही करके दुर्याधन को परास्त किया।

इन्द्रालिक पर्वत पर तपस्या करते हुए महादेव की कृपा से अर्जुन को पाशुपत अस्त्र एवं दिव्यास्त्र मिला। इसके बाद वहाँ पर देवराज इन्द्र के सारथि मातलि ने देवराज इन्द्र का रथ लाकर खड़ा कर दिया जिस पर बैठकर अर्जुन इन्द्रलोक गये। वहाँ पर पर उर्वशी ने उससे प्रेमयाचना की लेकिन अर्जुन ने यह कहकर इन्कार कर दिया कि आप मेरी माता समान हैं। इससे नाराज होकर उसने शाप दिया कि तुम्हारा पुरुषत्व नष्ट हो जाये। इसके बाद देवराज इन्द्र ने अनुग्रह करके अर्जुन को बताया कि तुम जब चाहो तभी केवल एक वर्ष के लिए ही उर्वशी के शाप का यह प्रभाव तुम पर रहेगा। वस्तुतः उसी शाप ने अज्ञातवास में अर्जुन का साथ दिया। राजा विराट के यहाँ उसने सफेद शंख की चूड़ियाँ पहन, स्त्रियों की भाँति चोटी गूँथ, कंचुकी पहनकर वह विराट के अन्तःपुर में रहकर स्त्रियों को नाच-गाना सिखाया करते थे और अपना नाम बृहन्नला रखा था।

ब्रह्म-हत्या के दोष से पीड़ित होकर पदच्युत होने के बाद इन्द्र कहीं जाकर छिपे रहे और देवराज के पद पर महाराज नहुष सुशोभित हुए। लेकिन, इस पद पर वे मदान्ध हो गये तथा भोग-विलास में लगे रहने के कारण उनके मन में कामवासना का निवास हो गया। उन्होंने इन्द्र पत्नी शची को अपनी पत्नी बनाने के लिये कुचक्र शुरू कर दिया। इससे शची डर गई बृहस्पति के पास गयी तथा उनके निर्देशानुसार ही नहुष के पास जाकर बोली 'कि देवराज! धीरज रखिये। आखिर मुझे आपकी ही तो होना है।' दूसरी भेंट में शची ने नहुष से कहा कि आप पालकी में बैठकर मेरे महल में आवें और सातों ऋषि (सप्तर्षि) आपकी पालकी उठाकर चलें नहुष ने कहा- 'तुम्हारी जो भी इच्छा हो, उसे मैं पूरा करूँगा नहुष ने सातों ऋषियों को भुला भेजा और आज्ञा दी कि उसकी पालकी उठाकर उसे शची के महल को ले चलें। ऋषियों ने लाचार होकर आज्ञा मान ली। ऋषियों का यह घोर अपमान देखकर तीनों लोक भय से काँप उठे। नहुष की पालकी को उठाये हुए ऋषि ज्यों-ज्यों आगे बढ़ते जाते थे त्यों-त्यों नहुष के पाप को बोझ भी बढ़ता जाता था। नहुष के मन में तो शची की सुन्दर मूर्ति ऑकित थी और उसके मिलने की कल्पना से ही वह उतावला हो उठा था। जितनी जल्दी हो सके, उस सुन्दरी को प्राप्त करने की उसकी उत्कण्ठा बलवती हो गई। वह बार बार ऋषियों को डाँटकर कहने लगा कि जल्दी चलो और जल्दी चलो। अगस्त्य मुनि को, जो पालकी उठाने वालें में से थे, उन्हें लात मारकर डाँटते हुए कहा- "सर्प सर्प!" अर्थात् चलो,

चलो!!' महर्षि अगस्य को जब नहुष ने इस प्रकार कहा तो उसके पाप का घड़ा लबालब भर चुका था। इस व्यवहार से अगस्त्य ऋषि बड़े क्रुद्ध हुए और बोले - " अधम ! अभी तेरा स्वर्ग से पतन हो तूने ऋषियों को 'सर्प' कहकर पुकारा है, इसलिये तू सर्प (अजगर) का ही जन्म लेकर मर्त्यलोक में पड़ा रह अगस्त का इस प्रकार शाप देना था कि नहुष पालकी से नीचे औंधे मुँह गिर पड़ा और अजगर का शरीर लेकर पृथ्वी में बहुत काल तक जीता रहा और शाप से छुटकारा पाने की राह देखता रहा। इन्द्र पुनः देवराज पद पर सुशोभित हुए और शची देवी का मन शान्त हो गया ।

अशोक वाटिका में सीता ने जब रावण का प्रेम प्रस्ताव स्वीकार नहीं किया तो रावण सीता की ओर क्रोधित होकर झपटा लेकिन उसी समय उसे नल - कुबर के शाप का स्मरण हो आया कि यदि तू किसी पराई सती नारी के साथ जबरन व्यभिचार करेगा तो जलकर राख हो जाएगा। रावण ने नलकूबर की पत्नी के साथ बलात्कार किया था इसलिये नलकूबर ने उसे शापित किया था।

दनु नामक एक गन्धर्व था, जो राक्षसी वेश धारण कर ऋषियों को डराता और अपना मनोरंजन करता था। एक दिन दुर्वासा (स्थूलशिरा) नामक ऋषि ने शाप दिया कि तू इसी रूप में रह बहुत विनती करने पर शापमुक्त होने का उपाय बताते हुए उन्होंने कहा कि जब राम और लक्ष्मण आवेंगे तो तुम्हारे हाथ काटकर तुम्हें गढ़े में जिन्दा जलाकर शापमुक्त करेंगे। तब तुम्हारा पूर्व शरीर और ज्ञान-विज्ञान लौट आवेगा। एक बार इन्द्र से कबन्ध की लड़ाई हुई। ब्रह्मा से दीर्घायु का वरदान प्राप्त कबन्ध मरा तो नहीं लेकिन इन्द्र के वज्र से उसके दोनों पैर और मस्तक स्कंध में घुस गये। इसलिये वह कबन्ध कहलाया। जटायु के दाह संस्कार के बाद राम-लक्ष्मण की कबन्ध से भेंट हुई और उन्होंने कबन्ध का उद्धार किया। गन्धर्व शरीर प्राप्त कर कबन्ध ने सीता हरण और शबरी का पता बताया तथा सुग्रीव और हनुमान् के बारे में भी जानकारी दी। कबन्ध ने ही शबरी को राम के आगमन की सूचना दी थी। शबरी मतंग मुनि की शिष्या थी। राम जब चित्रकूट आये थे तो मतंग ऋषि अपने ऋषियों के साथ स्वर्गारोहण कर चुके थे। शबरी ने भी गन्धर्व की बातों का समर्थन किया तथा पम्पा सरोवर एवं ऋष्यमूक पर्वत के बारे में बताकर महाप्रस्थान कि्या।

संध्याकाल में गायत्री जाप का विशेष महत्त्व है। इसी काल में मन्देह राक्षस सूर्य से तुमुल संघर्ष कर उसे निगल जाना चाहते हैं। क्योंकि प्रजापित ने इन राक्षसों को सदैव मृत्यु को प्राप्त होने का शाप दिया हुआ है। अतः यदि गायत्री उपासक सन्ध्याकाल में मन्त्र जप करता है तो उससे सूर्य को बल मिलता है।

एक बार इन्द्र की सभा में महर्षि दुर्वासा पधारे। वहाँ अनेक परियों के बीच पुंजिकस्थला उपस्थित थी, जो बार-बार उठकर बाहर चली जाती थी। महर्षि दुर्वासा उसकी यह कुचाल देखकर क्रोधित हो गये तथा उन्होंने उसे शाप दिया कि अरी पुजिकस्थला की बच्ची ! इतने बड़े-बड़े लोग के बीच अपनी चटक मटक, रूप-रंग, बनाव- सिंगार पर इतराती हुई जो बन्दरिया बनी तू इधर से उधर उछलकूद मचा रही हैं, तो जा, तू वानर नाम के मानुषों में जाकर रह, यहाँ अमरावती में देवताओं के यहाँ तेरी जैसी चुलबुली छिछोटी का कोई काम नहीं है। बाद में थोड़ा नरम पड़ते हुए उन्होंने कहा कि तूने काम तो बहुत बुरा किया, लेकिन, जा, तू वानर नामक मानुषों के यहाँ जन्मेगी तो सही, पर तेरा बेटा ऐसा धाकड़, करोड़ो में एक निकलेगा कि कोई उससे टक्कर न ले सकेगा और वही तेरा नाम भी उजागर करेगा। जिस दिन उसकी बात सुनकर तेरा जी खिल उठेगा, उसी दिन तू यहाँ लौट भी आवेगी। इसी पुंजिकस्थला का जन्म अन्जनी के रूप में हुआ जो वानर नाम के मानुषों के मुखिया कुंजर की बेटी थी। इसी अंजना के पुत्र हुए हनुमान् । एक दिन राम-रावण युद्ध के पश्चात् हनुमान् कदली

वन में धूम रहे थे कि उन्हें अपनी माता की याद आई। वे अपनी माँ के पास पहुँच गये। उसे देखते ही अंजनी ने मुँह फेर लिया तथा पूछने पर बोली कि मेरे पास आते तुझे लज्जा नहीं लगी? तेरे होते हुए राम को लंका जाने के लिये पुल बनाना बड़ा और तू वहाँ खड़ा खड़ा सबका मुँह ताकता रहा। क्यों नहीं रावण को पकड़कर घसीटता हुआ श्रीराम के पास ले आया या इस पार से उस पार लंका तक समुद्र पर फैलकर लेट रहा जिससे सारी सेना तेरे ऊपर से होकर उस पार पहुँच जाती हनुमान् ने बड़ी मीठी बोली में समझाते हुए कहा कि माँ! मैं तो श्रीराम का चाकर हूँ। वे जितना आदेश देते हैं, उतना ही मैं करता हूँ.... यह सुनते ही अंजना का मातृत्व जग गया। उसने भरे गले से प्यार के साथ हनुमानजी को गोद में खींच कर बैठाया और बोली- मेरे प्यारे बेटे! तेरी बात सुनकर मेरा जी खिल उठा है, मेरे सिर पर चढ़ा शाप भी उतर चला है। अब मैं बड़े सुखी मन से भगवान् इन्द्र के पास चली जा रही हूँ।

सूर्यदेव से शिक्षा प्राप्त करने के पश्चात् हनुमान् अपने घर आ गये। इन्द्र ने उनकी ढोढ़ी (हनु) पर वज्र प्रहार किया था, इसलिये वे इन्द्र का नाम लेने वाले को अपनी गदा पीट देते थे। एक दिन भृगु और अंगिरा ऋषि इन्द्र का आवाहन कर रहे थे। हनुमान् ने सुन लिया। वे जंगल में जाकर एक नाहर और एक हाथी पकड़ लाये तथा उन्हें भृगु और अंगिरा ऋषियों की कुटियों के आगे लाकर बान्ध दिया जिससे उनका बाहर निकलना ही दूभर हो गया। ऋषियों ने क्रोधित होकर हनुमान् को शाप दिया कि तू जिस उजडुपन और अक्खड़पन से ऋषियों को तंग करता है आज से तेरी शक्ति की सुध-बुध तेरी खोपड़ी से दूर हो जाएगी और यह तभी आयेगी जब कोई तुझे उकसाकर बतायेगा कि तू महावीर है। इसी शाप के कारण हनुमान् को बार-बार उनकी महाशक्ति का स्मरण कराया जाता था, तब वे किसी कार्य को तत्क्षण कर डालते थे। शाप के कारण लम्बी अवधि के पश्चात् उनका अपने आराध्य श्रीराम से मिलने हुआ था।

संजीवनी बूटी लाने के लिये हनुमान् दूनागिरी (द्रोणगिरी) पहुँचे। भगवान् बद्रीनाथ की प्रेरणा से वे दूनागिरि निवासिनी दृष्टिहीना वृद्धा कौतुकी को कन्धे पर बैठकर पर्वतराज के निकट गये। हनुमान् ने वहाँ पर्वतराज की दाँयी भुजा उखाड़ ली और उड़ चले। पर्वतराज की भुजा टूट जाने से खून की धारा बह चली। कौतुकी का ठण्ड में वहीं प्राणान्त हो गया लेकिन मरने से पूर्व उसने अपने पुत्र मुकुन्दन को सारी बात बताकर हनुमान् को शाप दिया कि जा हनुमान् तू हड़बड़ी में मुझे वापस गाँव छोड़ने की बजाय यहीं मरता छोड़ गया। तू इसी उत्तराखण्ड में भटकता रहेगा। हनुमान् राम की जलसमाधि के बाद उत्तराखण्ड में यमुनोत्री के रूप में विराजमान हुए। पर्वत बान्दर पूँछ हनुमान् स्वरूप पर्वत माना जाता है और इसके ग्लेशियर से निकला जल ही यमुना नदी का स्रोत है । पर्वतराज दूनागिरी के ग्राम देवता हैं। आज भी दूनागिरी गाँव के लोग युगों बीत जाने के बाद भी कौतुकी माता की मृत्यु के लिये हनुमान् को कोसते हैं। इस गाँव में हनुमान् की पूजा-अर्चना नहीं होती। भूले-भटके यदि कोई बन्दर दीख जाता है तो गाँव के लोग उसे हनुमान का वंशज समझकर डार-धमकाकर भगा देते हैं।

जब दुन्दुभि नामक मायावी राक्षस को मारकर बालि ने उसे उछालकर दूर फेंका तो ऋष्यमूक पर्वत पर मतंग मुनि के आश्रम पर उसके लहू का छींटा पड़ा। इस पर क्रोधित होकर मंतंगमुनि ने बालि को शाप दिया कि यदि तू ऋष्यमूक पर्वत पर आयेगा तो मेरे भी सिर के सौ टुकड़े हो जाएँगे। इसी शाप के डर से बालि ऋष्यमूक पर्वत पर नहीं जाता था। इसी पर्वत पर सुग्रीव हनुमान् और अपने मन्त्रयों के साथ निर्वासित जीवन व्यतीत कर रहे थे। यहीं पर हनुमानजी के प्रयास से राम सुग्रीव मैत्री हुई।

एक दिन राजा परीक्षित शिकार खेलने गये हुए थे। वहाँ उन्हें बड़े जोर की भूख और प्यास लगी। इसलिए वे निकटवर्ती शमीक ऋषि के आश्रम में गये। वहाँ आँखें बन्द किये हुए शमीक ऋषि आसन पर बैठे

जाग्रत, स्वप्न और सुषुप्ति इन तीनों अवस्थाओं से परे निर्विकार ब्रह्मरूप तुरीय अवस्था में लीन थे। राजा परीक्षित ने उनसे जल माँगा। जब राजा को वहाँ बैठने को भी किसी ने न कहा, तब स्वयं को अपमानित मानकर वह क्रोधान्ध हो गये। 'उन्होंने धनुष की नोंक से एक मरा साँप उठाकर ऋषि के गले में डाल दिया

और अपनी राजधानी को लौट आये। शमीक मुनि का पुत्र बड़ा तेजस्वी था। जब उस बालक ने सुना कि राजा ने मेरे पिता के साथ दुर्व्यवहार किया है तो उसने 'इन मर्यादा भंग करनेवालों को आज मैं दण्ड देता हूँ' ऐसा कहकर कौशिकी नदी के जल से अपने वाणी रूपी वज्र का यह कहकर प्रयोग किया, 'राजा परीक्षित ने मेरे पिता का अपमान किया है, इसलिए आज के सातवें दिन उसे यह तक्षक सर्प डस लेगा। ध्यान टूटने पर ब्रह्मर्षि भी राजा को शाप दिये जाने की बात सुनकर दुखी हुए। राजा ने वैराग्य धारण कर अपने चित्त को भगवान् के चरणों में समर्पित कर दिया। शुकदेव मुनि तथा अन्य ऋषियों के सान्निध्य में श्रीमद्भागवत कथा सुनते हुए परमधाम को गये।

ब्रह्मा द्वारा मुख्य प्रजापति के पद पर आसीन होकर दक्ष बहुत अहंकारी हो गये। एक बार उनको सम्मानित करने के लिये एक सभा आयोजित की गई जिसमें त्रिदेव सहित सभी देवता उपस्थित हुए। जब दक्ष ने सभागृह में प्रवेश किया तो ब्रह्मा और विष्णु को छोड़कर सभी देवता उनके सम्मान में खड़े हो गये। इधर शिवजी हरिनाम जपते समाधिस्थ थे, जिस कारण उन्हें दक्ष के आगमन का पता नहीं चला। आँखें बन्द किए वे चुपचाप बैठे रहे। इससे दक्ष क्रोधित होकर उन्हें गालियाँ बककर चले गये। दक्ष का पक्ष लेकर महर्षि भृगु ने शैव सम्प्रदाय को हरिभक्ति से रहित होने का शाप दे दिया। उधर शिव के वाहन नन्दीश्वर ने भी अत्यन्त क्रोधित होकर कर्मकाण्डी ब्राह्मणों को वैसा ही शाप दे दिया। इससे संसार के सभी लोग अभिशप्त हो गये। इन बातों से संसार के कल्याणकारी शिवजी अत्यन्त दुखी हो गये। वे आँखें खोलकर बहुत ही मधुर शब्द में कहने लगे कि जो लोग सभी को छोड़कर एकमात्र हरिभजन करते रहेंगे वे भृगु और नन्दीश्वर के शाप से मुक्त रहेंगें।' इतना कहकर शिवजी अपने गणों के साथ कैलाश की ओर प्रस्थान कर गये। दक्ष को सौ पुत्रियाँ थीं। अंतिम पुत्री सती के साथ शिव का विवाह हुआ था। इस कारण शिव दक्ष के जामाता थे।

वृन्दावन में यमुना का एक दह या कुण्ड था। उसके जल में सौभरि ऋषि तपस्या कर रहे थे। एक दिन देवताओं से युद्ध करके जब गरुड़ अमृत कलश लिये जा रहे थे तो उन्हें भूख लगी । वे इस दह के किनारे कदम्ब वृक्ष पर अमृत कलश रखकर इसके जल की मछली पर झपटे। सौभरि ऋषि ने मना किया। लेकिन, गरुड़ महाराज मछली खाये बिना नहीं रुके। ऋषि ने शाप दिया- 'गरुड़, यदि यहाँ फिर आओगे तो तुम्हारी मृत्यु हो जाएगी। ' गरुड़ चले गये। उनका मुख्य आहार था नाग नागों का मुख्य निवास स्थान था समुद्र का रमणक नामक द्वीप। वहाँ जाकर वे हजारों नागों को एक ही बार खाया करते थे। वे लोग बहुत चिन्तित हुए। अन्त में नारद ने पंचायत की। तय हुआ कि प्रत्येक अमावस्या को नाग लोग गरुड़ के लिये एक वृक्ष के नीचे आहार रख देंगे और गरुड़ उसे खाकर सन्तुष्ट होंगे; रमणक द्वीप पर आक्रमण नहीं करेंगे। कुछ दिनों तक यह क्रम जारी रहा किन्तु कालिय नाग बड़ा घमंडी था। उसके सौ फण थे। अपनी शक्ति के मद में गरुड़ के लिये रखा हुआ आहार वह स्वयं खा गया। गरुड़ क्रुद्ध होकर उस पर झपटे। जब कालिय नाग गरुड़ के समक्ष टिक न पाया तो कूदकर समुद्र में भागा। उसे सौभरि ऋषि द्वारा गरुड़ को दिये गये शाप की याद थी। अतः वह वृन्दावन के उस दह में आ पहुँचा। उसका समूचा परिवार भी उसी दह में आकर बस गया।

कालिय नाग के रहने के कारण ही उस दह का नाम कालिय-दह पड़ा। नाग के विष के कारण दह का

पानी इतना विषाक्त हो गया कि यदि कोई उस जल का स्पर्श करता, कोई पक्षी उस दह के ऊपर से उड़ता, किसी को उस दह की हवा लग जाती तो वह मर जाता। उसके तट पर केवल एक कदम्ब - वृक्ष बचा था, क्योंकि गरुड़ ने उसपर अमृत कलश रखा था।

एक दिन कुछ गोप-बालकों और गौओं ने कालिय - दह का पानी पी लिया और तत्काल सभी मर गये। जब कृष्ण को यह समाचार मालूम हुआ तो वे दौड़े। उन्होंने सभी को जिला दिया और कालिय नाग को सदा वश में करने के लिये कदम्ब वृक्ष पर चढ़कर जल में कूद गये। कालिय नाग कृष्ण से हार गया। कृष्ण उसके शिर पर नाचते ऊपर आये। नाग ने क्षमा माँगी और कृष्ण से यह वरदान लेकर कि गरुड़ उसका कुछ बिगाड़ नहीं सकते, अपने परिवार के साथ रमणक द्वीप चला गया।

*

अहल्या महाराज वृद्धाश्व की पुत्री तथा महर्षि गौतम की पत्नी थी। महर्षि गौतम एक प्रसिद्ध ऋषि और दार्शनिक थे। उन्होंने ही 'न्यायशास्त्र' नामक प्रसिद्ध ग्रन्थ की रचना की। वे बाण-विद्या में बड़े निपुण थे। उनकी पत्नी अहल्या सर्वांग सुन्दरी थी। इन्द्र उसपर मोहित हो गया। एक दिन ब्राह्म वेला में गौतम ऋषि गंगा स्नान करने गये। इधर इन्द्र उन्होंका वेश धारण कर उनके आश्रम में आ पहुँचा और अहल्या को भ्रष्ट किया। लौटने पर गौतम ऋषि को जब यह घटना मालूम हुई तो उन्होंने पत्नी को पत्थर हो जाने का शाप दिया तथा इन्द्र को 'सहस्रानन' होने का शाप दिया और इन्द्र के सहायक चन्द्रमा को मृगछाला से मारा। जब रामावतार हुआ तो राम विश्वामित्र के साथ जंगल में मुनियों की रक्षा के लिए गये। एक दिन वे गौतम ऋषि के आश्रम में पहुँचे तो देखा कि सुन्दर आश्रम बिल्कुल वीरान, जनहीन पड़ा है और सामने पत्थर की एक नारी मूर्ति है। राम ने विश्वामित्र से उसका रहस्य जानकर अपने चरण स्पर्श से उसका उद्धार किया। चरण-स्पर्श होते ही अहल्या नारी रूप में जीवित हो उठी और राम की आज्ञा से अपने पति के पास चली गई। राम ने जब राजा जनक के सीता स्वयंवर में शिवधनुष तोड़ा तो उसकी आवाज सुनकर इन्द्र के सहस्रानन गायब हो गये और वह शापमुक्त हो गये।

*

राजा सुद्युम्न अगस्त्य ऋषि को अभ्युत्थान न दे सके। इस कारण उन्हें शाप मिला और उन्हें हाथी के रूप में सागर के मध्य में स्थित द्वीप में रहना पड़ा और वहाँ वरुण के कानन में विचरण करते रहे। एक दिन अजामिल नामक गजेन्द्र को प्यास लगी। वे जलाशय में गये, तभी एक घड़ियाल ने आकर उनका पैर पकड़ लिया। दोनों ओर से खींच-तान होने लगी। एक भीषण युद्ध शुरू हुआ तो दस हजार वर्षों तक चलता रहा। वह मगर कोई मामूली मगर नहीं था। वह गंधर्वराज थे जो देवल ऋषि के शाप से ग्राह बन गये थे। अतः जब गजेन्द्र थक गये, तब उन्होंने भगवान् को पुकारा। भगवान् भक्त की पुकार सुनकर दौड़े आये और सुदर्शन चक्र से ग्राह का वध किया। ग्राह शापमुक्त होकर पुनः हूहू गंधर्व बन गया। गजेन्द्र का उद्धार हुआ। यह घटना गजेन्द्र मोक्ष के नाम से प्रसिद्ध है। जनश्रुति के अनुसार यह घटना बिहार प्रान्त के सोनपुर नामक स्थान में हुई थी। उस अवतार की स्मृति में वहाँ 'हरिहरनाथ' का मंदिर है, जहाँ प्रत्येक वर्ष कार्त्तिक पूर्णिमा के दिन भारत का सबसे बड़ा वार्षिक मेला लगता है।

*

शिवभक्त दधीचि ब्राह्मण की पुत्रवधू दुकूला बड़े दुष्ट स्वभाव की थी, जिसके कारण यह परिवार किसी ग्राम में टिक नहीं पाता था। एक समय दधीचि पुत्र सुदर्शन ने शिवरात्रि को संभोग किया और बिना स्नान किये ही उसने शिवपूजा की। इससे रुष्ट होकर शिवजी ने उसे जड़ हो जाने का शाप दिया। इससे दुखी होकर दधीचि ने पार्वतीजी की स्तुति की जिसपर प्रसन्न होकर

भगवती ने उसे अपना पुत्र बना लिया। पार्वती के अनुरोध पर शिवजी ने अपने चारों पुत्रों को बटुक रूप में चारों दिशाओं में अभिषिक्त कर दिया और यह विधान कर दिया कि बटुक की पूजा के बिना शिव पूजा असफल होगी। इस प्रकार शिवजी चारों दिशाओं में बटुकेश्वर महादेव के रूप में अवस्थित हो गये।

*

चन्द्रमा ने दक्ष की सत्ताइस पुत्रियों से विवाह करके एक मात्र रोहिणी में इतनी आसक्ति और अनुराग दिखाया कि अन्य छब्बीस अपने को उपेक्षित और अपमानित अनुभव करने लगीं। उन्होंने अपने पति से निराश होकर अपने पिता से शिकायत की तो पुत्रियों की वेदना से पीड़ित दक्ष ने अपने दामाद चन्द्रमा को दो बार समझाने का प्रयास किया लेकिन विफल हो जाने पर उसने चन्द्रमा को 'क्षयी' होने का शाप दिया। देवता लोग चन्द्रमा की व्यथा से व्यथित होकर ब्रह्माजी के पास जाकर उनसे शाप निवारण का उपाय पूछने लगे। ब्रह्माजी ने प्रभास क्षेत्र में महामृत्युंजय मन्त्र से वृषभध्वज की उपासना करने के लिये कहा। उपासना करने पर शंकरजी प्रकट हुए और चन्द्रमा को एक पक्ष में प्रतिदिन बढ़ने का उन्होंने वरदान दिया। देवताओं पर खुश होकर उस क्षेत्र की महिमा बढ़ाने के लिये और चन्द्रमा (सोम) के यश के लिये सोमेश्वर नाम से शिवजी वहाँ अवस्थित हो गये। देवताओं ने उस स्थान पर सोमेश्वर कुण्ड की स्थापना की। इस कुण्ड में स्नान कर सोमेश्वर ज्योतिर्लिंग के दर्शन-पूजा से सब पापों से निरस्तार और मुक्ति की प्राप्ति हो जाती है।

इक्ष्वाकुवंशीय राजा मित्रसह द्वारा कमठ असुर का ज्येष्ठ भ्राता मारा गया। इसके बाद प्रतिशोध की भावना से कमठ असुर ने राजा के घर रसोइया की नौकरी कर ली। दुष्ट और कपटी असुर ने कृत्रिम सद्व्यवहार से राजा मित्रसह का विश्वास जीत लिया और उसका प्रधान रसोइया बन गया। एक दिन जब राजा ने अपने गुरु वसिष्ठ को भोजन पर आमंत्रित किया तो उस दुष्ट ने भोजन में आदमी का मांस परोस दिया। वसिष्ठजी जान गये। उन्होंने क्रुद्ध होकर राजा को राक्षस हो जाने का शाप दे दिया। सत्य जानकर वसिष्ठजी ने उस शाप की अविध बारह वर्ष कर दी। इधर राजा गुरु के अनुचित व्यवहार पर क्रुद्ध होकर हाथ में जल लेकर गुरु को शाप देने लगा परन्तु अपनी पत्नी मदयन्ती के समझाने पर रुक गया। राजा ने अपने हाथ का पानी ज्योंही पैरों पर डाला, त्योंही उसके पैर का रंग काला पड़ गया और उस दिन से राजा मित्रसह का नाम 'कल्माषपाद' पड़ गया।

एक बार राक्षस बने कल्माषपाद ने एक तपस्वी मुनि और उसके पुत्र को पकड़ कर फाड़ दिया। मुनि पत्नी ने अपने पति और पुत्र को छोड़ देने की राक्षस से बहुत अनुनय-विनय की लेकिन जब उस राक्षस ने उसकी एक न सुनी तो मुनि-पत्नी ने उसके वंश को निर्मूल करने के लिये शाप दिया कि स्त्री समागम करने पर उसकी मृत्यु हो जाएगी। बारह वर्ष की अवधि व्यतीत होने पर राजा शापमुक्त होकर अपने स्वरूप में आया तो मदयन्ती से समागम करने लगा। उस पतिव्रता को ब्रह्माणी का शाप ज्ञात हो गया, जिससे उसने अपने पति को भोग से विरक्त कर दिया। इससे वह गार्हस्थ जीवन से उदासीन होकर वन में चला गया, लेकिन ब्रह्महत्या ने वहाँ भी पीछा न छोड़ा। उसने अनेक जप-तप, दान व्रत किये लेकिन ब्रह्महत्या उससे चिपटी ही रही। अन्त में वह शिवभक्त गौतम मुनि की शरण में गया तो ऋषि ने उसपर कृपा करते हुए उसे गोकर्ण नामक शिवक्षेत्र में जाकर महाबलेश्वर लिंग की पूजा करने का सुझाव दिया। वहाँ जाकर शिवजी की आराधना करने से राजा ब्रह्महत्या के पाप से मुक्त होकर अन्त में शिवपद को प्राप्त हुआ। शिवजी की पूजा से बड़े-बड़े पातकों से मुक्ति पाकर जीव निर्भीक तथा शिवरूप हो जाता है।

महर्षि वाल्मीकि तमसा नदी के तट पर एक दिन बैठे थे कि एक मिथुनरत क्रौंची करुण विलाप कर उठी।

यह देख महर्षि का हृदय करुणा से भर आया और उन्होंने व्याधा को शाप देते हुए निम्न पंक्तियाँ कही-

मा निषाद प्रतिष्ठान्त्वमगमः शाश्वतीः समाः।
यत् क्रौंचमिथुनादेकमवधीः काममोहितम्॥

(रामायण, बालकाण्ड, 2.15)

वाल्मीकि का शोक ही श्लोक बन गया। अनुष्टुप छन्द में वर्णित हैं उपर्युक्त पंक्तियाँ। महर्षि की कल्याणमयी वाणी सुनकर स्वयं ब्रह्मा उपस्थित हुए और उन्होंने रामचरित लिखने के लिए उनसे कहा। रामायण की रचना इसी प्रेरणा का फल है।

भगवान् ने कौतुक के हेतु अपनी शक्ति को दो भागों में बाँट दिया। उनके वाम भाग से चार भुजाओं वाली रमा प्रकट हुई और दक्षिण भाग से दो भुजाओं वाली राधा । भगवान् स्वयं चतुर्भुज नारायण का रूप धारण करके रमा के साथ गोलोक में विहार करने लगे। कालान्तर में जब भगवान् शंकर के अंशावतार महर्षि दुर्वासा के शाप से भगवान् की श्री नष्ट हो गई, तब सिन्धु पुत्री लक्ष्मी को निकालने के लिये समुद्र-मंथन हुआ। लक्ष्मी निकली और उसने समुद्र मंथन करने वाले भगवान् के गले में कमलों की वरमाला डाल दी। भगवान् ने लक्ष्मी को हृदय में अमर स्थान दिया। लक्ष्मी के ही नाम रमा, श्री आदि हैं। वे ही कमला हैं॥

एक पौराणिक आख्यान के अनुसार ब्रह्मा ने संध्या नामक एक कन्या को उत्पन्न किया। लड़की ज्यों ही पैदा हुई कि ब्रह्मा और उसकी लड़की दोनों के मन को काम ने अपने बाणों से विक्षुब्ध किया। इससे प्रजापति और संध्या दोनों बहुत लज्जित हुए। संध्या ने बाद में घोर तप करके विष्णु से यह वर माँग लिया कि अब से पैदा होते ही किसी आदमी को काम विक्षुब्ध न कर सके। तब से विष्णु ने नियम कर दिया कि काम केवल युवकों का ही मन या हृदय विद कर सकता है ओर क्वचित् किशोर-किशोरियों का (कालिका पुराण. अध्याय 16-22) उपर्युक्त प्रजापति और संध्या की कहानी के अनुसार प्रजापति ने काम को शाप दिया कि वह शिव के नेत्राग्निसम्भूत अग्नि में जले। इसी शापवश काम को शिव की समाधि भंग करने पर उनके त्रिनेत्र की ज्वाला में जलकर भस्म होना पड़ा और यह घटना कामदहन के नाम से प्रसिद्ध हुई।

* * *

शिव के वाहन नन्दी कैसे बने, इसके पीछे एक रोचक शाप कथा है। एक बार की बात है कि पवित्र 'सुरभि' गाय का बछड़ा माँ का दूध पी रहा था। बछड़े के मुख से दूध का झाग अमृत बनकर छलक रहा था। उस बछड़े के क्रीड़ा-कौतुक के क्रम में दूध की कुछ बून्दें शंकर के आनन पर छिटक कर पड़ गयी। शिवशंकर कुपित हो गये। ब्रह्मतेज सम्पन्न ऋषियों ने भगवान् शंकर के अकारण कुपित होने और बछड़े की क्रीड़ा में व्यवधान होते देखकर शिव को शाप दे डाला कि 'जा वृषभ हो जा।' फिर भी शिव का कोप शान्त न हुआ। किन्तु ऋषियों के शाप को तो चरितार्थ करना ही था। इसी कारण शिव गोलोक धाम पहुँचकर माता सुरभि का स्तवन करने लगे। उन्होंने माता सुरभि से प्रार्थना की कि ऋषियों के शाप से मेरा शरीर दग्ध हुआ जा रहा है, मुझे अपने गर्भ में धारण कर शीतलता प्रदान करें। तब सुरभि ने अपने गर्भ में उन्हें धारण कर 'नील' नामक वृषभ को जन्म दिया। इस समय शिव की अनुपस्थिति के कारण जगत् कल्याण का कार्य बन्द होने से चारों ओर हाहाकार मच गया। सभी देवता एवं मुनिगण गोलोक धाम की ओर दौड़ पड़े। वहाँ सभी विभिन्न गायों के मध्य 'नीलवृष' को केलि करते देखकर विविध प्रकार से उनकी प्रार्थना करने लगे।

देवताओं और ऋषियों की प्रार्थना से नीलवृष रूपी भगवान् शिव प्रसन्न होकर अपने रूप में प्रकट हो गये। तभी मुनियों ने मृत प्राणी की सद्गति और मोक्ष प्राप्ति हेतु वृषभ छोड़ने की परम्परा शुरू करने की घोषणा की। प्रजापति ब्रह्मा ने उस अवसर पर प्रकट होकर भगवान् शंकर को असंख्य गायों के साथ वह

वृषभ भी उपहार स्वरूप प्रदान किया। तब भगवान् शंकर ने प्रसन्न होकर उस वृषभ का नन्दी नामकरण करते हुए अपना प्रिय वाहन बनाया और अपने पूजन वृषभ-पूजन अनिवार्य बताया। प्रजापति ने इसके बाद उन्हें वृषभांक और पशुओं के आराध्य 'पशुपति' कहकर पुकारा। तभी से वृषभ (बसहा) पूजन की परम्परा चली आ रही है।

* * *

पुराणों में वर्णित दुर्वासा ऋषि अनसूया के पुत्र थे। इनके पिता का नाम अत्रिऋषि था। कहा जाता है कि माता-पिता ने कठिन तपस्या कर भगवान् शिव के अंश के रूप में इन्हें प्राप्त किया था। सिद्ध पुरुष होने पर भी उन्हें क्रोध बहुत आता था। इनके क्रोध से सभी आतंकित रहते थे। यह एक मनोवैज्ञानिक नियम है कि क्रोधी व्यक्ति दूसरों से अधिक अपनी हानि कर लेता है। दुर्वासा के साथ भी ऐसा ही हुआ। उन्होंने एक बार क्रोध में आकर अपनी पत्नी को ही शाप देकर भस्म कर दिया।

भगवान् श्रीकृष्ण दिव्य विवेक से युक्त होने पर भी दुर्वासा के क्रोध का शिकार बन गये। घटना यूं है कि दुर्वासाजी खीर खा रहे थे और उनके सामने श्रीकृष्ण बैठे थे। अचानक उन्होंने श्रीकृष्ण को आदेश दिया कि वे जूठी खीर अपने शरीर से मल लें। श्रीकृष्ण ने वह जूठी खीर अपने सारे शरीर से मल ली परन्तु यह विचार कर कि ब्राह्मण से मिला प्रसाद अपने पैरों में नहीं लगाना चाहिये; पैरों को छोड़ दिया। दुर्वासा ऋषि ने इसी बात पर क्रोधित होकर उन्हें शाप दे दिया- "जा जिस अंग में तूने खीर नहीं मली है वह अभेद्य नहीं रहेगा।" ऐसी कथा है कि एक शिकारी का तीर पैर में लगने से ही श्रीकृष्ण का स्वर्गवास हुआ।

***

अथर्ववेद में शाप का उल्लेख

[अथर्ववेद संहिता, काण्ड 4, सूक्त 17- अपामार्ग सूक्त, ऋषि- शुक्र, देवता अपामार्ग वनस्पति, छन्द अनुष्टुप्]

या शशाप शपनेन याचं मूरमादधे।
या रसस्य हरणाय जातमारेभे तोकमत्तु सा।।3।।

जो पिशाचिनियाँ क्रोधित होकर शाप देतीं हैं और मूर्च्छित करने वाला पापकर्म करती हैं तथा जो शरीर के रक्त को हरने के लिए नवजात शिशु को भी पकड़ लेती है, वे सब पिशाचिनियाँ अभिचार करने वाले शत्रु के पुत्र को ही खाएँ

श्रीमद्भागवत के द्वितीय खण्ड में शापप्रसंग

शत्रुघ्नश्रीनिवासाचार्य पण्डित शम्भुनाथ शास्त्री 'वेदान्ती'

साहित्य-व्याकरणाचार्य, एम.ए. (संस्कृत),
दीक्षित वैष्णवाचार्य, प्रवचनकर्ता,
सराय यूनिवर्सिटी रोड, (काली मन्दिर) रकाबगंज गली,
(नीमगाछ मजार) भागलपुर।

श्रीमद्भागवत अपनी प्रसिद्धि की दृष्टि से महत्तवपूर्ण है। बारह स्कन्धों के इस महापुराण में दो खण्ड चर्चित हैं- प्रथम स्कन्ध से अष्टम स्कन्ध तक प्रथम खण्ड के रूप में जाना जाता है तथा नवम से द्वादश तक द्वितीय खण्ड के रूप में। श्रीकृष्ण की बाललीला से परिपूर्ण होने के कारण भागवत का सबसे चर्चित अंश दशम स्कन्ध भी यहाँ है। इस अंश में विविध शापकथाएँ हैं, जिनमें अधिकतर देवों के द्वारा प्रदत्त शाप हैं, जिनसे हमेशा जगन्मंगल हुआ है। यह सम्पूर्ण अंक कथात्मक है, अतः ऐसी शापकथाओं में कहने की शैली का अधिक महत्त्व हो जाता है। यहाँ लेखक कथा कहने के अनुभवी हैं अतः हमें आशा है कि पाठकों को यह शैली पसंद आयेगी। यहाँ लेखक ने शाप शब्द का व्याकरण तथा कोष की दृष्टि से अर्थानुसन्धान किया है, जो परम उपादेय है। इससे हमें शाप को गम्भीरता से समझने का अवसर मिलेगा।

'शाप' शब्द का निर्वाचन

भारतीय वैदिक सनातन धर्म के विपुल साहित्य में शाप एवं वरदान की कथाएँ युग-युगान्तरों कल्प-कल्पान्तरों में व्यापक रूप से मिलती है। वेद, उपनिषद पुराण, स्मृतियाँ, महाभारत एवं रामायण एवं लौकिक ग्रन्थ इनके प्रमाण के रूप में आज भी उपलब्ध है। ये शाप एवं वरदान कुछ मंगल तथा कुछ अमंगल कारक भी हैं। त्रिदेव से लेकर देव-दानव मनुष्य, किन्नर, पशु-पक्षी आदि की एतत्सम्बन्धी कथाएँ जागतिक जीवों के मानस पटल को प्रभावित करती रहती हैं।

पाणिनि व्याकरण के अनुसार आक्रोश अर्थ में शप् आक्रोशे धातु से धञ् प्रत्यय करने पर संस्कृत में शाप: (शप्+घञ्) शब्द निष्पन्न होता. है, जिसका सीधा अर्थ होता है दुर्वचन, अवक्रोश, फटकार अभिशाप, सौगन्ध, मिथ्या आरोप शपथोक्ति तथा सौगन्ध।

सिद्धान्तकौमुदीकार भट्टोजिदीक्षित ने तिङन्त भ्वादि एवं तिङन्त दिवादि में प्रकरण में 'शप्' धातु को आक्रोश अर्थ में लिया है। सिद्धान्तकौमुदी में "शप आकोशे" धातु के आक्रोश शब्द का निर्वचन करते हुए लिखा गया है कि आक्रोश शब्द ध्यान को भटकाने का एक साधन है-

आक्रोशो विरुद्धानुध्यानम्। (सिद्धान्तकौमुदी)"

वहीं तिङन्त आत्मनेपद प्रक्रिया प्रकरण में "शप उपालम्भे" उपालम्भ भाव में शपथ के रूप में किया गया है।

शप उपालम्भे। आक्रोशार्थास्वरितेतोऽकर्तृगेऽपि

फले शपथरूपेऽर्थे आत्मनेपदं वक्तव्यमित्यर्थः। कृष्णाय शपते।

(सिद्धान्तकौमुदी तिङन्त आत्मनेपद प्रक्रिया)

आक्रोश शाप का आधार माना गया है। यह भी विभिन्न अर्थों में प्रयुक्त होता है।

अमरकोषकार ने इसके कई अर्थ वाले पर्यायवाची शब्द दिये हैं –

तत्र त्वाक्षारणा यः स्यादाक्रोशो मैथुनं प्रति।
स्यादाभाषणमालापः प्रलापोऽनर्थकं वचः॥[1]

वहीं एक अन्य कोषकार दुर्गाचार्य ने भी आक्रोश को शाप अर्थ में प्रयुक्त किया है-

"क्षरणाक्षरणाक्रोशाः साभिशापाभिमैथुनाः" इति दुर्गः

शब्दार्णवकोष में भी आक्रोश को विभिन्न पर्यायवाची शब्दों से पारिभाषित किया है-

नीचमाक्षारणं यः स आक्रोशो मैथुनं प्रति।

उपर्युक्त कोष संग्रह-सन्दर्भ से यह अर्थ ध्वनित होता है कि जब व्यक्ति क्रोध का आश्रय लेता है तो आक्रोश का आविर्भाव होता है तदनुसार अनर्थक वचन सामर्थ्य से जिस पर आक्रोश होता है उसपर शाप को आरोपित करता है क्योंकि वाणी एक ऐसी शक्ति होती है वह मंगल-अमंगल किये बिना लौटती नहीं है। मैथुनादि संल्लाप में भी प्रतिकूलता की स्थिति में आक्रोश का आश्रय लेकर नायक-नायिका परस्पर आलाप-प्रलाप करते हुए प्रेम प्रणय को प्रदर्शित करते है। कभी-कभी यह आक्रोश प्रेम प्रणय को तोड़ने में सहायक भी होता है।

पुराकाल में सत्यवादी साधक पुरुष जब आक्रोशित होते थे तब उनके मुख से शाप वचन निकल जाते थे जो शापित व्यक्ति का सर्वनाश तक कर देते थे। मैंने अपने गाँव में भी तपोनिष्ठ गृहस्थ महात्मा को देख है। वह कम बोलते थे, जो बोलते थे उस बोली का तत्काल शापित व्यक्ति पर प्रभाव पड़ता था। अर्थात् शाप सदैव विनाशकारी होता है। ईश्वर की कृपा से उससे मुक्ति भी मिलती है।

नवम स्कन्ध

श्रीमद्भागवत के कई स्कन्धों में शापकथायें मिलती है। इस महापुराण की कथा का निर्माण ही राजा परीक्षित की शाप कथा के आश्रय में हुआ है। प्रथम स्कन्ध के अठारहवें अध्याय में राजा परीक्षित ने तपोनिष्ठ समाधि में स्थित शमीक मुनि के गले में मरा हुआ साँप इसलिए डाल दिया कि राजा के जल माँगने पर शमीक ऋषि ने कुछ उत्तर नहीं दिया था। परिणामस्वरूप मुनि के पुत्र शृङ्गी ऋषि ने क्रोध में आकर शाप दे दिया कि आज के सातवें दिन, तक्षक नामक सर्प राजा परीक्षित को डस लेगा जिससे राजा की मृत्यु हो जायेगी। राजा निर्वेदवश शुकदेवजी से भागवत कथा का का श्रवण करते हैं। मृत्यु को जीतकर भगवान् के धाम को प्राप्त होते हैं।

यद्यपि शाप का परिणाम मूल रूप से विनाशकारी है फिर भी वैदिक सनातन धर्म वाङ्मय की विलक्षण वैशिष्ट्य यह है कि शाप अमंगलकारी होते हुए भी साधक की साधना के सामर्थ्य से माङ्गलिक आभ्युदयिक सिद्ध हो जाता है।

मनु-पुत्र पृषध्र को गुरु का शाप

दस मनु-पुत्रों में से एक पुत्र का नाम पृषध्र था। पृषध्र गुरु वशिष्ठ के आश्रम में गौ की सेवा एवं रक्षा में भक्तिपूर्वक लगा हुआ था। प्रायः रात्रि में गोरक्षा निमित्त वीरासन में जगा रहता था। एक दिन रात्रि में घनघोर वर्षा में गाय के समूह में एक सिंह घुस गया। सोयी हुई गौए डरकर इधर-उधर भागने लगी। उस सिंह ने एक गाय को पकड़ लिया। गाय भयभीत होकर चिल्लाने लगी। गाय की चिल्लाहट सुन मनु-पुत्र पृषध्र गाय की रक्षा के उद्देश्य से घने अंधकार में गाय को ही सिंह समझकर तलवार से गाय का सिर काट डाला।

1 अमरकोष 1.6.382

गाय के साथ-साथ तलवार से उस सिंह का भी एक कान कट गया। वह सिंह खून से लथपथ भयभीत होकर भाग गया। शत्रुदमन पृषध्र ने सोचा कि सिंह मारा गया। रात्रि के अवसान होने पर पृषध्र ने देखा कि सिंह तो भाग खड़ा हुआ उसने धोखे में गाय की ही हत्या कर दी। गाय की हत्या हो जाने से उसे अपार दुःख हुआ। कुलपुरोहित वशिष्ठ के पास जाने पर गुरु वशिष्ठ ने पृषध्र को शाप दे दिया कि तुमने गोरक्षा में असावधानी की जिसके कारण, तुम्हारे द्वारा गो-हत्या हो गयी। इसलिए मैं तुम्हें शाप देता हूँ कि तुम इस कर्म से क्षत्रिय नहीं रहोगे, जाओ, तुम शुद्र हो जाओ।

पृषध्रस्तु मनोः पुत्रो गोपालो गुरुणा कृतः।
पालयामास गां यत्तो रात्र्यां वीरासनव्रतः॥3॥
एकां जग्राह बलवान् सा चुक्रोश भयातुरा।
तस्यास्तु क्रन्दितं श्रुत्वा पृषध्रोऽनुससार ह॥5॥
खड्गमादाय तरसा प्रलीनोडुगणे निशि।
अजानन् अहनद् बभ्रोः शिरः शार्दूलशङ्कया॥6॥[2]

× × ×

तं शशाप कुलाचार्यः कृतागसं अकामतः।
न क्षत्रबन्धुः शूद्रस्त्वं कर्मणा भवितामुना॥9॥[3]

गुरु वशिष्ठ से शापित पृषध्र ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करता हुआ अनन्य भाव से भगवान् वासुदेव की भक्ति -साधना में लीन हो गया। इस प्रकार ब्रह्मचिन्तनतत्पर पृषध्र वन चला गया। वहाँ वह धधकते दावानल की अग्नि में अपनी इन्द्रियों को भस्म कर परब्रह्म परमात्मा को प्राप्त हो गया।

एवंवृत्तो वनं गत्वा दृष्ट्वा दावाग्निमुत्थितम्।
तेनोपयुक्तकरणो ब्रह्म प्राप पदं मुनिः॥[4]

अम्बरीष को शाप

श्रीमद्भागवत में शाप से सम्बन्धित एक-से एक विलक्षण कथा के दर्शन प्राप्त होते हैं। प्रायः भगवान् अपने भक्तों की कठिन परीक्षा लेते हैं। राजा अम्बरीष परम ज्ञानी थे। मनु पुत्र नभग से नाभाग और नाभाग से अम्बरीष का जन्म हुआ है। राजा परीक्षित ने शुकदेवजी से यह जिज्ञासा प्रकट की कि राजर्षि अम्बरीष भगवद्भक्ति परायण ब्रह्मज्ञानी थे, तब भी दुर्वासा ऋषि ने उन्हें शाप दे दिया तथा राजर्षि अम्बरीष ने अपनी भगवत्परायणता से उन्हें शाप को भी निष्फल कर दिया। मैं महात्मा अम्बरीष का दिव्य चरित्र श्रवण करना चाहता हूँ।

शुकदेवजी ने कहा कि हे राजन्! अम्बरीष भगवान् श्रीहरि के अनन्य भक्त थे। उनकी आसक्ति राज्यलक्ष्मी में लेशमात्र भी न थी। वे उसे स्वप्नवत् नश्वर समझते तथा प्रतिक्षण भगवत्परायण हो उन्हीं के ध्यान में निमग्न रहते थे।

वासुदेवे भगवति तद्भक्तेषु च साधुषु।
प्राप्तो भावं परं विश्वं येनेदं लोष्ट्रवत् स्मृतम्॥17॥
स वै मनः कृष्णपदारविन्दयो-
र्वचांसि वैकुण्ठगुणानुवर्णने।
करौ हरेर्मन्दिरमार्जनादिषु
श्रुतिं चकाराच्युतसत्कथोदये॥18॥[5]

अर्थात् राजर्षि महात्मा अम्बरीष का मन, उनकी वाणी, श्रोत्र, हाथ पैर आदि सम्पूर्ण इन्द्रियाँ भगवान् की सेवा में लगी रहती थीं। वे सदैव भगवद्भक्ति में ही अपना मन लगाये रहते थे। उनका राज-वैभव में तनिक भी मोह नहीं था। अनेक अश्वमेध यज्ञों में देवता उन्हें प्रत्यक्ष दर्शन देते थे। भगवान् ने उनकी भक्तिपरायणता को देख उनकी तथा उनके राजकीय वैजय की रक्षा हेतु अपना सुदर्शन चक्र नियुक्त कर दिया था।

राजा अम्बरीष की पत्नी अपने पति के समान ही धर्मशील, संसार से विरक्त एवं भक्तिपरायण थीं। भगवान् की प्रेरणा ले राजा अम्बरीष ने अपनी पत्नी के

2 भागवत 9.2.3,5,6
3 भागवत 9.2.9
4 भागवत 9.2.14.
5 भागवत 9.4.17-18

साथ श्रीकृष्ण की आराधना के लिए करने के उद्देश्य से एक वर्ष तक द्वादशी प्रधान एकादशी-व्रत का अनुष्ठान करने का संकल्प लिया। तदनुसार नियमपूर्वक एकादशी व्रत करने लगे।

आरिराधयिषुः कृष्णं महिष्या तुल्यशीलया।
युक्तः सांवत्सरं वीरो दधार द्वादशीव्रतम्॥[6]

उपर्युक्त अम्बरीष चरित्र के उपाख्यान से यह बात स्पष्ट है कि द्वादशी युक्त एकादशी ही व्रती शास्त्रानुमोदित एकादशी व्रत करना का ग्राह्य है न कि दशमी युक्त एकादशी व्रत ।

द्वादशीयुक्त एकादशी व्रत में प्रमाण दिया गया है कि 55 दण्ड से ऊपर दशमी तिथि का मान होने पर अर्थात् छप्पन दण्ड या उससे अधिक दशमी तिथि का माने होने पर एकादशी दशमी विद्या मानी जाती है जो सर्वथा त्याज्य है।[7]

दशमी विद्धा एकादशी व्रत करने से महान दोष होता है। 55 दण्ड को उषः काल कहा जाता है। 56 घड़ी की बेला वरुणोदय काल और 58 घड़ी प्रातःकाल संज्ञा होती है। इससे आगे का काल सूर्योदयकाल होता है। 55 घड़ी से एक भी पल दशमी का मान बढ जाने पर दशमी विद्या एकादशी कही जाती है। दशमी विदा एकादशी त्याग कर द्वादशीयुक्त को ही व्रत करना चाहिए और प्रयोदशी को पारण करना चाहिए।[8] पद्मपुराण उत्तरखण्ड में भी इसी सिद्धान्त का अनुमोदन किया गया है।[9]

विष्णुधर्म में वर्णन आया है कि दशमी विद्धा एकादशी व्रत गान्धारी ने किया था, जिसके परिणामस्वरूप उनके सौ पुत्र नष्ट हो गये-

दशमीं शेषं संयुक्ता गान्धायाः समुपोषिता।
तस्याः पुत्रशतं नष्टं तस्मात्तां परिवर्जयेत्॥

गर्ग संहिता माधुर्य खण्ड में गोपियों की जिज्ञासा के उत्तर में श्रीराधा ने विस्तार से एकादशी के माहात्म्य, व्रत के नियम आदि को समझाया है। श्रीराधा जी के विचार से यदि दशमी पचपन (55) घड़ी (दण्ड) तक देखी जाती है तो वह एकादशी सर्वथा त्याज्य है। इस स्थिति में द्वादशी को ही उपवास करना चाहिए। यदि पल भर भी दशमी से वेध प्राप्त हो तो वह सम्पूर्ण एकादशी त्याग देने योग्य है? ठीक उसी तरह जैसे मदिरा की एक बूंद भी गंगाजल से भरा कलश पड़ जाय तो वह गंगाजल त्याज्य हो जाता है। यदि एकादशी बढ़कर द्वादशी के दिन भी कुछ कालतक विद्यमान हो तो दूसरे दिन वाली एकादशी ही व्रत योग्य है। इस पहली एकादशी को उस व्रत में उपवास नहीं करना चाहिए।

दशमी पञ्चपञ्चाशद् घटिका चेत् प्रदृश्यते।
तर्हि चैकादशी त्याज्या द्वादशीं समुपोषयेत्॥35॥
दशमीपलमात्रेण त्याज्या चैकादशी तिथिः।
मदिराबिन्दुपातेन त्याज्यो गङ्गाघटो यथा॥33॥
एकादशी यदा वृद्धिर्द्वादशी च यदा गता।
तदा परा ह्युपोष्या स्यात्र पूर्वा द्वादशीव्रते॥34॥[10]

उपर्युक्त द्वादशीयुक्त व्रत नियम एकादशी-व्रत करने वाले श्रद्धालुओं के संज्ञान के लिए इसलिए दिया गया है कि प्रकृत प्रसंग में राजा अम्बरीष को एकादशी व्रत पारण के कारण ही ऋषि दुर्वासा का शाप मिला था अर्थात् उनके आक्रोश (शाप) का सामना करना पड़ा था।

6 भागवत: 9.4.26

7 पञ्चपञ्च उषः कालः षट्पञ्चारुणोदयः। अष्टपञ्चभवेत् प्रातः शेषः सूर्योदयः स्मृतः॥

8 अरुणोदय वेलायां दशमी यत्र दृश्यते तत्र एकादशीं त्यक्त्वा द्वादशीं समुपोषयेत॥ अरुणोदयवेलायां दशमी, यदि दृश्यते द्वादश्यामुपवासश्च त्रयोदश्यां तु पारणम्॥ श्रीवैष्णव व्रत-निर्णय)

9 अरुणोदयवेलायां दशमीमिश्रिता भवेत् । तां त्यक्ला द्वादशी युद्धामुपोद विचारयन्। दशमी मिश्रितां तान्तु प्रयत्नेन विवर्जयेत्॥ (पद्मपुराण उत्तरखण्ड)

राजा अम्बरीष सपत्नीक व्रत की समाप्ति होने पर कार्तिक मास में तीन रात का उपवास किया तथा एक दिन यमुनाजी में स्नान कर मधुवन में भगवान् श्रीकृष्ण की विधिवत पूजा की। ब्राह्माणों की सर्व विध पूजा कर धन-धान्य से परिपूर्ण दक्षिणा दी। इसी समय जब द्वादशी तिथि में पारणा का समय अवसान पर था कि तभी शाप और वरदान देने में, समर्थ ऋषि दुर्वसाजी राजा अम्बरीष के यहाँ अतिथि के रूप में पधारे। ऋषि दुर्वासा जी को उच्चासन पर बिठा कर विविधि सामग्रियों से उनकी सविधि पूजा की और भोजन के लिए प्रार्थना भी। राजा अम्बरीष की प्रार्थना स्वीकार कर ऋषि दुर्वासा यमुना के पवित्र जल में स्नान करने के लिए प्रस्थान किया। उधर द्वादशी, केवल घड़ी भर शेष रह गयी थी। धर्मसंकट में पड़े महात्मा अम्बरीष ने ब्राह्मणों परामर्श से जल से पारणा कर लिया तथा ऋषि दुर्वासा के आने की प्रतीक्षा में बाट देखने लगे।

दुर्वासाजी आवश्यक कर्मों से निवृत्त होकर यमुनातट से लौटे तो राजा को देखते ही समझ गये कि अम्बरीष ने मुझे बिना भोजन कराये, पारण कर लिया। उस समय दुर्वासा जी बहुत भूखे थे। उनका क्रोध, सातवें आसमान पर सवार हो गया। वो क्रोध से थड़-थड़ काँपने लगे। ऋषि दुर्वासा राजा अम्बरीष पर आक्रोश में में क्रोध की वर्षा करने लगे। व्याकरण में कहा गया है कि आक्रोश ही शाप की प्रथम दशा है। शप् धातु का सीधा अर्थ आक्रोश ही तो होता है। शाप की मुद्रा में ऋषि दुर्वासा ने अपनी जटा उखाड़ी और उससे अम्बरीष को मारने के लिए कृत्या को उत्पन्न किया। वह कृत्या प्रलयकाल की आग के समान दहक रही थी। हाथ में तलवार लेकर महात्मा अम्बरीष पर टूट पड़ी किन्तु राजा अम्बरीष उसे आते देख अभय मुद्रा में खड़ा रहा। परम पुरुष परमात्मा में पहले से नियुक्त सुदर्शन को आदेश दिया कि महात्मा अम्बरीष की सर्वविध रक्षा हो ।

भगवान् के सुदर्शन चक्र ने देखते ही देखते पलभर में कृत्या में भस्म कर डाला। अनन्तर वह सुदर्शन चक्र ऋषि दुर्वासा की ओर जैसे ही बढ़ा वे घबराकर अपने प्राणों की रक्षा के लिए बड़ी तेजी से भागे। चक्र ने भी उनका पीछा नहीं छोड़ा। वे आकाश, पाताल, स्वर्ग, मृत्युलोक आदि सभी लोकों में घूमते हुए ब्रह्मा तथा रुद्र के समीप गये, किन्तु कोई भी देवता चक्र से उनकी रक्षा न कर सका। विवश हो दुर्वासा भगवान् शिव के संकेत से भागकर विष्णु के ही चरणों में गिरकर उनसे अपनी रक्षा के लिए प्रार्थना करने लगे। भगवान् ने कहा कि हे महर्षे! मैं तो भक्तों के अधीन हूँ मुझे तनिक भी स्वतंतन्त्रता नही है। मेरे सीधे, साधे सरल भक्तों ने मेरे हृदय को अपने हाथों में कर रखा है। भक्तजन हमसे प्यार करते है और मैं उनसे प्यार करता हूँ।

अहं भक्तपराधीनो ह्यस्वतन्त्र इव द्विज।
साधुभिर्ग्रस्तहृदयो भक्तैर्भक्तजनप्रियः॥[11]

भगवान् श्रीहरि ने दुर्वासा से कि कहा कि सुनिये। मैं आपको इस संकट से उबरने का एक उपाय बताता हूँ। जिसके अनिष्ट करने के कारण आपको इस विपत्ति में पड़ा है, आप उसी के पास जाइये। निरपराध साधुओं के अनिष्ट की चेष्टा से अनिष्ट करनेवाले का ही अमंगल होता है-

उपायं कथयिष्यामि तव विप्र शृणुष्व तत्।
अहं ध्यात्माभिचारस्ते यतस्तं यातु वै भवान्॥
साधुषु प्रहितं तेजः प्रहर्तुः कुरुते शिवम्॥59॥[12]

उस प्रकार दुर्वासा भगवान् की आशा पाकर महात्मा अम्बरीष के पास आकर उनके चरण पकड़ लिए। राजा अम्बरीष महात्मा स्वभाव के व्यक्ति थे। उन्हें दया आ गयी और दुर्वासा के चरण पकड़ने से वह लज्जित होकर सुदर्शन चक्र की विस्तार से स्तुति करने लगे। राजा की स्तुति से सुदर्शन चक्र शान्त हो गुये और महर्षि दुर्वासा भी दुःख से निवृत्त हो गये।

10 श्रीगर्गसंहिता माधुर्य खण्ड (8/32-34 11 भागवत 9/4/63

वैष्णव आगम में सुदर्शन स्तवन का बड़ा महत्त्व है। यह अमोघ अस्त्र के रूप में जाना जाता है। जैसे ग्रह-गोचरों को शान्त कर मृत्यु से उबरने के लिए शैवागम (तन्त्र) में महामृत्युजय मन्त्र का अनुष्ठान किया जाता है। वैसे ही वैष्णव आगम (तन्त्र) में "'सुदर्शन शतक" का कवच सहित पाठ अनुष्ठानपूर्वक करने से मनुष्य मृत्यु की आदि अनिष्ट के संकटों से बच जाता है। भागवत में अम्बरीष द्वारा सुदर्शन चक्र की की गयी स्तुति के पाठ करने से कठिन विपति से उबर जाता है। इसलिए इस पाठ को मनोयोग से अनुष्ठानपूर्वक करना चाहिए।

इसके पश्चात् अम्बरीष दुर्वासा ऋषि को भोजन कराकर सपरिवार भोजन करते है राजा को अनेक विधि से प्रशंसा पूर्वक आशीर्वाद देकर महर्षि दुर्वासा ब्रह्मलोक चले गये।

उपर्युक्त उपाख्यान से यह निष्कर्ष निकलता है, जो ईश्वर की भक्ति करता है उसका शाप आदि देने में प्रवीण दुर्वासा आदि अनिष्ट करने वाले महर्षि भी कुछ बिगाड़ नहीं सकते।

दशम स्कन्ध

श्रीमद्भागवत महापुराण के दशम स्कन्ध में भगवान् ने पूर्व जन्म के शाप के कारण विभिन्न योनियों, जन्म ग्रहण कर कष्ट भोग रहे अनेक जीवों यथा - हूहू, गन्धर्व, मानव आदि का उद्धार किया है।

तृणावर्त एवं शकटासुर का उद्धार

(क) तृणपर्वत- दशम स्कन्ध में कथा है कि कंस द्वारा प्रेषित तृणावर्त नामक दैत्य को वायु के रूप में धूलि से सम्पूर्ण गोकुल को आच्छादित कर दिया। मौका पाकर वह लाला कृष्ण को आकाश में उड़ा ले गया और वहीं' से लाला कृष्ण को नीचे गिराकर मारना चाहा, किन्तु बालरूप भगवान् श्रीकृष्ण ने आकाश में ही गला दबाकर मार डाला। धरती पर गिरते ही लाला उसकी छाती पर खेल रहे थे। भगवान् की ऐसी अद्भुत लीला देख आकाश से देवगण पुष्प की वर्षा करने लगे।

पूर्वजन्म का शाप- पुराणों के अनुसार तृणावर्त पाण्ड्य देश का प्रभावशाली राजा सहस्राक्ष था। मन्धमादन पर्वत पर स्त्रियों के साथ बिहार करने के समय महर्षि दुर्वासा के आने पर उनका उचित सत्कार नहीं किया कि उसी पर दुर्वासा मुनि ने इसे शाप दे दिया और कहा कि जा 'तू असुर हो जा'। प्रार्थना करने पर मुनि ने कहा- कि द्वापर में भगवान्, तेरा उद्धार करें।-

दृष्ट्वा चुकोप नृपति शशाप स्फुरिताधरः।
असुरो भव पापिष्ठ योगाद् भ्रष्टो भुवं भजे॥[13]

शकटासुर को शाप तथा उद्धार

राजा परीक्षित को श्रीमद्भागवत कथा सुनाने के क्रम में शुकदेवजी शकटासुर द्वारा भगवान् बालकृष्ण की हत्या की निष्फल योजना और शकटासुर के उद्धार की कथा कहते हुए कहते हैं कि हे राजन्! एक दिन जब लाला कृष्ण का अंगपरिवर्तन हो रहा था तभी भगवान् के जन्म-नक्षत्र के उपलक्ष्य में महोत्सव हो रहा था। लाला के अभिषेक के बाद पश्चात् स्वस्तिवाचन करने वाले ब्राह्मणों को विपुल दक्षिणों देकर विदा किया गया। यशोदा मैया ने लाला के आँख में नींद आती देख शकट के नीचे ही झूले पर लाला को धीरे-धीरे-सुला दिया। उसी शकट में कंस द्वारा भेजा गया असुर गाड़ी में घुसकर भगवान् को मारने की इच्छा से बक द्वारा पहियों को पृथिवी में धँसाने लगा। इसी बीच लाला दूध पीने की इच्छा से रोने लगे। यशोदा आगुंतकों के स्वागत में व्यस्तता के कारण सकी। शकट लाला के रोने की आवाज न सुन में प्रविष्ट असुर में बड़े वेग से जैसे ही गाड़ी को नीचे धँसाने लगा भगवान् ने अपने छोटे से पैर शकट में ऐसा मारा कि शकट भयंकर शब्द करता हुआ पृथिवी पर गिर पड़ा वह असुर गाड़ी के सहित चकनाचूर होकर मर गया।

12 भागवत : 9.14.69

13 ब्रह्मवैवर्तपुराणम् : श्रीकृष्णजन्मखण्ड, 11.23.

पूर्वजन्म का शाप- यह शकटासुर हिरण्याक्ष का पुत्र उत्कच नाम का दैत्य था। उसने महर्षि लोमश मुनि के आश्रम में आकर वहाँ के वृक्षों को पूर्णकर डाला। विशालकाय महाबेली उस देत्य की इस उदण्डता से कुछ होकर मुनि लोमश ने उसे शाप दे डाला कि- जा, तेरा, शरीरपात हो जाय। यह सुन वह मुनि के चरणों पर गिर पड़ा और उसने अपराध हेतु क्षमा याचना की। दयालु मुनि ने कहा- तेरा वायवीय शरीर होगा और वैवस्वत मन्वन्तर में भगवान् के चरण स्पर्श से तेरी मुक्ति होगी।

वातदेहस्तु ते भूयाद् व्यतीते चाशुषान्तरे।
वैवस्वतान्तरे मुक्तिगविता च पदा हरेः॥[14]

यमलार्जुन वृक्ष के रूप में नल-कूबर और मणिग्रीव का उद्धार

भागवत के दशम स्कन्ध के दसवें अध्याय में कथा है कि राजा परीक्षित ने महामुनि शुकदेव जी से पूछा कि हे भगवन् कृपाकर यह बतलाइये कि नलकूबर और मणिग्रीव को आप क्यो मिला। उनदोनों ने ऐसा कौन सा निन्दित कर्म किया था जिसके कारण परमै कान्तिक शान्त देवर्षि नारदजी को भी क्रोध में शाप देना पड़ा।

कथ्यतां भगवन्नेतत् तयोः शापस्य कारणम्।
यत्तदविगर्हितं कर्म येन वा देवर्षेस्तमः॥[15]

शुकदेव जी ने कहा कि हे राजन! नलकूबर और मणिग्रीव पूर्व जन्म में रुद्र के अनुचर थे। उन दोनों को रुद्र का अनुचर होने का बड़ा अहंकार हो गया था। एक समय कैलास के सुन्दर उपवन में मदिरा पीकर उन्मत हो अप्सराओं के साथ मन्दाकिनी के तट पर जा पहुँचे। वहाँ उनके साथ जलक्रीडा करने लगे। देवयोग से उसी समय नारदजी वहाँ आ पहुँचे। श्री देवर्षि नारदजी को देखकर उन अप्सराओं ने लज्जित हो जल से निकलकर शीघ्र अपने-अपने वस्त्र पहन लिए किन्तु, वे दोनों नग्नावस्था में ही इधर-उधर घूमते रहे! ऐसी दशा देख नारदजी को क्रोध आ गया और उन दोनों को शाप देते हुए कहा कि संसार में बुद्धि को भ्रष्ट करने वाला जैसा श्रीमद है वैसा सत्कुल में जन्म तथा विद्या आदि को मद नहीं। लक्ष्मी की अधिकता होने पर मनुष्य में तीन व्यसन स्वाभाविक हो जाते हैं- मद्यपान, परस्त्रीगमन, और द्यूतक्रीड़ा। ऐसा प्राणी अभिमान, वंश अपने स्वरूप को भूल जाता है।

इस प्रकार नारदजी के उपदेश को सुनकर वे दोनों कुबेर के पुत्र होकर भी इतने उन्मन्त हैं कि इन्हें अपने नग्नत्व का भी ज्ञान नहीं रहा और वृक्ष के समान निरावरण हो ठूँठ से स्तब्ध खड़े रहे। तब नारद जी ने विवश होकर शाप दे डाला कि ये दोनों वृक्षयोनि को प्राप्त हो जाये, किन्तु मेरे प्रसाद से इन्हें शाप की स्मृति बनी रहेगी। दिव्य सौ वर्ष के बाद ये भगवत्कृपा से शाप मुक्त होकर स्वर्ग में देवत्व को प्राप्त हो जायेंगे। नारदजी के चले जाने पर ये दोनों यमलार्जुन बन गये। नारदजी के वचन सत्य करने के उद्देश्य से भगवान् ने बाललीला के क्रम में उलूखल खींचते हुए यमुनातटवर्ती दोनों वृक्षों में ठोकर मारकर उन दोनों का उद्धार किया। वृक्ष के टूटकर गिरते ही दोनों दिव्य देवता के रूप में प्रकट हुए अनेक प्रकार से भगवान् की स्तुति कर अलकापुरी की ओर चल दिये।

श्रीमद्भागवत में पूर्व से शापित जीवों का उद्धार

1. वत्सासुर- पूर्वजन्म में मुर नामक कु असुर का पुत्र प्रमील नामक एक भयानक दैत्य था वशिष्ट ऋषि के आश्रम में ब्राह्मण रूप धारण कर नन्दिनी गाँव की माँग की वहीं पर नन्दनी ने नकली भेष धारण करने पर उसे शाप दिया कि तुम दैत्य होकर ब्राह्मण का वेष बनाकर गौ लेने आया है इसलिए जा तू गौवत्स हो जाय।

मुनीनां गां समाहर्तुं भूत्वा विप्रः समागतः।
दैत्योऽसि मुरुजस्तस्माद्गोवत्सो भव दुर्मते॥27॥[16]

14. गर्गसंहिता : गोकुल खण्ड 14.23 15. भागवत 10.10.1 15 गर्ग संहिता वृन्दावन खण्ड, 5।27

उपर्युक्त वत्सासुर का उद्धार भगवान् बालरूप श्रीकृष्ण ने किया।

2. वकासुर- वक नामक असुर। बालकृष्ण को वगुला रूपधारी असुर ने निगल लिया। भगवान् ने उसके दोनों चंचु पुट पकड़ लिए और पटेरा तृण की तरह बीच से उसका मुँह फाड़ दिया। वह धराम से पृथ्वी पर गिर कर मर गया।

पूर्वजन्म का शाप- यह बकासुर पूर्व जन्म में हयग्रीव का पुत्र उत्कल नामक दैत्य था। उसने संग्राम में देवाताओं को जीतकर इन्द्र का छत्र और राजाओं को राज्य ले लिया तथा वह शासन करने लगा। एक दिन वह घूमते-घूमते सिन्धु संगम पर जाजलि मुनि के आश्रम में जा पहुँचा। वहाँ वह जल में से वंसी के द्वारा मछलियों का खींच-खींचकर खाने लगा। मुनि के निषेध करने पर भी जब नहीं माना तब मुनि ने उसे शाप दे दिया कि रे नीच! तुम वक के समान मत्स्यों को खाता है इसलिए वक हो जाय।

तस्मै शापं ददौ सिद्धो जाजलिर्मुनिसत्तमः।
बकवत्त्वं झषानत्सि त्वं बको भव दुर्मते॥34॥[17]

इसी प्रकार अघासुर आदि अनेक शाषित असुरों ग्रन्धर्वो का भगवान् ने उद्धार किया।

एकादश स्कन्ध

यादवों को ऋषियों का कठोर शाप

इस स्कन्ध के प्रथम अध्याय में ही यह कथा है। राजा परीक्षित ने पूछा- हे मुनिवर यदुवंशी तो ब्राह्मण भक्त एवं भगवान् के कृपापात्र थे। उनमें बड़ी उदारता भी थी। उनका चित सदैव भगवान् श्रीकृष्ण मैं लगा रहता था, फिर उनसे ब्राह्मणों का अपराध कैसे हुआ? तथा ब्राह्मणों ने उन्हें किस कारण से शाप दिया? हे भगवत् प्रेमी विप्रवर! उस शाप का क्या कारण था तथा क्या स्वरूप था। कृपया यह सब हमें समझाकर बताने की कृपा करें-

श्रीराजोवाच
ब्रह्मण्यानां वदान्यानां नित्यं वृद्धोपसेविनाम्।
विप्रशापः कथमभूद्वृष्णीनां कृष्णचेतसाम्॥8॥
यन्निमित्तः स वै शापो यादृशो द्विजसत्तम।
कथमेकात्मनां भेद एतत्सर्वं वदस्व मे॥9॥[18]

शुकदेवजी ने राजा परीक्षित की जिसासा के उत्तर में हे राजन्! पूर्णकाम भगवान् सर्वासुन्दर श्यामसुन्दर दिव्य विग्रह धारण कर अपने अभिनव मङ्गलमय चरित्रों से नित्य द्वारकावासियों के आनन्द का संवर्द्धन कर रहे थे। एक दिन उन्होंने स्वाभाविक अपने इस कुल के संहार की इच्छा की जो उनके इस अवतार का अन्तिम प्रयोजन था। यह भगवान् की ही एक प्रेरणा थी कि वशिष्ठ, विश्वामित्र दुर्वासा, अङ्गिरा, नारद आदि बहुत से बड़े -बड़े महर्षि द्वारका के समीपवर्ती पिण्डारक क्षेत्र में आ पहुँचे थे। देव की इच्छा का यह भी एक उन्मेष था कि क्रीडाप्रिय यदुवंशी बालकों को पूजनीय वृद्ध महर्षियों से उपहास करना सूझा।

बिभ्रद्वपुः सकलसुन्दरसन्निवेशं
कर्माचरन्भुवि सुमङ्गलमाप्तकामः।
आस्थाय धाम रममाण उदारकीर्तिः
संहर्तुमैच्छत कुलं स्थितकृत्यशेषः॥10॥[19]

एक दिन की बात है कि यदुवंशियों ने जाम्बवती के पुत्र साम्ब नामक एक कुमार को सुन्दर स्त्री का वेष बनाकर पिण्डारक क्षेत्र में पधारे वसिष्ठ, भी विश्वामित्र, दुर्वासा आदि मुनियों के समीप ले गये और उनके चरण-स्पर्श कर अविनीत होते हुए भी बड़े विनीत भाव से बोले- हे मुनियों? यह स्त्री गर्भवती है। इसका प्रसव शीघ्र होने वाला है। आप सभी त्रिकालदर्शी महात्मा संयोगवश उपस्थित हुए हैं। कृपया यह बताने का कष्ट करें कि इसके गर्भ से ऐसे कन्या होगी या पुत्र? मुनिलोग बालकों के ऐसे व्यंग्यपूर्ण

17. गर्गसंहिता वृन्दावन खण्ड, 5.34
18 भागवत, 11.1.8-9)
19 भागवत /11/1/10

उपहास पर कुपित हो उठे जो शाप का रूप धारण कर लिया। उन्होंने आवेश में आकर कहा कि अरे मुर्खों? यह तुम्हारे कुल का नाश करने वाले मूसल पैदा करेगी।

एवं प्रलब्धा मुनयस्तानूचुः कुपिता नृप।
जनयिष्यति वो मन्दा मुसलं कुलनाशनम्॥16॥ [20]

मुनियों के इस प्रकार के वचन सुनकर सभी यदुवंशी बालक किं कर्त्तव्य विमूढ़ हो घबरा गये। उनलोगों के मन में यह बात बैठे गयी कि ऋषि मुनियों के वचन झूठे नहीं' होते। उन्होंने इसके परीक्षण के लिए शीघ्र ही साम्ब का पेट खोला तो उसमें से लोहे का भयंकर मूसल निकल पड़ा। इस मूसल को देखते ही सभी लड़के पश्चात्ताप से सिर झुकाये समसूल उग्रसेन की सभा में गये और वहाँ जाकर उनसे सारा वृतान्त कह सुनाया। सभी यादवगण ब्राह्मणों का अमोघ शाप सुनकर भय से कम्पित हो उठे। राजा उग्रसेन ने अपने बौद्ध बल से बड़ी तत्परता के साथ उस मूसल का चूर्ण कराकर समुद्र में फेंकवा दिया किन्तु घिसते-घिसते फिर भी उसका एक छोटा सा लोहे का टुकड़ा शेष रह ही गया। उसे भी न्यून समझकर पुन: समुद्र में फेंकना दिया। दैवयोग से एक मछली उस लौह खण्ड को निगल गयी और घिसा हुआ चूर्ण तरंगों से बहता हुआ किनारे पर ही जम गया। उससे सरकण्डे के समान तीक्ष्ण धारवाले लम्बे-लम्बे पटेरा नामक तृण (घास) उत्पन्न हो गये जो खड़ग का काम करते थे। मल्लाहों ने अन्य मत्स्यों के साथ उस मत्स्य को भी जाल में फँसाकर जब उसका पेट चीरा तो उससे लोहे का वही टुकड़ा निकला। जरा नामक व्याघ ने लोहे के टुकड़े से अपने वाण का अग्रभाग बनाया था और शिकार खेलते समय उसने यही बाण धोखे से अनजान में भगवान् श्रीकृष्ण के सुकोमल चरणों में मारा था। यदुवंशी कुमारों ने लज्जा और भय से यह समाचार श्रीकृष्ण तक नहीं पहुँचाया फिर भी सर्वेश भगवान् ने इसे जान ही लिया और सर्वसमर्थ होते हुए भी कभी कालरूपी बनकर महर्षियों के इस शाप को अन्यथा नहीं किया हृदय से स्वीकार कर उसका सहर्ष अनुमोदन किया। यही उनकी दया भी थी। बताया जाता है कि श्रीकृष्ण के पुत्र पौत्र करोड़ों की संख्या में हुए थे।

दशम स्कन्ध के 90 अध्याय में परीक्षित को शुकदेव जी यदुवंशियों की कुल परम्परा को बताते हैं कि यदुवंशियों के बालकों को शिक्षा देने के लिए कुल तीन करोड़ अट्ठासी लाख आचार्य (शिक्षक) थे। ऐसी स्थिति में यदुवंशियों की संख्या बताना असम्भव-सा प्रतीत होता है। स्वयं महाराज उग्रसेन की सभा में एक नील (10000000000000) लगभग सैनिक रहते थे। भगवान् अपनी लीला के द्वारा यदुवंशियों की बुद्धि को हर ली। ऋषियों के शाप के कारण मुसल के लौहखण्ड से जमे सरकण्डे से आपस मार-पीट कर शराब के नशे में उन्मत्त हो कर मर गये।

***

20 भागवत /11/1/16

जब ब्रह्मा भी शापग्रस्त हुए

श्री महेश शर्मा 'अनुराग'
18.स्नेह नगर,सुभाष नगर के पास, उज्जैन, मध्यप्रदेश पिन 456010

भारतीय शापकथाओं की विशेषता है कि यहाँ शाप और वरदान के स्रष्टा ब्रह्मा भी स्वयं शापग्रस्त हो जाते हैं। यह उदाहरण हमें स्पष्ट रूप से संकेतित करता है कि प्रतिबद्धता जहाँ भंग होती है, वहाँ शाप प्रवृत्त होता है। सावित्री के आने की प्रतीक्षा न कर जब ब्रह्माजी ने भी गायत्री को यजमान-पत्नी के रूप में बैठाकर यज्ञ करने लगे तो सावित्री ने शाप दे दिया। एक अन्य कथा में ब्रह्माजी ने पुत्र नारद को शाप दिया तो नारदजी ने भी ब्रह्मा को शाप दिया। इन कथाओं को पढ़ने पर स्पष्ट प्रतीत होता है कि जहाँ कहीं भी अनुचित होता है वहाँ शाप की प्रवृत्ति होती है, अतः यह एक प्रकार का वाग्दण्ड है, जो देवों, ऋषियों तथा मुनियों के मुख से निःसृत होने के कारण अवश्यम्भावी फल देता है। बाद में, इन शापों के कारण कई ऐसे कार्य सिद्ध हो जाते हैं, जो अन्ततः संसार के उपकार के लिए होते हैं। ब्रह्मा से सम्बन्धित शापों का यहाँ संकलन किया गया है।

यदि हम हमारे वेद, पुराणादि बच्चों का गम्भीरता से अवलोकन/विश्लेषण करें तो वरदान और शाप की परम्परा के अविष्कारक लोकस्रष्टा प्रजापति ब्रह्मा ही है। चूँकि में सभी जीवों के जन्म के साथ उनके भाग्य विधाता भी है, अतः उन्हें ज्ञात है कि कर्म सिद्धांत अनुसार किरो वरदान देकर अनुग्रहित करना और किसे शाप देकर दण्डित। उन्हीं की परम्परा में उनके मानस पुत्रों ने शाप आदि की परम्परा आगे बढ़ाई। हमारे देश में जगत भ्रष्टा ब्रह्माजी की कहीं पर भी चर्चा होने पर एक वाक्य लोकोक्ति की तरह बहुप्रचारित है- 'ब्रह्माजी की सर्वत्र पूजा नहीं होती है और तीर्थराज पुष्कर में उनका मंदिर है।"

सावित्री का शाप

वरदान और शाप के अविष्कारक और अधिष्ठाता ब्रह्माजी को मिले लोक में अपूजित होने के शापों में सर्वप्रथम विवेचनीय और उल्लेखनीय उन्हीं की पत्नी तथा सावित्री मन्त्र/गायत्री मन्त्र की अधिष्ठात्री लोकमाता सावित्री द्वारा दिया गया शाप। पद्मपुराण के सृष्टि खण्ड में पुष्कर महिमा के प्रसंग में बहुत ही विस्तार से पूरी कष्णा महिमा मण्डित है। हुआ यूँ कि ब्रह्माजी ने लोक-कल्याण हेतु एक बृहद् यज्ञ आयोजन किया जिसमें भगवान् विष्णु, भगवान् शिव, देवराज इन्द्र के साथ उनकी सृष्टि के राणी देव, दानव व करोड़ों ऋषि आदि उपस्थित हुए। बिना पत्नी के यज्ञ सम्पन्न नहीं होता। मुहूर्त आने पर महर्षि पुलत्स्य ने पिता

ब्रह्माजी को माता सावित्री को आमन्त्रित करने हेतु कहा। देवर्षि नारद षोडश मातृकाओं मे प्रतिष्ठित देवी सावित्री को आमन्त्रित करने गए तब सावित्री जी ने कहा— अभी मेरी सखियाँ लक्ष्मी, पार्वती, शची, अरुन्धती आदि को तो आने दो मैं उनके साथ आ रही हूँ। मुहूर्त में आक्षेप होने से ब्रह्माजी ने गोप-बाला गायत्री से गान्धर्व विवाह सम्पन्न कर यज्ञ प्रारम्भ कर दिया। सावित्री जब तैयार होकर आई और पत्नी स्थान पर अन्य स्त्री को देखकर भयंकर रूप से क्रोधित हो गई। असहनीय पीड़ा के वशीभूत देवी सावित्री ने ब्रह्माजी को शाप दे दिया-

यदि मेऽस्ति तपस्तप्तं गुरुवो यदि तोषिता ।
सर्वे ब्रह्मसमूहेषु स्थानेषु विविधेषु च॥
नैव ते ब्राह्मणाः पूजां करिष्यति कदाचन।
ऋते तु कार्तिकीमेकां पूजा सांवत्सरी तव॥
करिष्यति द्विजाः सर्वे मम नान्यत्र भूतले॥[1]

अर्थात यदि मैंने तप किया है और गुरुओं को संतोष प्रदान किया है तो आज से ब्रह्मसमूह में ब्राह्मण आपकी पूजा नहीं करेंगे। आपकी पूजा केवल कार्तिक माह और सांवत्सरिक पूजा ही होगी। इसी के साथ दूसरी पत्नी गायत्री से विवाह में जिन-जिन देवताओं ने सहायता की भी उन्हें भी सावित्री देवी ने शाप में दिए ।

सवित्री जी ने शाप दिये और ब्रह्माजी की दूसरी पत्नी गायत्री ने वरदान दे दिए। इस प्रकार एक प्रकार से यह क्षतिपूर्ति हो गई। वेदमाता गायत्री ने जिन्हें सावित्रीजी ने शाप दिये, गायत्रीजी ने वरदान देते हुए कहा-

मदीयं तु वचः श्रुत्वा ये करिष्यति चार्चनम्॥
इह भुक्त्वा तु भोगाँस्ते परत्र मोक्षभागिनः।
एतां ज्ञात्वा परां दृष्टिं वरं तुष्टः प्रयच्छति॥[2]

अर्थात् मेरे वरदान अनुसार जो ब्राह्मण प्रजापति ब्रह्मा की पूजा करेंगे वे इस लोक में समस्त भोगों को भोग कर परलोक में मोक्ष प्राप्त करेंगे।

यही नहीं, सावित्री माता के शाप के विरुद्ध सकारात्मक पहल के परिणामस्वरूप गायत्री देवी ने वरदान स्वरूप यह जयघोष कर दिया कि कृष्णार्चन और लिंगार्चन से भी श्रेष्ठ है ब्रह्माजी का दर्शन। इसप्रकार, ब्रह्माजी के पूजन का विषय तो अत्यन्त गहन और विस्तृत विचार विमर्श का आधार है। उनका दर्शन तो दर्शन ही पर्याप्त है।

जिस प्रकार, हम अपनी बढ़ती हुई आयु के साथ वर्तमान स्थिति को विश्लेषित करते हैं तो हम पीछे जाते हैं और हमें अपना बचपन के कई विविधरंगी क्षण दिखाई देते हैं उसी प्रकार 'त्रिपुरा-रहस्य' ग्रन्थ के बाद इसी के आधार पर पहली बार ये रहस्योद्घाटित हो रहा है।

आज अध्यात्म, धर्म और संस्कृति के विश्वकोष 'धर्मायण' के माध्यम से मैं उस रहस्य को उजागर करूँगा कि किन कारणों से ब्रह्माजी और देवी सावित्री ने एक दूसरे को शाप प्रदान किए और देवी गायत्री के अवतार का क्या आधार था।

'त्रिपुरारहस्य' ग्रन्थ के 48 वें अध्याय अनुसार एक बार ब्रह्मलोक में ब्रह्माजी के पास विराजित देवी सावित्री की भगवान् विष्णु स्तुति गान कर रहे थे, काल की गति विचित्र है ब्रह्माजी ने इस स्तुति का उपहास कर दिया, जिससे देवी सावित्री कुपित हो गई और ब्रह्माजी को कहा कि ये आपको शोभा नहीं देता। तब ब्रह्माजी ने तर्क दिया कि पति ही पत्नि का सर्वस्व होता है मुझ पर कोप उचित नहीं । ब्रह्माजी ने देवी सावित्री को शाप दे दिया आज के बाद मेरे साथ यज्ञ में नहीं बैठ सकोगी। तब देवी सावित्री ने भी ब्रह्मा जी को प्रतिशाप

1 पद्मपुराण, सृष्टिखण्ड, 17.151-153, महादेव चिम्नाजी सम्पादक), आनन्दाश्रम संस्कृत सीरीज, 1894ई., पृ. 867
2 पद्मपुराण उपरिवत्, पृ. 871, श्लोक 260-61

दे दिया कि यदि मैं नहीं बैठूँगी तो कोई शूद्र कन्या बैठेगी। साथ ही यह भी शाप दिया कि शुद्ध कन्या की स्थिति में आपको मेरा शाप याद नहीं रहेगा। ब्रह्माजी ने फिर शाप दिया तुम शूद्रा हो जाओ तभी मेरी पत्नी बन सकोगी। सावित्री ने फिर से ब्रह्माजी को शाप दिया कि अकाम्या में आप कामुक बन जाएँगे। दोनों के कोध से पूरा विश्व थर थर काँपने लगा। सभी देवताओं के साथ भगवान् विष्णु और भगवान् शिव भी प्रकट हो गए और दोनों को शान्त करने लगे। शिव और हरि ने दोनों को बताया कि आपको एक दूसरे को शाप नहीं देना चाहिए। और इसप्रकार विष्णु और शिव दोनों ने अनेकविध स्तुतियों से दोनों को शान्त भाव में स्थित किया । साथ ही हरि और हर ने सावित्री जी से निवेदन किया कि शाप को सत्य करने के लिए आपको अपने अंश को प्रकट करना होगा यही कारण है कि सावित्री जी के अंश से गोपबाला के रूप वेदमाता गायत्री ने अवतार लिया जो सावित्री जी का ही दूसरा रूप थी। यही कारण है कि गायत्री जयन्ती मनाई जाती है सावित्री जयंती नहीं और इसी कारण सावित्री मन्त्र को ही गायत्री मन्त्र कहा जाता है।

निष्कर्षत: सावित्रीजी ने ब्रह्माजी को जो अपूजनीय होने का शाप दिया गायत्री जी ने ब्रह्माजी को पूजित होने का वरदान दे दिया। गायत्री देवी, सावित्री देवी का ही अवतार थी ।

भगवान् शिव का शाप

दूसरा शाप प्रसंग जो बहुत अधिक प्रचलित है शिवपुराण से शिव पुराण की यह गाथा बहुत प्रसिद्ध है जिसमे ब्रह्माजी और विष्णुजी में स्वयं की उत्कृष्टता के लिये विवाद और भगवान् शिव का अनादि अनन्त ज्योतिर्मय अग्निस्तम्भ के रूप में दोनों के बीच मध्यस्थता करना और विराट युद्ध का पटाक्षेप करवाना तथा असत्य कथन हेतु ब्रह्माजी को अपूजनीय होने के शाप के साथ सत्य के आगे शीष नवाते विष्णुदेव को सर्वत्र पूजित होने का वरदान देना। लेकिन ब्रह्मपुराण में शिवजी द्वारा दिये गये शाप का दूसरा ही रूप सामने आता है जिसमें भगवान् शिव ने ब्रह्माजी को शाप दिया कि तुम्हारी वाणी सरस्वती है जिस वाणी से तुमने असत्य कहा वो वाणी नदी रूप में परिवर्तित हो जाए और देवी सरस्वती के नदी रूप में अवतरित होने की एक और गाथा प्रकाश में आती है।

स्कंद पुराण के केदार खण्ड अनुसार ब्रह्माजी द्वारा अपने कृत्य पर लज्जित होने पर भगवान् शिव द्वारा उन्हें प्रमुख तिथियों, पर्वों और पूजा उत्सवों में पूजित होने का वरदान दिया गया। शिवपुराण के अनुसार भगवान् शिव ने ब्रह्माजी को यज्ञों में विशेष रूपों से आराधित होने का अनूठा वरदान दिया। लेकिन पद्मपुराण के अध्याय में भगवान् शिव ने ब्रह्माजी की पूजा का पूरी तरह समर्थन किया यह कह कर और इसप्रकार शिवजी द्वारा ब्रह्माजी को दिये गये शाप का निवारण हो जाता है।

अग्निपुराण के अनुसार शिवलिंग की स्थापना ब्रह्मशिला पर होती है. जलधारी विष्णु स्वरूप है उस लिंग की अवस्थिति है। इसी के साथ शिवलिंग के तीन भागों में मूल में ब्रह्मा, उनके ऊपर विष्णु और उनके भी ऊपर शिवजी की स्थिति है इसप्रकार ब्रह्माजी, भगवान् शिव से कितने अविच्छिन्न है, स्पष्ट हो जाता है ।

पुत्र देवर्षि नारद द्वारा शाप लोकस्रष्टा ब्रह्मा और देवर्षि नारद अर्थात् पिता पुत्र द्वारा एक दूसरे को शाप प्रदान करना ।

ब्रह्मवैवर्त पुराण में यूँ तो उज्ज्वल पक्ष है कि ब्रह्माजी के लोकपावन तीर्थ पुष्कर का इक्यासी बार उल्लेख हुआ, लेकिन ब्रह्माजी के अपूजनीय होने के दो शाप प्रसंग है। अध्याय आठ. अनुसार ब्रह्माजी ने अपने सभी पुत्रों के साथ नारदजी को भी सृष्टि के विस्तार हेतु

निर्देशित किया परन्तु गक्ति के महा आचार्य नारदजी ने तो हरि भक्ति का लक्ष्य रखकर सृष्टि विस्तार में असमर्थता व्यक्त की ब्रह्माजी पुत्र की इस अवज्ञा पर कुपित हो गए और दासीपुत्र के रूप में उबर्हण नाम से जन्म लेकर कामुकता में रमे रहने का शाप दिया।

देवर्षि नारद ने कहा कि आपने गुझ निरपराध को शाप दिया इसलिए मैं भी बदले में आपको शाप देता हूँ। प्रतिशाप स्वरूप नारदजी ने भी पिता ब्रह्माजी को तीन कल्प तक अपूजनीय होने का शाप दिया। मेरे शाप से प्रत्येक विश्व में आपके कवच स्तोत्र, पूजा और मन्त्र लुप्त हो जाएँगे। तीन कल्प व्यतीत होने पर आप पूज्यों के पूज्य हो जाएँगे। इरारामय आपका यज्ञ भाग भी बंद हो जाएगा। आप केवल देवों के वंदनीय रहोगे। ब्रह्माजी के शापस्वरूप नारदजी दासीपुत्र बनकर शाप भोग कर पुन: ब्रह्माजी के पुत्र बन गए ।

उल्लेखनीय है कि 'ब्रह्मार्चन पद्धति'* के लेखक मृत्युंजय त्रिपाठी ने चेतना उत्पन्न की कि नारदजी ने तीन कल्पों तक ब्रह्माजी को अपूजनीय होने का शाप दिया वे तीन कल्प तो कब के व्यतीत हो गए। अब नारद शाप का क्या प्रभाव?

मोहिनी द्वारा द्वारा शापित ब्रह्माजी

ब्रह्माजी के अपूजनीय होने की विभिन्न शाप कथा में मोहिनी द्वारा शापकथा, ब्रह्म-पुराण, गर्ग-संहिता में कुछ प्रसंगों में विभिन्नता के साथ पाई जाती है। ब्रह्मवैवर्तपुराण में अत्यधिक विस्तार से है। गर्ग संहिता में वर्णन है कि ब्रह्माजी कहीं जा रहे थे और मोहिनी अप्सरा ने उनसे पति बनने की याचना की लेकिन ब्रह्माजी ने अन्य अवतार में स्वीकृति के साथ इस समय उसे अस्वीकृत कर दिया । मोहिनी ने पुष्कर में तपस्या की फलस्वरूप ब्रह्माजी ने वरदान दिया कि भगवान् विष्णु के श्रीकृष्ण अवतार लेने पर जब मैं उनका सुन्दर प्रपौत्र बनूंगा तब तुम्हारी मेरी प्रियतमा बनने की अभिलाषा पूर्ण होगी और ब्रह्माजी ने अनिरुद्ध के रूप में अवतार लिया तब मोहिनी बाणासुर पुत्री ऊषा बनी।

ब्रह्मवैवर्तपुराण अनुसार मोहिनी के शाप का प्रतिकार या शाप का निवारण भगवान् विष्णु ने गंगा स्नान बताया और इस प्रकार गंगा स्नान के द्वारा ब्रह्माजी मोहिनी प्रदत्त शाप से मुक्त हो गए। इस प्रकार यह शाप भी आधारहीन हो गया ।

महर्षि भृगु को ब्रह्माजी को अपूजनीय होने का शाप

त्रिदेवों में कौन श्रेष्ठ है इस प्रसंग पर पद्मपुराण, श्रीमद्भागवतपुराण और मुद्गल पुराण मे कथाएँ वर्णित है। पद्मपुराण के अनुसार त्रिदेवों की श्रेष्ठता परीक्षण में ब्रह्माजी के अपूजनीय होने के शाप वर्णन है। यही कथा श्रीमद्भागवत के अन्तिम अध्याय में वर्णित है लेकिन ब्रह्माजी को शाप का कोई उल्लेख नहीं है। लेकिन मुद्गल-पुराण[3] में ऐसा मोड़ है कथा में कि महर्षि भृगु भयभीत हो गए कि कहीं पिता ब्रह्मा उन्हें शाप न दे दे।

अवदं तं महाभागं मां क्षमस्व महागसम्।
परीक्षार्थंमहाविप्रै: प्रेषितोऽहं पितामह॥[4]

इसी तथ्य को दर्शाया है –

तातस्तु क्षुभितोऽत्यन्तं स च मां शप्तुमुद्यत:।
तातं तं दण्डवद्भूमौ नतोऽहं भक्तिसंयुत:॥[5]

अर्थात् मेरे पिता ब्रह्माजी अत्यन्त क्षुणित हो गए और शाप देने को उद्यत हो गए और मैं अपने पिता के पैरों में दण्डवत् गिर गया। मैंने उन महाभाग से कहा कि मुझ महा अपराधी को क्षमा कीजिए हे पितामह महान ब्राह्मणों ने मुझे परीक्षा लेने के लिए भेजा था।

* ब्रह्मार्चनपद्धति: : आचार्य मृत्युंजय त्रिपाठी , नवशक्ति प्रकाशन, चौकाघाट, वाराणसी, 1997ई.

3 मुद्गलपुराणप्रकाशनमण्डल, अ.सा. राजाध्यक्ष, 154 लक्ष्मीनिवास हुन्दु कालोनी, दादर, मुंबई, 1976ई.

4 मुद्गलपुराणम् उपर्युक्त, 2.42.29, पृ. 90

5 मुद्गलपुराणम्, उपर्युक्त, 2.42.28, पृ. 90

इससे आगे की कथा पद्मपुराण में कही गयी है-

ततः कोपसमाविष्टो भृगुरप्याह केशवम्।
पक्षपातेन मां साधो भार्याया बाधसेधुना॥97॥
नृलोके दशजन्मानि लप्स्यसे मधुसूदन।
भार्यायास्ते वियोगेन दुःखान्यनुभविष्यसि॥98॥[6]

प्रत्युत्तर में भगवान् विष्णु ने भी तत्काल महर्षि भृगु को सन्तानहीन रहने का शाप दे दिया । भृगु को शाप देकर भगवान् विष्णु भगवान् ब्रह्मा के पास गए और कहा भगवान् आपके पुत्र मृगु अत्यन्त कोधी है और अकारण मुझे शाप दे दिया। तब ब्रह्माजी ने कहा-:

त्रैलोक्यं न त्वया त्याज्यमेष एव वरो मम॥
दशजन्ममनुष्येषु लोकानां हितकाम्यया।
स्वयं कर्त्ता न ते शक्तः शापदानाय कोपि वा॥
कोऽयं भृगुः कथं तेन शक्यं शप्तुं जनार्दन।
मानयस्व सदा विप्रान्ब्राह्मणास्ते तनुस्स्वयम्॥[7]

अर्थात् आप त्रैलोक्य का परित्याग न करें मैं आपको वरदान देता हूं आप अपनी स्वेच्छा से ही मनुष्य लोक में इस बार जन्म लोक कल्याण हेतु जन्म लेंगें। आपको कोई भी शाप नहीं दे सकता। ये भृगु कौन होते हैं आपको शाप देने वाले? इस प्रसंग का आश्रय लें तो जब भगवान् विष्णु को भृगुजी के शाप का प्रभाव नहीं हुआ तो ब्रह्माजी पर किसप्रकार होगा। इसप्रकार भृगु शाप भी प्रभावहीन हो जाता है।

भगवान् ब्रह्मा के यज्ञ में पुष्कर में भगवान् शिव विचित्र वेश में आए और कुछ विचित्र कर्म उनके द्वारा किए गए जिससे ब्राह्मणों ने कुपित होकर उनके साथ अभद्र व्यवहार किए । इस पर भगवान् शिव ने ब्राह्मणों को शाप दे डाले । बाद में ब्राह्मणों को ये संज्ञान में आया जिनके साथ दुव्यर्वहार किया वे भगवान् शिव थे और उन्होंने शिवजी से क्षमा माँगी। भगवान् शिव ने शाप के साथ वरदान देते हुए ब्रह्माजी की पूजा का समर्थन इस प्रकार किया-

शान्ता दान्ता द्विजा ये तु भक्तिमन्तो मयि स्थिराः।
न तेषां छिद्यते वेदो न धनं नापि संततिः॥79॥
अग्निहोत्ररता ये च भक्तिमन्तो जनार्दने।
पूजयन्ति च ब्रह्माणं तेजोराशिं दिवाकरम्॥80॥

अर्थात् जो ब्राह्मण मेरी, विष्णुजी की, ब्रह्माजी और सूर्यदेव की भक्ति करेगा उसका कभी अमंगल नहीं होगा।

ब्रह्माजी के प्रति भक्ति का समर्थन महाभारत के आश्वमेधिक पर्व के बीसवें अध्याय में श्रीकृष्ण रूपी भगवान् विष्णु ने किया जिसमें अधम लोगों की चौदह श्रेणी में सम्मिलित करते हुए कहा है –

अथवा ब्राह्मणानां तु ये न भक्ता नराधमाः।
वृथा जन्मान्यथैतेषां पापिनां विद्धि पाण्डव॥[8]

इस प्रकार भले ही ब्रह्माजी को शाप लगे हों, लेकिन उनकी पूजा आराधना, भक्ति का समर्थन भगवान् विष्णु और परमेश्वर शिव जैसे विराट् ईश्वरों ने भी किया है।

निष्कर्षतः ब्रह्माजी के सभी शापों का किसी न किसी रूप में परिहार होता है । लोकपूजित ब्रह्माजी जिनकी सृष्टि में हम अन्य ईश्वरीय विग्रहों की आरधना करते हैं, उन्हें बारंबार प्रणाम है।

***

6 पद्मपुराणम्/खण्डः 1 (सृष्टिखण्डम्)/अध्यायः 04.98-99
7 पद्मपुराण सृष्टिखण्ड चतुर्थ अध्याय, 106-08
8 महाभारत, आश्वमेधिक पर्व, 98.15

जब विष्णु भी हुए शापग्रस्त

डा. सुदर्शन श्रीनिवास शाण्डिल्य
व्याकरणाध्यापक, श्रीराम संस्कृत महाविद्यालय, सरौती, अरवल। पटना आवास- ज्योतिषभवन, शिवनगर कालोनी, मार्गसंख्या 10, बेऊर जेल के पीछे, पटना।

देवीभागवत शक्ति की उपासना का प्रमुख महापुराण है। वैष्णव परम्परा में श्रीमद्भागवत को महापुराण माना जाता है तो शाक्त परम्परा में देवी भागवत को। इसमें सिद्धान्ततः पराम्बा देवी की सार्वभौमिकता तथा सर्वोपरिता कही गयी है। इसमें हयग्रीव अवतार विष्णु की कथा है। इसमें विष्णु को शापग्रस्त होने की कथा आयी है। स्वयं देवी लक्ष्मी ने विष्णु का सिर कट जाने का शाप दिया। देवी स्वयं कहती हैं कि मुझे ऐसा कार्य जगत् के कल्याण हेतु करना पड़ा। एक राक्षस ने मुझे प्रसन्न कर वर माँग लिया था कि मैं ऐसे व्यक्ति के हाथों मारा जाऊँ जिसका सिर घोड़े का हो। देवी चाहतीं तो किसी का भी सिर कटबाकर घोड़े का सिर लगबाकर उस राक्षस को मरबा सकती थीं, पर उन्होंने अन्य किसी को कष्ट न देकर विष्णु से ही यह जगन्मंगल का कार्य कराया। विष्णु ने हयग्रीव कका रूप धारण कर जगत् को छिन्न-भिन्न करने वाले दैत्य का संहार किया। यह कथा दिव्य शाप की प्रवृत्ति तथा दिशा की व्याख्या करती है।

इतना तो अनुभूति के आधार पर सर्वप्रथम यह अवश्य निवेदन करूँगा कि सभी पुराणों का अध्ययन विविध ज्ञान तथा मानवीय मूल्यों की शिक्षा के लिए अनिवार्य है। पुराणों में पारस्परिक सम्बद्धता का पारम्परिकपूर्ण समन्वय है। अतः जिज्ञासा समाधान के लिए सभी पुराण पारम्परिक समाधायक हैं। अतः सभी पुराणों का अध्ययन परमापेक्षित है।

सभी पुराणों में हमें दैवीय तथा ऋषीय शापों का विशद वर्णन है। शापकथाओं के अध्ययन से यही सिद्ध होता है कि तपस्या से संचित शक्ति का उपयोग समाज में अपारधी को दण्ड देकर भी उसके भविष्य का शुभ मार्ग प्रशस्त करने के लिए हुआ है।

अब देवी भागवत महापुराण की सांकेतिक शापकथाओं की ओर लेख को प्रवृत्त कर रहा हूँ। देवी भागवत महापुराण भी ज्ञानदृष्टि से मानव जीवन के आत्मकल्याण के लिए परमोपादेय है। स्फुट भाव यही है कि मानव को संसारासक्ति का त्याग कर वैराग्यवान् होना चाहिए। एतदर्थ एकमात्र भगवती पराम्बा चरण-शरण आश्रय ही पूर्ण सक्षम है। यही परब्रह्म शक्ति का भी कोमल दयार्द्र मानव शक्तिसंचार है।

पौराणिक कथाओं के व्यापक रूप से सूत्रधार सूतजी ही होते हैं। यह कार्यकारता का भाववाचक पुराणनिर्धारित संज्ञा है। जिसका पारम्परिक निरन्तरता ज्ञानस्थापनार्थ गतिशील है।

इसी परिप्रेक्ष्य में एक कथा आयी है जिसमें विष्णु को भी शापग्रस्त होने का प्रसंग है। कथा इस प्रकार है

एक बार तपःसम्पन्न वैराग्यवान् वेदव्यासजी को सरस्वती के तट पर आश्रमस्थ वृक्ष के कोटर में गौरैया पक्षी के मनोरम पारिवारित परिवेश को देखकर इन्हें भी पुत्रप्राप्ति की अत्युत्कट लालसा जागृत हुई।[1] एतदर्थ किस देवशक्ति का पूजन-ध्यान किया जाये इसकी चिन्ता करने लगे। इस प्रसंग में सुपुत्र महिमा का व्यासजी ने विविध रूप से वर्णन किया है। इस स्थल पर सांसारिक सुख की महत्ता को प्रतिपादित करने वाला यह श्लोक रमणीय है-

संसारेऽत्र समाख्यातं सुखानामुत्तमं सुखम्।
पुत्रगात्रपरिष्वङ्गो लालनञ्च विशेषतः॥[2]

पुत्र शरीर का आलिंगन तथा विविध प्रकार से लालन-पालन सांसारिक सभी सुखों में उत्तम सुख है। बाल लालन-पालन प्रेम प्रारम्भ से ही मानवीय संवेदना का रुचिकर मनोरम रहा है।

इस तरह से चिन्तामग्न परिवेश में व्यासजी के समक्ष अकस्मात् नारदजी का आगमन हुआ। नारदजजी को देखते ही निश्चित समाधान की आशा से व्यासजी ने उनसे अपनी चिन्ता का समाधान पूछा। तदनन्तर नारदजी ने कहा- यही प्रश्न पूर्व में ब्रह्माजी ने मधुसूदन भगवान् विष्णु से किया था।[3] तपस्यारत भगवान् विष्णु को देखकर ब्रह्माजी विस्मित होकर आगे बोले कि –

देवदेव जगन्नाथ भूतभव्यभवत्प्रभो।
तपश्चरसि कस्मात् त्वं किं ध्यायसि जनार्दन॥[4]

अर्थात् हे देवाधिदेव जगन्नाथ समस्य विश्व के स्वामी आप क्यों तपस्या कर रहे हैं। हे जनार्दन आप किसके ध्यान में लीन हैं?

तदनन्तर भगवान् विष्णु ने कहा कि प्राचीनकाल में धनुष की प्रत्यंचा टूट जाने के कारण मेरा ही शिर छन्न हो गया था, तब शिल्पकारों में श्रेष्ठ ब्रह्मा आपने ही पुनः मेरे शरीर पर घोड़े का शिर जोड़ दिया था। तबसे मैं हयग्रीव रूप में प्रतिष्ठित हुआ। यदि मैं ही सर्वोपरि होता तो मेरी यह दुर्दशा क्यों होती?

तस्मान्नाहं स्वतन्त्रोऽस्मि शक्त्यधीनोऽस्मि सर्वदा।
तामेव शक्तिं सततं ध्यायामि च निरन्तरम्॥
नातः परतरं किञ्चिज्जानामि कमलोद्भव॥[5]

इसलिए मैं स्वतन्त्र नहीं हूँ। मैं परमशक्ति के अधीन हूँ। अतः मैं उसी परमशक्ति के पूजन-ध्यान में लीन रहता हूँ। हे ब्रह्मा, मैं इसके अतिरिक्त कुछ भी नहीं जानता हूँ।

इस प्रसङ्ग को सुनकर ऋषिगण ने सूतजी से पूछा- हे सूतजी आश्चर्य होता है कि जो देवाधिदेव सर्वपालक हैं उनका भी सिर कट जाये![6]

इस कथा को आगे बढ़ाते हुए सूतजी कहते हैं पूर्व में 10 हजार वर्षों तक दानवों से युद्ध करते-करते अत्यन्त क्लान्त होकर शिथिल हो गये थे, थक गये थे। तदनन्तर समतल भूमि पर पद्मासन लगाकर प्रत्यंचा चढ़े हुए धनुष् की नोंक पर भार देकर लक्ष्मीपति भगवान् विष्णु सो गये। अत्यन्त थक जाने के कारण दैवयोग से उन्हें गहरी नींद आ गयी।

कालान्तर में यज्ञसम्पादनार्थ ब्रह्मा, शिव, इन्द्र, ये तीनों वैकुण्ठलोक गये। वहाँ भगवान् विष्णु को न देखकर ज्ञानचक्षु से उन्हें खोजते हुए उस स्थल पर पहुँचे जहाँ भगवान् निद्रामग्न थे। इसके बाद तीनों देवगण निद्राभंग को अनुचित समझते हुए भी यज्ञ का सम्पादन करने के लिए भगवान् विष्णु को जगाने का उपाय सोचने लगे। यज्ञ की महत्ता को देखते हुए यज्ञाधिपति विष्णु की समुपस्थिति की अनिवार्यता में ब्रह्माजी ने धनुष के अग्रभाग को खा जाने के लिए दीमक नाम के

1 देवी भागवत, प्रथम स्कन्ध, चतुर्थ अध्याय
2 देवीभागवतपुराणम्/स्कन्धः 01/अध्यायः 04
3 देवीभागवत, 4.2.32.
4 देवी भागवत, 1.4.36
5 देवी भागवत,1.4. 61
6 देवी भागवत, स्कन्ध 5, अध्याय- 5

कीट को उत्पन्न किया। उनका अनुमान था कि दीमक के द्वारा धनुष के अग्रभाग को खा जाने पर धनुष नीचा हो जायेगा, तब भगवान् विष्णु जाग जायेंगे। इस भाव से ब्रह्माजी ने दीमक को धनुष के अग्रभाग को खा जाने का आदेश किया। परन्तु दीमक ने कहा कि निद्राभंग करना ब्रह्महत्या के समान पाप है-

निद्राभङ्गः कथाच्छेदो दम्पत्योः प्रीतिभेदनम्।
शिशुमातृविभेदश्च ब्रह्महत्यासमं स्मृतम् ॥20॥[7]

अर्थात् निद्राभंग करना, कथा में विघ्न डालना, पति-पत्नी के मध्य भेद उत्पन्न करना तथा माँ और शिशु के मध्य वैर भाव उत्पन्न करना ये चारों ब्रह्महत्या के समान हैं।

इस प्रकार धर्मशास्त्र का उपदेश देते हुए दीमक ने कहा- मैं निद्राभङ्ग कर ब्रह्महत्या के समान पाप का भागी क्यों बनूँ। इससे मेरा क्या लाभ होगा। संसार में सभी प्राणी अपने स्वार्थ के वशीभूत होकर पापकर्म करते हैं। मेरा कोई विशेष स्वार्थ सिद्ध नहीं हो रहा है। अतः मैं धनुष के अग्रभाग को खाकर भगवान् विष्णु को जगाने का पाप नहीं करूँगा। तब ब्रह्माजी ने दीमक कीट को विशेष लाभ प्रदान किया कि

होमकर्मणि पार्श्वे च हविर्दानात् पतिष्यति।
तत् भागं विजानीहि कुरु कार्यं त्वरान्विता ॥[8]

हवन के समय आहुति प्रदान करते हुए स्वभावतः जो हवन सामग्री आसपास गिरेगी उसपर तुम्हारा अधिकार होगा अर्थात् वह तुम्हारा भोजन होगा। इसी कारण हवनकुण्ड के समीप गिरी हुई सामग्री को यथावत् छोड़ देने का प्रावधान अद्यावधि है। उसे अग्नि में नहीं डाला जाता है। इस तरह लाभ को देखकर दीमक ने धनुष् के अग्रभाग को शीघ्र खा लिया। उसके खाते ही पूर्वशाप से वशीभूत प्रत्यंचा टूटने पर निकले हुए बाण से भगवान् विष्णु का सिर घड़ से अलग हो गया।

इस दुर्दशा को देखकर श्रेष्ठ देवगण चिन्तातुर हो गये। भगवान् विष्णु को पूर्ववत् करने के लिए उपाय खोजने लगे। इस स्थल पर अनेक प्रकार के विकल्प सुझाये गये हैं। देवगण के आग्रह पर ब्रह्माजी ने कार्यसिद्धि की कामना से सम्मुखस्थ सशरीर विद्यमान वेदों को आदेश दिया। तदनन्तर आदेशानुसार वेद भगवान् ने सनातनी ब्रह्मविद्या पराम्बा महामाया की विभिन्न महिमामयी स्तुति की। तदनन्तर महामाया प्रकट होकर सप्रसन्न रहस्य बतलाने लगी कि यह सब मेरे शाप से हुआ है।

देवी ने पूर्व वृत्तान्त सुनाना आरम्भ किया कि एक बार भगवान् विष्णु के समीप मैं बैठी हुई लक्ष्मी के चित्ताकर्षक मुख को देखकर हँस दिया। यहाँ पर ध्यातव्य है यही पराम्बा लक्ष्मी हैं। इस पर लक्ष्मी को भ्रम हुआ कि मुझमें कोई दोष देखकर विष्णु हँस पड़े हैं। साथ ही, ऐसा प्रतीत होता है कि मुझसे अधिक चित्ताकर्षक रूपवाली किसी दूसरी स्त्री पर विष्णु मोहित हो गये हों और मुझे अपमानित कर रहे हों। इस भ्रमजनित दुर्भाव से क्रोधित होकर मन्द स्वर में लक्ष्मी ने विष्णु से कहा- 'जिस सिर पर हँसे थे यह तुम्हारा सिर कट जाये।' इसी शाप के कारण भगवान् विष्णु की ऐसी गति हुई है। परन्तु भविष्य में बहुत बड़ा कल्याण भी होने वाला है और इस शाप का यही है कल्याणकर रहस्य।

देवी आगे पूर्वकथा कहने लगी कि शाप रहस्य को आप देवगण समझें। प्राचीन काल में सरस्वती नदी के तट पर महाबाहु हयग्रीव नामक एक राक्षस ने बीजमन्त्र के साथ 1000 वर्षों तक जप करता हुआ कठोरतप किया था। इससे बाध्य विवश होकर मैं वरदान देने पहुँची। उसने कहा कि यदि माँ प्रसन्न हो तो मुझे अजर-अमर कर दो। तब मैंने कहा कि जन्म के साथ मृत्यु तो शाश्वत अटल है। अतः यह सम्भव नहीं है। तब राक्षस ने कहा कि मुझे वहीं मार सके जिसका मुख घोड़े के

7 देवी भागवत, 1.5.20 8 देवी भागवत, 5.24

समान हो। मैंने तदनुसार वरदान दे दिया। तब वह हयग्रीव राक्षस धर्म, वेदज्ञान को नष्ट-भ्रष्ट करने का पूरा दुष्प्रयास करने लगा। जिसका वध होना अनिवार्य था इसलिए भगवान् विष्णु को हयग्रीव होने के लिए शाप दिया गया था।

अब त्वष्टा (विश्वकर्मा) अश्व का मनोहर शिर अलग कर शिरोविहीन विष्णु के धड़ पर संयोजित करेंगे। इस तरह विष्णु हयग्रीव के रूप में राक्षस का वध कर जगत् का कल्याण करेंगे।

देवी भागवत के इस शापसन्दर्भ में हयग्रीव रूप विष्णु के अवतार की कथा कही गयी है। अतः पौराणिक सन्दर्भ में शाप आन्तरिक रूप से पूर्ण मङ्गलमय कल्याणकर होगा। शाप के लिए सञ्चरित तामसी शक्ति का भी परिणाम पूर्णतः जगन्मंगल होता है। इस तरह से देवी भागवत में अनेक रोचक शाप कथाएँ हैं।

इनमें से एक कथा में द्रौपदी के पाँच पति होने का कारण बतलाया गया है कि रावण वध के बाद असली सीता के मिलने पर छाया सीता भी भगवान् राम के साथ ही रहना चाहती है। तब राम ने कहा कि तुम शिव और अग्निदेव को तप से प्रसन्न करो। तदनन्तर तपोबल से तुम स्वर्ग की लक्ष्मी बन जाओगी। इसके अनुसार छाया सीता तप करने लगी परन्तु उसे पति प्राप्त करने की प्रबल इच्छा थी। अतः तपस्या पूर्ण होने पर देव वरदानोन्मुखता में मुझे पति चाहिए इस वाक्य की पाँच आवृत्ति हो गयी। फलस्वरूप अग्निदेव ने कहा- 'तुम्हारे पाँच पति होंगे।' इसी कारण से छाया सीता द्रौपदी बनी तथा इसके पाँच पति हुए।

इसी प्रकार कृष्णावतार में गाय चराने के पीछे भी शाप कथा का प्रतिफल है। देवी भागवत पुराण अन्य पुराणों की रह ही ब्रह्म समाधायक, रमणीय, मननीय आदरणीय अनुपालनीय पूज्य पुराण है।

***

लेखकों से निवेदन

'धर्मायण' का अग्रिम अंक **पितृभक्ति-विशेषांक** के रूप में प्रस्तावित है। आज वास्तविकता है कि हमारे सम्बन्ध टूट रहे हैं, समाज टूट रहा है, परिवार तक बिखर रहा है, न्यूक्लियर फैमिली ने सबको अपने चपेट में ले लिया है। इस विषम परिस्थिति के लिए सनातन धर्म की गहराई में समाधान ढूँढ़ने का प्रयत्न किया है। हमारी सनातन अवधारणा है- सप्तपुरुषी सपिण्डता। सात पीढ़ी ऊपर तक की संतान को हम एक ईकाई मानते रहे हैं, उन्हें सपिण्ड मानते रहे हैं। पर, आज पति-पत्नी और बच्चे पर सिमट चुके हैं। जीवित माता-पिता भी हमें परिवार से इतर लगने लगे हैं। क्या सप्तपुरुषी सपिण्डता की अवधारणा का ज्ञान हमें फिर बृहत्तर कुटुम्ब को समझने में सहायक हो सकता है? गया में जाकर पिण्डदान करते समय हम जिन-जिन लोगों के नाम से पिण्ड देते हैं, वे तो हमारे ही बन्धु-बान्धव होंगे। क्या इस अवधारणा पर कार्य करने से लोगों के मन में कुटुम्बों के प्रति अपनत्व का भाव नहीं जगेगा और फिर हम न्यूक्लियर परिवार से उबरने की दिशा में होंगे। हमारी सनातन अवधारणा के अनुसार हमारे मृत पूर्वज ब्रह्म से हमतक की शृंखला हैं, जिसे 'प्रजातन्तु' कहा गया है। 'प्रजातन्तुं मा व्यवच्छेत्सीः' हमें उपदेश दिया गया है। ऐसी विभिन्न कथाएँ हैं, जिनमें मृत पूर्वजों से प्रार्थना कर समृद्धि, सुख-शान्ति तथा उन्नति की कामना की गयी है। इनकी अवधारणा को पुनरुज्जीवित कर क्या हम मानसिक एकाकीपन को दूर नहीं कर सकते हैं?- ये कुछ ऐसे प्रश्न हैं जिनपर विचार आवश्यक है।

***

सनातन धर्म में अधिक मास का माहात्म्य

डा.शारदा मेहता
सीनि. एमआईजी-103, व्यास नगर,
ऋषिनगर विस्तार, उज्जैन (म.प्र.)
पिनकोड- 456 010

विगत मास श्रावण मलमास रहा है। इसमें चार पक्ष हुए। रहला पक्ष शुद्ध मास था फिर बीच में एक मास का मलमास हुआ, जिसमें श्रावण से सम्बन्धित कोई भी धार्मिक कृत्य नहीं किए गये। पुनः चौथा पक्ष शुद्ध मास कहलाया। इस प्रकार, मलमास की व्यवस्था हुई। यह स्थिति 32 मास 18 दिन पर आती है।

इस मास के माहात्म्य का वर्णन पद्मपुराण में आया है, जहाँ इसे पुरुषोत्तम मास कहा गया है। इस आलेख की विशेषता है कि यहाँ उज्जैन की जनश्रुति के आधार पर बहुत कुछ लिखा गया है, जिसे हिन्दी भाषाभाषी क्षेत्र के पाठकों को रुचिकर लग सकता है।

भारतीय संस्कृति में अधिक मास का धार्मिक रूप से अत्यधिक महत्त्व है। यह तीन वर्ष में एक बार आता है। इसके अनेक नाम हैं जैसे अधिकमास, मलमास, संसर्प, मलिम्लुच, पुरुषोत्तम मास आदि। प्रत्येक भाषा में इसे अलग-अलग नाम से जाना जाता है। पौराणिक ग्रन्थों के अनुसार जिस प्रकार प्रत्येक मास का कोई न कोई स्वामी होता है किन्तु अधिकमास का कोई स्वामी नहीं है। अतः इस मास में शुभ-कार्य करना वर्जित है। विवाह, यज्ञोपवीत, गृह प्रवेश, मुंडन आदि कोई भी कार्य इस मास में नहीं होते हैं।

पौराणिक कथा के अनुसार एक बार अधिक मास भगवान् विष्णु के पास गया और उसने उन्हें अपनी समस्या बतलाई। वह बहुत दुःखी था कि उसका कोई स्वामी नहीं है। विष्णु भगवान् ने उसे दुःखी देखा तो उन्हें उस पर दया आ गई। उसी दिन से ही भगवान् विष्णु ने उसे अपना नाम दे दिया और तभी से यह मास पुरुषोत्तम मास के नाम से प्रसिद्ध हो गया।

यस्मिन् चान्द्रे न संक्रान्तिः सोऽधिमासो निगद्यते।
तत्र मङ्गलकार्याणि नैव कुर्यात् कदाचन॥
यस्मिन् मासे द्विसंक्रान्तिः क्षयमासः स कथ्यते।
तस्मिन् शुभाणि कार्याणि यत्नतः परिवर्जयेत्॥[1]

अर्थात् चन्द्र संक्रान्ति न होने पर इस माह में कोई भी शुभ कार्य करना वर्जित है।

अधिक मास में श्रीराम, श्रीकृष्ण, श्रीविष्णु तथा

1. बृहदवकहडाचक्रम् : जोशी, केदारदत्त (सम्पादक), मोतीलाल बनारसीदास, 1972, 10-11, पृ. 5

भगवान् शंकर जी की भक्तिभाव से पूजन अर्चन धार्मिक पुस्तक का पारायण तथा श्रीगीताजी के पन्द्रहवें अध्याय का वाचन किया जाता है। उन सबका सौ गुना फल प्राप्त होता है। अतरू हमें अपनी शारीरिक क्षमता के अनुसार भगवान् की आराधना करनी चाहिए।

धार्मिक ग्रन्थों के अनुसार दो अमावस्या के मध्य जब कोई संक्रान्ति नहीं होती है तो उस वर्ष अधिक मास होता है। विदेशों में तेरह की संख्या को शुभ फल दायी नहीं माना जाता है। हमारे यहाँ प्रदोष व्रत 13वीं तिथि को ही होता है, जो शिवजी को समर्पित है। इसे शुभ माना जाता है। हमारी भारतीय संस्कृति में अधिक मास आध्यात्मिक उन्नति के लिये व्रत उपवास, पूजा, पाठ उपासना तथा धार्मिक ग्रन्थों के पठन पाठन के लिये पूजनीय माना जाता है। इसमें विवाह मुंडन यज्ञोपवीत जैसे संस्कार करना वर्जित है।

सूर्यमास से वर्ष में 365 दिन तथा 6 घंटे होते हैं और चन्द्र मास 354 दिन का वर्ष होता है। यह ग्यारह दिन का अन्तर तीन वर्ष में लगभग एक माह का होता। अतरू प्रत्येक तीसरे वर्ष में अधिक मास हिन्दू कैलेंडर में समायोजित किया जाता है, जिसे अलग-अलग नामों से उल्लेखित किया जाता है। अंग्रेजी कैलेंडर के अनुसार प्रत्येक चौथे वर्ष को लीप ईयर नाम दिया गया है। प्रत्येक चौथे वर्ष में फरवरी माह 29 दिन का होता है। पद्मपुराण के अनुसार-

मासा सर्वे द्विजश्रेष्ठ सूर्यदेवस्य संक्रमाः।
अधिमासस्त्व संक्रान्तिर्मासोऽसौ शरणं गतः॥
मम प्रियतमोऽत्यन्तं मासोऽयं पुरुषोत्तमः।
अस्याहं सततं विप्र स्वामित्वे पर्यवस्थितः॥[2]

अर्थात् हे द्विजश्रेष्ठ सभी माह सूर्यदेव की संक्रान्ति के कारण होते हैं। तभी से पुरुषोत्तम मास मुझे अत्यधिक प्रिय है। हे विप्र मैं सदैव इस पुरुषोत्तम मास को अधिक प्रेम करता हूँ। सम्मान देता हूँ। मैं पुरुषोत्तम मास के स्वामी के रूप में प्रतिष्ठित हूँ।

अथर्ववेद भी इस बात का उल्लेख करता है कि -

त्रयोदशो मास इन्द्रस्य गृहः।[3]

एक लाख गायत्री मन्त्र का जो फल प्राप्त होता है उतना इस पुरुषोत्तम मास में एक मन्त्र जपने से हो जाता है। पांडवों ने पुरुषोत्तम मास में धर्म तप का अनुष्ठान कर परमसिद्धि प्राप्त की थी। इस माह में पूजा, दीपक दान, ध्वजा दान अनुष्ठान आदि का बड़ा महत्व है। मान्यता है कि इससे स्वर्गलोक की प्राप्ति होती है।

इस मास में भगवान् विष्णु के पूजन का विशेष महत्व है क्योंकि वे इस मास के स्वामी हैं। शिव पूजन का भी इस मास में महत्व बतलाया गया है। भगवान् विष्णु का निवास पीपल के पेड़ में है। अधिक मास में नियमित रूप से पीपल के वृक्ष के नीचे दीपक लगाना श्रेयस्कर है। गाय के दूध से अभिषेक भी करना चाहिए। पेड़ में प्रतिदिन जल का सिंचन करना चाहिये। अधिक मास में दो एकादशी बढ़ जाती है। इन एकादशियों के नाम परमा तथा पद्मिनी हैं। पूर्णिमा भी दो होती हैं। धार्मिक तथा आध्यात्मिक उन्नति तथा शारीरिक, मानसिक विकास करने का पुरुषोत्तम मास का समय श्रेष्ठ दर्शाया गया है। धैर्य तथा ईमानदारी का जीवन जीने की कला उपासना से ही जीवन में प्राप्त होती है। पुरुषोत्तम मास माहात्म्य में कहा गया है-

द्वादशक्षरमन्त्रोऽयं यो जपेत् कृष्ण सन्निधौ।
दशवारमपि ब्रह्मन् स कोटिफल मश्नुते॥[4]

अर्थात् इस मास में गीता पाठ पंचाक्षर शिवमन्त्र, अष्टाक्षर नारायण मन्त्र, द्वादशाक्षर वासुदेव मन्त्र आदि के जप का लाख गुना, करोड़ गुना या अनन्त फल होता है।

2. पद्मपुराण, पुरुषोत्तममास माहात्म्य 17.14-15
3. अथर्ववेद : 5.6.4.
4. पुरुषोत्तममास महात्म्य 17.23

ईस्वी सन् 2023 में श्रावण मास में अधिक मास या पुरुषोत्तम मास है। इसका प्रांरभ 18 जुलाई से हुआ और यह 16 अगस्त तक रहा।

ज्योतिषशास्त्रियों के अनुसार अधिक मास में राशि के अनुसार दान करना चाहिए। यह मास भगवान् पुरुषोत्तम को समर्पित है। भक्तगण को इस मास में भगवान् विष्णु का पूजन अर्चन करना चाहिए। यदि संभव हो तो समय निकालकर श्रीविष्णु सहस्त्रनाम का पाठ करना चाहिए। यदि समयाभाव हो तो स्मार्ट फोन पर या अन्य डिजिटल माध्यम पर इसके पाठ का श्रवण करना चाहिए। शिव महिम्र स्तोत्र, शिवमानस पूजा आदि का पाठ करना चाहिए। एक गृहस्थ यदि अपने घर में इन पाठों का वाचन श्रवण करेंगे तो नई पीढ़ी के बालकों की रुचि भी जाग्रत होगी और उनमें भक्ति भावना का प्रादुर्भाव होगा। भारतीय संस्कृति से वे परिचित होंगे और प्रतिदिन पाठ का श्रवण करने से उन्हें श्लोक शनैः-शनैः कण्ठस्थ भी हो जाएँगे। निम्नलिखित श्लोक यदि बच्चों को कण्ठस्थ करवाएँगे तो उन्हें वे सर्वदा स्मरण रहेंगे- (शिवपूजन के लिये)

ध्यायेन्नित्यं महेशं रजतगिरिनिभं चारुचन्द्रावतंसं
रत्नाकल्पोज्वलागं परशुमृगवराभीतिहस्तं प्रसन्नम्।
पद्मासीनं समन्तात् स्तुतममरगणैर्व्याघ्रकृत्तिं वसानं
विश्वाद्यं विश्ववन्द्यं निखिलभयहरं पञ्चवक्त्रं त्रिनेत्रं॥

अर्थात् त्रिनेत्रधारी, चाँदी की तरह तेजोमयी चंद्र को सिर पर धारण करने वाले, जिनके अंग-अंग रत्न आभूषणों से दमक रहे हैं। चार हाथों में परशु, मृग, वर और अभय मुद्रा है। मुख मण्डल पर आनन्द प्रकट होता है, पद्मासन पर विराजित हैं, सारे देव, जिनकी वन्दता करते हैं, बाघ की खाल धारण करने वाले, ऐसे सृष्टि के मूल, रचनाकार महेश्वर का मैं ध्यान करता हूँ।

तथा विष्णु पूजन के लिये-

शान्ताकारं भुजगशयनं पद्मनाभं सुरेशं
विश्वाधारं गगनसदृशं मेघवर्णं शुभागं।
लक्ष्मीकान्तं कमलनयनं योगिर्भि ध्यानगम्यं
वन्दे विष्णुं भवभय हरं सर्वलोकैकनाथम्॥

अर्थात्- हे समस्त देवों के देव, जिनकी नाभि में पद्म है, शान्त आकार के, नाग पर शयन करने वाले विश्व के आधार, आकाश जैसे विशाल, मेघों से रंग वाले लक्ष्मी के पति कमल से नयन वाले, योगियों के समान ध्यान मगन, समस्त लोकों के नाथ, सब का संसार भय नाश करने वाले विष्णु आपका हम वन्दन करते हैं।

पुरुषोत्तम मास में देश के विद्वान् ख्यातिप्राप्त कथाकार विभिन्न स्थानों पर भागवत कथा, रामायण कथा, शिव-पुराण कथा आदि का आयोजन करते हैं।

लाखों की संख्या में श्रोतागण कथाश्रवण के लिये दूरस्थ स्थानों से आते हैं। कथाश्रवण के साथ ही वहाँ चल रहे भंडारे में महाप्रसादी ग्रहण करते है और अनेक कष्टों के झेलते हुए प्रवचन सुनकर पुण्यलाभ प्राप्त करते हैं। हमारी भारतीय संस्कृति और जनता की धार्मिक आस्था का अनोखे सम्मिश्रण की छटा यहाँ पर दृष्टिगोचर होती है।

उज्जैन में मलमास की झाँकी

मध्यप्रदेश के उज्जैन शहर में चौरासी महादेवों के मंदिर हैं। ये अति प्राचीन हैं। ये चौरासी महादेव के मंदिर केवल उज्जैन में ही हैं। श्रावण मास में तथा अधिक मास होने पर भक्तगण इनसे आशीर्वाद ग्रहण करने के लिये विभिन्न स्थानों से आकर इनके दर्शनों का लाभ उठाते हैं। प्राचीन मान्यता के अनुसार दूषण नामक एक राक्षस था। वह बहुत अधिक शक्तिशाली था। राक्षस को यह वरदान था कि जिस स्थान पर उसका रक्त गिरेगा, वहाँ वह चौरासी रूप धारण कर लेगा। शिव पुराण के

अनुसार शंकर भगवान् की एक बहिन थी, जिसका नाम श्रीप्रिया था, जिसे आधुनिक समय में क्षिप्रा नदी के नाम से जाना जाता है। शंकर भगवान् ने कहा था कि यदि श्रीप्रिया जलप्रवाह के रूप में प्रकट हो तो जैसे ही दूषण राक्षस को मैं मारूँगा तो उसका रक्त नदी में घुल जाएगा और फिर उसका जन्म नहीं होगा और वह चौरासी रूप में विभक्त नहीं होगा। संयोग से नदी क्षिप्रा को आने में विलम्ब हो गया और राक्षस ने चौरासी रूप धारण कर लिए। बहिन क्षिप्रा ने जब यह देखा तो उसने शंकरजी पर जल की वर्षा कर दी, जिससे शंकर जी चौरासी टुकड़ों में विभक्त हो गये और उन्होंने दूषण के चौरासी टुकड़ों का संहार कर दिया। ये ही शंकरजी के चौरासी टुकड़े उज्जैन नगर में तथा नगर के चारों ओर चौरासी महादेव के रूप में विराजमान हैं। श्रद्धालु यहाँ पर दर्शन कर आशीर्वाद प्राप्त करते हैं।

लेख के विस्तारभय से मैं यहाँ चौरासी महादेवों की सूची नहीं दे रही हूँ। हरसिद्धि मंदिर के पाश्र्व में संतोषी माता मंदिर प्रांगण में स्थित श्री अगस्तेश्वर महादेव मंदिर से चौरासी महादेव की यात्रा का प्रारंभ किया जाता है और यहाँ पर पुनः दर्शन लाभ लेकर यात्रा का समापन किया जाता है। यहीं यात्रा का अन्तिम पड़ाव है। ऐसी मान्यता है कि मानव यदि इनके सम्पूर्ण दर्शन श्रद्धा भक्ति से करता है तो उसे चौरासी लाख योनियों से मुक्ति प्राप्त होती है। उज्जैनवासी परस सौभाग्यशाली हैं कि पुरुषोत्तम मास में उन्हें चौरासी महादेव सहज उपलब्ध हैं।

भारत की सनातन परम्परा प्राचीन है। हमारा ज्योतिष-शास्त्र विज्ञान सम्मत है। सूर्यमास तथा चन्द्रमास के अनुसार पृथ्वी के घूर्णन की गति में प्रति वर्ष ग्यारह दिन का अन्तर होता है। तीन वर्ष में यह अन्तर लगभग एक मास का हो जाता है। सनातन धर्म में खगोल वैज्ञानिकों, गणितज्ञों तथा ज्योतिषियों ने प्रत्येक तीन वर्ष में एक माह बढ़ाकर अधिक मास की ज्योतिषीय परम्परा का प्रणयन किया है। चैत्र माह से लेकर फाल्गुन माह तक कोई भी एक माह प्रत्येक तीन वर्ष में अधिक मास के रूप में ज्योतिष शास्त्र के आधार से निर्धारित है। प्रत्येक माह किसी न किसी देवता को समर्पित है और उसी देवता के पूजन का विशेष महत्व है। अधिक मास के स्वामी स्वयं भगवान् विष्णु है। इसीलिये अधिक मास पुरुषोत्तम मास के रूप में भी जाना जाता है। सन् 2023 में ज्योतिषियों द्वारा श्रावण मास अधिक मास के रूप में निर्धारित किया गया है। वैसे श्रावण मास शिवाराधना का मास है। अतरू इस माह में विष्णु भगवान् के साथ ही शिवपूजन का भक्तगणों के लिये विशेष महत्व है। अधिक मास की अवधारणा यह सिद्ध करती है कि प्राचीनकाल में भी हमारी ज्योतिषीय, गणितीय तथा भौगोलिक गणना कितनी सटीक एवं समृद्धिशाली थी। आधुनिक समय के वैज्ञानिक, गणिताचार्य तथा ज्योतिषीगण अपनी स्वीकारोक्ति इसे प्रदान करते हैं। हमें इस बात का गर्व है कि विज्ञान, गणित तथा ज्योतिष शास्त्र के चरम पर हम अग्रसर हो चुके थे। सनातन परम्परा में सूर्य और चन्द्र मास का अन्तर लगभग ग्यारह दिन का होता है, जिसे प्रत्येक तीन वर्ष में अधिक मास के रूप में समायोजित कर लिया जाता है।

***

॥ ब्रह्माण्डपुराणोक्त श्रीनृसिंहकवच॥

हिन्दी-भावानुवाद : अंकुर नागपाल

विष्णु के दशावतारों में चतुर्थ नृसिंहावतार भक्तों के रक्षक के रूप में प्रसिद्ध रहे हैं। जब भक्त उन्हें पुकारते हैं तो शीघ्र आकर रक्षा करते हैं। जैसे उन्होंने भक्ति प्रह्लाद के लिए हिरण्यकशिपु का संहार किया। ब्रह्माण्ड-पुराण का यह नृसिंह कवच एक स्वतन्त्र स्तोत्र के रूप में प्रख्यात है अतः इसकी अनेक पाण्डुलिपियाँ भी उपलब्ध हैं और पुराणों के साथ जो पाठ है उससे विशिष्ट पाठ हमें स्वतन्त्र रूप से मिलते हैं। वैद्य एस्. वी. राधाकृष्ण शास्त्री (श्रीरंगम्) ने 'श्रीविष्णुस्तुतिमञ्जरी' (भाग 2) में इसके पाठ का सुन्दर संकलन किया है। इस कवच का हिन्दी अनुवाद उलब्ध नहीं था, अतः श्रीलाल बहादुर शास्त्री राष्ट्रीय संस्कृत विश्वविद्यालय में विशिष्टाद्वैत वेदान्त के शोधछात्र अंकुर नागपालजी ने इसका सुन्दर अनुवाद कर प्रेषित किया है। हमें आशा है कि धर्मायण के पाटकों को यह रुचिकर लगेगा।

[पूर्वपीठिका—]

नृसिंहकवचं वक्ष्ये प्रह्लादेनोदितं पुरा।
सर्वरक्षाकरं पुण्यं सर्वोपद्रवनाशनम्॥1॥
सर्वसम्पत्करं चैव स्वर्गमोक्षप्रदायकम्।

अब मैं पूर्वकाल में प्रह्लादजी के द्वारा कहे गए पुण्यमय नृसिंहकवच को कहूँगा; जो सब प्रकार से रक्षा करने वाला, सभी उपद्रवों का नाश करने वाला, सभी सम्पत्तियों को देने वाला तथा स्वर्ग एवं मोक्ष को भी प्रदान करने वाला है।

[ध्यान—]

ध्यात्वा नृसिंहं देवेशं हेमसिंहासनस्थितम्॥2॥
विवृतास्यं त्रिनयनं शरदिन्दुसमप्रभम्।
लक्ष्म्यालिङ्गितवामाङ्गं विभूतिभिरुपाश्रितम्॥3॥

मूलपाठ-सन्दर्भ : 'श्रीविष्णुस्तुतिमञ्जरी' (भाग 2), वैद्य एस्.वी. राधाकृष्ण शास्त्री (श्रीरंगम्) द्वारा सम्पादित एवं श्री महापेरियवल् ट्रस्ट (बैंग्लोर) द्वारा प्रकाशित, 2007 ई., पृष्ठ 608-612 ।

चतुर्भुजं कोमलाङ्गं स्वर्णकुण्डलशोभितम् ।
सरोजशोभितोरस्कं रत्नकेयूरमुद्रितम् ॥4॥
तप्तकाञ्चनसङ्काशं पीतनिर्मलवाससम् ।
इन्द्रादिसुरमौलिस्थस्फुरन्माणिक्यदीप्तिभिः ॥5॥
विराजितपदद्वन्द्वं शङ्खचक्रादिहेतिभिः ।
गरुत्मता च विनयात् स्तूयमानं मुदाऽन्वितम् ॥6॥
स्वहृत्कमलसंवासं कृत्वा तु कवचं पठेत् ।

स्वर्ण-सिंहासन पर स्थित, देवताओं के ईश्वर, खुले हुए मुख वाले, तीन नेत्रों वाले, शरद् के चन्द्रमा के समान प्रभा वाले; जिनके शरीर का बायाँ भाग लक्ष्मी के द्वारा आलिंगित है; सभी विभूतियों (ऐश्वर्यों) से युक्त, चार भुजा वाले, कोमल अंग वाले, स्वर्ण-कुण्डलों के द्वारा सुशोभित; जिनके वक्षःस्थल पर कमलपुष्प शोभा पा रहे हैं; जो रत्नों एवं केयूरों (भुजबंदों) से ढंके हुए हैं; जो तपे हुए स्वर्ण-जैसे लगते हैं; जिनका वस्त्र निर्मल पीत (पीले) वर्ण का है; इन्द्र-आदि देवताओं के मुकुटों में हिलते हुए चमकदार माणिक्यों की आभा के मध्य जिनके दोनों चरण विराजमान हैं; शंख -चक्र-आदि आयुधों तथा गरुडजी के द्वारा विनयपूर्वक जिनकी स्तुति हो रही है; उन प्रसन्नता से युक्त भगवान् नृसिंह का अपने हृदयकमल में सम्यक् वास करवाकर ही इस कवच का पाठ करना चाहिए।

[मूल कवच—]

नृसिंहो मे शिरः पातु लोकरक्षात्मसम्भवः ॥7॥
सर्वगोऽपि स्तम्भवासः फालं मे रक्षतु ध्वनिम् ।
नृसिंहो मे दृशौ पातु सोमसूर्याग्निलोचनः ॥8॥

लोगों की रक्षा करने हेतु स्वयं ही प्रकट हो जाने वाले नृसिंह मेरे सिर की रक्षा करें। सर्वत्र रहने वाले नृसिंह मेरे मुकुट (माथे) की तथा स्तम्भ में निवास करने वाले नृसिंह मेरी ध्वनि की रक्षा करें। चन्द्रमा, सूर्य और अग्नि जिनके नेत्र हैं; वे नृसिंह मेरे दोनों नेत्रों की रक्षा करें।

स्मृतिं मे पातु नृहरिर्मुनिवर्यस्तुतिप्रियः ।
नासां मे सिंहनासस्तु मुखं लक्ष्मीमुखप्रियः ॥9॥

श्रेष्ठ मुनियों द्वारा की जाने वाली स्तुति जिन्हें प्रिय हैं, वे नृसिंह मेरी स्मृति की; सिंह की नाक वाले नृसिंह मेरी नाक की तथा लक्ष्मी का मुख जिन्हें प्रिय है, वे नृसिंह मेरे मुख की रक्षा करें।

सर्वविद्याधिपः पातु नृसिंहो रसनां मम ।
वक्त्रं पात्विन्दुवदनः सदा प्रह्लादवन्दितः ॥10॥

सभी विद्याओं के अधिपति नृसिंह मेरी जिह्वा की रक्षा करें। सदा प्रह्लाद द्वारा वन्दित तथा चन्द्रमा के समान मुख वाले नृसिंह मेरे मुख की रक्षा करें।

नृसिंहः पातु मे कण्ठं स्कन्धौ भूभरणान्तकृत्।
दिव्यास्त्रशोभितभुजो नृसिंहः पातु मे भुजौ॥11॥

नृसिंह मेरे कण्ठ की रक्षा करें। जगत् का पालन एवं संहार करने वाले नृसिंह मेरे दोनों कँधों की रक्षा करें। दिव्य अस्त्रों से शोभा पा रही भुजाओं वाले नृसिंह मेरी भुजाओं की रक्षा करें।

करौ मे देववरदो नृसिंहः पातु सर्वतः।
हृदयं योगिसाध्यश्च निवासं पातु मे हरिः॥12॥

देवताओं को वरदान देने वाले नृसिंह सभी ओर से मेरे दोनों हाथों की रक्षा करें। योगियों के साध्य (प्राप्य) श्रीहरि मेरे हृदय एवं घर की रक्षा करें।

मध्यं पातु हिरण्याक्षवक्षःकुक्षिविदारणः।
नाभिं मे पातु नृहरिः स्वनाभिब्रह्मसंस्तुतः॥13॥

हिरण्याक्ष (अर्थात् स्वर्णिम नेत्रों वाले—हिरण्यकशिपु; लक्ष्यार्थ) के पेट को फाड़ने वाले मेरे शरीर के मध्यभाग की तथा अपनी नाभि से उत्पन्न हुए ब्रह्माजी द्वारा संस्तुत नृसिंह मेरी नाभि की रक्षा करें।

ब्रह्माण्डकोटयः कट्यां यस्यासौ पातु मे कटिम्।
गुह्यं मे पातु गुह्यानां मन्त्राणां गुह्यरूपदृक्॥14॥

जिसकी कमर में करोड़ों ब्रह्माण्ड विद्यमान हैं, वे नृसिंह मेरी कमर की तथा गोपनीय मन्त्रों के गुप्त रूप (अर्थ) को धारण करने वाले नृसिंह मेरे गुप्तांग की रक्षा करें।

ऊरू मनोभवः पातु जानुनी नररूपधृक्।
जङ्घे पातु धराभारहर्ता योऽसौ नृकेसरी॥15॥

अपने भक्त के मन में प्रकट होने वाले नृसिंह मेरी ऊरू की तथा मनुष्यरूप को धारण करने वाले नृसिंह मेरे घुटनों की रक्षा करें। जो इस धरती के भार को हरने वाले हैं, वे नृसिंह मेरी जँघाओं की रक्षा करें।

सुरराज्यप्रदः पातु पादौ मे नृहरीश्वरः।
सहस्रशीर्षा पुरुषः पातु मे सर्वशस्तनुम्॥16॥

देवताओं को राज्य प्रदान करने वाले भगवान् नृसिंह मेरे चरणों की रक्षा करें। हज़ार सिरों वाले परमपुरुष सब प्रकार से मेरे शरीर की रक्षा करें।

महोग्रः पूर्वतः पातु महावीराग्रजोऽग्रितः।
महाविष्णुर्दक्षिणे तु महाज्वालस्तु नैर्ऋतौ॥17॥

महान् उग्र नृसिह पूर्व दिशा में, सभी महान् वीरों में सबसे पहले जन्म लेने वाले नृसिंह अग्नि की दिशा (दक्षिण-पूर्व) में, महाविष्णु दक्षिण दिशा में तथा जिनकी ज्वालाएँ महान् हैं, वे नृसिंह निर्ऋति की दिशा (दक्षिण-पश्चिम) में मेरी रक्षा करें।

पश्चिमे पातु सर्वेशो दिशि मे सर्वतोमुखः।
नृसिंहः पातु वायव्यां सौम्यां भूषणविग्रहः॥18॥

सर्वेश्वर नृसिंह पश्चिम दिशा में, सभी ओर मुख रखने वाले नृसिंह वायव्य (उत्तर-पश्चिम) दिशा में तथा जिनके विग्रह पर आभूषण हैं; वे नृसिंह चन्द्रमा की दिशा (उत्तर) में मेरी रक्षा करें।

ईशान्यां पातु भद्रो मे सर्वमङ्गलदायकः।
संसारभयतः पातु मृत्योर्मृत्युर्नृकेसरी॥19॥

ईशान/शिव की दिशा (उत्तरपूर्व) में भद्र (कल्याणकारी) नृसिंह, जो सभी मंगलों के दाता हैं, मेरी रक्षा करें। मृत्युरूपी संसारभय से साक्षात् मृत्युरूप नृसिंह मेरी रक्षा करें।

[फलश्रुति—]

इदं नृसिंहकवचं प्रह्लादमुखमण्डितम्।
भक्तिमान् यः पठेन्नित्यं सर्वपापैः प्रमुच्यते॥20॥
पुत्रवान् धनवांल्लोके दीर्घायुरुपजायते।
यं यं कामयते कामं तं तं प्राप्नोत्यसंशयम्॥21॥
सर्वत्र जयमाप्नोति सर्वत्र विजयी भवेत्।

इस नृसिंहकवच से प्रह्लादजी का मुख मण्डित (भूषित) रहता है। जो भक्तिमान् मनुष्य नित्य इसका पाठ करता है, वह सभी पापों से पूर्णतः मुक्त हो जाता है। इस लोक में वह पुत्रवान्, धनवान् तथा दीर्घायु हो जाता है। वह जो-जो चाहता है, निश्चित ही उस-उस अभीष्ट को प्राप्त करता है। उसको सर्वत्र जय मिलती है, वह सर्वत्र विजयी होता है।

भूम्यन्तरिक्षदिव्यानां ग्रहाणां विनिवारणम्॥22॥
वृश्चिकोरगसम्भूतविषापहरणं परम्।
ब्रह्मराक्षसयक्षाणां दूरोत्सारणकारणम्॥23॥

यह कवच भूमि, अन्तरिक्ष एवं आकाश में रहने वाले ग्रहों का विशेषतः निवारण करने वाला है। यह वृश्चिक एवं सर्पों से निकले विष का अपहरण करने वाला श्रेष्ठ कवच है। यह कवच ब्रह्मराक्षसों एवं यक्षों को दूर से ही भगाने वाला है।

[प्रयोगविधि—]

भूर्जे वा तालपत्रे वा कवचं लिखितं शुभम्।
करमूले धृतं येन सिध्येयुः कर्मसिद्धयः॥24॥

भोजपत्र अथवा ताळपत्र के ऊपर लिखा हुआ यह शुभ कवच जिसके द्वारा अपने भुजमूल में धारण किया जाता है, उसके सभी कर्म एवं सिद्धियाँ फलीभूत होते हैं।

देवासुरमनुष्येषु स्वं स्वमेव जयं लभेत्।
एकसन्ध्यं त्रिसन्ध्यं वा यः पठेन्नियतो नरः॥25॥
सर्वमङ्गलमाङ्गल्यं भुक्तिं मुक्तिं च विन्दति।

जो संयमी मनुष्य एक सन्ध्या में अथवा तीनों सन्ध्या में इसका पाठ करता है; वह देवताओं, असुरों एवं मनुष्यों पर भी अपनी जय प्राप्त कर लेता है। वह सभी मंगलों से भी अधिक श्रेष्ठ—मंगल को तथा भोग एवं मोक्ष को प्राप्त कर लेता है।

द्वात्रिंशतिसहस्राणि पठेच्छुद्धात्मनां नृणाम् ॥26॥
कवचस्यास्य मन्त्रस्य मन्त्रसिद्धिः प्रजायते।

इस कवचरूपी मन्त्र के बत्तीस हज़ार पाठ करने पर शुद्ध मन वाले लोगों को मन्त्रसिद्धि हो जाती है।

अनेन मन्त्रराजेन कृत्वा भस्माभिमन्त्रणम् ॥27॥
तिलकं विन्यसेद्यस्तु तस्य ग्रहभयं हरेत्।

इस [कवचरूपी] मन्त्रराज से अभिमन्त्रित भस्म का जिसका तिलक किया जाता है, उसके ग्रहजनित भय का हरण हो जाता है।

त्रिवारं जपमानस्तु दत्तं वार्यभिमन्त्र्य च ॥28॥
प्राशयेद्यो नरो मन्त्रं नृसिंहध्यानमाचरेत्।
तस्य रोगाः प्रणश्यन्ति ये च स्युः कुक्षिसम्भवाः ॥29॥

जो मनुष्य, भगवान् नृसिंह का ध्यान करके, तीन बार इस (कवच) के जप से अभिमन्त्रित हुए जल को पी लेता है; उसके पेट में होने वाले सभी रोग पूर्णतः नष्ट हो जाते हैं।

किमत्र बहुनोक्तेन नृसिंहसदृशो भवेत्।
मनसा चिन्तितं यत्तु स तच्चाप्नोत्यसंशयम् ॥30॥

अधिक कहने से क्या! वह (साधक) नृसिंह भगवान् के समान हो जाता है। उसके द्वारा मन से जो सोचा जाता है, निश्चित ही वह उसको प्राप्त हो जाता है।

[नमस्कार—]

गर्जन्तं गर्जयन्तं निजभुजपटलं स्फोटयन्तं हठन्तं
दीप्यन्तं तापयन्तं दिवि भुवि दितिजं क्षेपयन्तं क्षिपन्तम्।
क्रन्दन्तं रोषयन्तं दिशि दिशि सततं संहरन्तं भरन्तं
वीक्षन्तं घूर्णयन्तं शरनिकरशतैर्दिव्यसिंहं नमामि ॥31॥

स्वयं गर्जना करके क्रोधपूर्वक देखते हुए दितिपुत्र (हिरण्यकशिपु) से भी गर्जना करवा देने वाले—उसको बलात् आकाश में उछालकर पृथिवी पर पटककर चीर देने वाले एवं संहार करने वाले—अपनी भुजाओं को पटल (आधार) बनाकर उस सन्तप्त (हिरण्यकशिपु) की चीख निकलवाने वाले—अपने कई सौ बाण-समूहों से सभी दिशाओं को भर देने वाले—प्रकाशमान दिव्यसिंह (भगवान् श्रीनृसिंहदेव) को मैं नमस्कार करता हूँ।

॥ इति श्रीब्रह्माण्डपुराणे श्रीनृसिंहकवचं सम्पूर्णम् ॥

(इस प्रकार श्रीब्रह्माण्डपुराण में श्रीनृसिंहकवच सम्पूर्ण हुआ)

महावीर मन्दिर समाचार

मन्दिर समाचार

(अगस्त, 2023ई.)

क्षेत्रीय वैदिक सम्मेलन के आयोजन में सह-आयोजक की भूमिका में महावीर मन्दिर

महावीर मन्दिर, पटना एवं महर्षि सान्दीपनि राष्ट्रीय वेद विद्या प्रतिष्ठान, उज्जैन के संयुक्त तत्त्वावधान में दिनांक 17 अगस्त से 19 अगस्त, 2023 तक पटना के महाराणा प्रताप भवन में विशाल वैदिक सम्मेलन हुआ। भारत सरकार के शिक्षा मन्त्रालय का स्वायत्तशासी संस्थान महर्षि सान्दीपनि राष्ट्रीय वेद विद्या प्रतिष्ठान, उज्जैन इस दिशा में तत्पर है, जिससे सम्बद्ध 125 वेद विद्यालय एवं लगभग 250 गुरु-शिष्य परम्परा की ईकाइयाँ भारतवर्ष में प्राचीन परम्परा को पुनर्जीवित करने के लिए कटिबद्ध हैं। समय-समय पर इस संस्थान के द्वारा विभिन्न प्रान्तों में वैदिक सम्मेलन एवं विद्वद्-गोष्ठी का आयोजन कराया जाता है।

बिहार की राजधानी पटना में पहली बार यह विशाल वैदिक सम्मेलन आयोजित हुआ। संस्थान की दृष्टि में यह क्षेत्रीय सम्मेलन था जिसमें उत्तर प्रदेश, बिहार, मध्यप्रदेश, उड़ीसा, बंगाल तथा मणिपुर इन छह राज्यों के लगभग 100 वैदिक गुरुओं के मुख से समवेत स्वर में वेद की सभी शाखाओं का सस्वर पाठ किया गया। साथ ही, वेद के विशिष्ट विद्वानों ने अपना व्याख्यान दिया।

भव्य शोभा-यात्रा से शुभारंभ

इस सम्मेलन का प्रारम्भ एक भव्य शोभा-यात्रा हुआ। कार्यक्रम के पहले दिन 17 अगस्त को यह शोभायात्रा महावीर मन्दिर से आरम्भ होकर कदमकुआँ रोड तथा नाला रोड होती हुई महाराणा प्रताप भवन तक पहुँची। इसके साथ वेद भगवान् की सवारी निकाली गयी। इस शोभा-यात्रा के माध्यम से वेद के संदेशों का प्रचार किया गया। रास्ते में जगह-जगह पर श्रद्धालुगण इस शोभा-यात्रा का स्वागत पूरी श्रद्धा के साथ करते रहे।

चारों वेदों का सस्वर पाठ

बिहार सहित छह राज्यों से पधारे सभी अध्यापकों ने वेद की विभिन्न शाखाओं से चयनित अंश का सस्वर पारायण किया। प्रत्येक दिन यह वेद पाठ दो सत्रों में हुआ- प्रातःकाल 6:30 से 7:30 तक तीनों दिन पाठ हुए तथा दूसरा सत्र प्रथम दिन 2:00 से 3:30, दूसरे दिन 10:00 से 11:00 और तीसरे दिन 10:00 से 12:30 तक चला। ऋग्वेद की शाकल शाखा, यजुर्वेद की माध्यन्दिन, काण्व एवं तैत्तिरीय शाखा, सामवेद की कौथुम, गुर्जर तथा राणायनीय शाखा एवं अथर्ववेद की शौनक तथा पैप्पलाद शाखा से परम्परानुसार वेद के मन्त्रों का सस्वर पारायण हुआ।

प्रथम दिन सन्ध्या में सांस्कृतिक कार्यक्रम तथा संस्कृत नाटक गुरोर्महिमा का मंचन

काव्यपाठ- इसके अन्तर्गत पं. मार्कण्डेय शारदेय ने बिहार की गौरवगाथा पर स्वरचित हिन्दी दीर्घ कविता 'देख बटोही यह बिहार है' का पाठ किया।

महावीर मन्दिर द्वारा जनहित में किए गये कार्यों का विवरण- महावीर कैंसर संस्थान की रेडियोलॉजी विभागाध्यक्ष डॉ विनीता त्रिवेदी ने महावीर मन्दिर और मन्दिर द्वारा संचालित अस्पतालों एवं अन्य प्रकल्पों पर आधारित एक प्रस्तुति रखी।

गुरु की महिमा पर आधारित 'गुरोः महात्म्यम्' नाटक का मंचन - महाराणा प्रताप भवन में आयोजित वैदिक सम्मेलन के पहले दिन संध्या समय संस्कृत नाटक का मंचन हुआ। गुरु की महिमा को परिभाषित करनेवाले नाटक 'गुरोः महात्म्यम्' का निर्देशन नवनालंदा महाविहार के संस्कृत के विभागाध्यक्ष डॉ विजय कुमार कर्ण ने किया। उन्हीं के छात्र-छात्राओं ने विभिन्न भूमिकाएं निभाई। नाटक के जरिए गुरु की महिमा को प्रस्तुत किया गया। 45 मिनट के इस नाटक में राजा की भूमिका गोपाल कुमार ने निभाई। पुरोहित की भूमिका में नेहा आर्या, गुरु की भूमिका में मनीष चौधरी, सन्यासी की भूमिका में अविनाश पांडेय, सेनापति की भूमिका में आनंद उपाध्याय और महामन्त्री की भूमिका में सुबोध कुमार ने खूब तालियां बटोरी। गौतम विकास की रूप सज्जा भी सराहनीय थी। इसके मंचन के जरिए गुरु की महिमा को पुनर्स्थापित किया गया। सद्गुरु ही सभी प्रकार के भेदभाव को हटाकर आध्यात्मिक तत्व का जागरण कर सकते हैं। केवल संस्कृत वाङ्मय का शाब्दिक ज्ञान होने से आनन्द की प्राप्ति संभव नहीं है। गुरु ही मंत्रों के तत्व का सम्यक् ज्ञान करा सकता है।

तीन दिनों के इस विशाल वैदिक सम्मेलन में देश के जाने-माने वैदिक विद्वानों सम्बन्धित विषयों पर अपना व्याख्यान दिया। इनमें डॉ देवीसहाय पाण्डेय, डा. प्रफुल्ल कुमार मिश्र तथा डा. उमाशंकर शर्मा ऋषि ने अपना व्याख्यान दिया। अयोध्या निवासी 84 वर्षीय डॉ देवीसहाय पाण्डेय 'दीप' 30 से अधिक ग्रन्थों के रचयिता है। इन्होंने चारों वेदों की व्याख्या की है, जिनमें ऋग्वेद पाँच खण्डों में चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान द्वारा प्रकाशित है। शेष तीन वेद प्रकाशनाधीन हैं। साथ ही वेद-जिज्ञासुओं के लिए 'वेदविभायूट्यूब' चैनल के माध्यम से प्रतिदिन वेदमन्त्रों की सरल व्याख्या प्रसारित कर रहे हैं। डा. प्रफुल्ल कुमार मिश्र जाने माने शिक्षाविद् हैं। वे वर्तमान में महर्षि सान्दीपनि वेद विद्या प्रतिष्ठान उज्जैन के उपाध्यक्ष हैं। डा. उमाशंकर शर्मा ऋषि पटना विश्वविद्यालय के अवकाशप्राप्त संस्कृत विभागाध्यक्ष रहे है। इन्होंने वेद, दर्शन, इतिहास आदि विविध विषयों पर कई दर्जन पुस्तकों की रचना की है।

वैदिक सम्मेलन के दूसरे दिन जीवन में वेदों के महत्त्व पर चर्चा

उज्जैन स्थित महर्षि सान्दीपनि राष्ट्रीय वेद विद्या प्रतिष्ठान और पटना के महावीर मन्दिर के संयुक्त तत्वावधान में आयोजित वैदिक सम्मेलन के दूसरे दिन मानव जीवन में वेदों के महत्त्व पर विस्तार से चर्चा हुई। चारों वेदों का अनुवाद और उनकी व्याख्या करने वाले अन्तर्राष्ट्रीय ख्यातिप्राप्त विद्वान पं देवी प्रसाद पांडेय का मुख्य व्याख्यान हुआ। अयोध्या से पधारे देवी प्रसाद पांडेय ने कहा कि संसार के सारे अच्छे कार्य यज्ञ के समान हैं। वेदों का मुख्य संदेश है- सर्वजनहिताय। सबका हित सोचना, सबका प्रिय देखना और उसकी कामना करना ही वेदों का सार है। वेदमर्मज्ञ ने बताया कि यदि हम किसी से ईर्ष्या करते हैं, किसी का बुरा सोचते हैं तो इससे हमारा रक्त दूषित हो जाता है। पटना के महाराणा प्रताप भवन में आयोजित वैदिक सम्मेलन में पं देवी प्रसाद पांडेय ने कहा कि हमें अपना जीवन यज्ञशील बनाना चाहिए। जिस प्रकार सूर्य सारे संसार को रौशनी और ऊर्जा देता है और बदले में कोई चाहत नहीं रखता, पवन देव निःशुल्क प्राणवायु प्रदान करते हैं, वैसे ही हमें भी बगैर किसी चाहत के जरूरतमंदों की मदद करनी चाहिए। उन्होंने कहा कि शास्त्र विरुद्ध आचरण पाप है। वेदों में वर्णित संदेशों को उद्धृत करते हुए देवी प्रसाद पांडेय ने कहा कि भोजन शाकाहारी, ऋतु के अनुसार और सुपाच्य करना चाहिए। हमारा जीवन एकाकी नहीं होना चाहिए। केवल स्वयं के लिए धन अर्जित करने की बजाय समाज के लिए भी धन अर्जित करना चाहिए। वेद हमें पूर्ण जीवन प्रदान करते हैं।

घर-घर जागरूकता फैलाएँगे वेद छात्र...

इस अवसर पर अपने संबोधन में महर्षि सान्दीपनि राष्ट्रीय वेद विद्या प्रतिष्ठान, उज्जैन के सचिव विरूपाक्ष भी. जड्डीपाल ने कहा कि इस वर्ष पूरे देश में विभिन्न स्थानों पर वेद जागरण यात्रा निकाली जाएगी। वेद के छात्र घर-घर जाकर वेद पढ़ने के लिए और छात्रों को प्रेरित करेंगे।

प्रथम चरण में वैसे परिवारों को लक्ष्य किया जा रहा है जहाँ पहले वेदपाठी होते थे और अब परम्परा टूट गयी है। उन घरों की युवा पीढ़ी को फिर वेद से जोड़ना है। सचिव ने बताया कि भारत सरकार ने वेद संस्कृत शिक्षा बोर्ड का गठन किया है जो सीबीएसई के समकक्ष है। इस साल पूरे देश से 1200 वेद छात्र स्कूली शिक्षा पूरी कर विश्वविद्यालय में प्रवेश पाएंगे। वर्तमान में आधिकारिक रूप से वेद पढ़नेवाले छात्रों की कुल संख्या 8200 है। जड्डीपाल ने कहा कि पटना का लिखित इतिहास 5 हजार साल पुराना है। ऐसे ऐतिहासिक शहर में वेद का प्रति वर्ष अभियान चलना चाहिए। वेद के प्रति जन जागृति लाना आज के समय की मांग है। अपने अध्यक्षीय संबोधन में पटना विश्वविद्यालय के संस्कृत के पूर्व विभागाध्यक्ष डा.उमाशंकर शर्मा ऋषि ने कहा कि वेद पर ही संपूर्ण संसार आश्रित है। वेदों के प्रति लोगों का सम्मान बढ़ रहा है। वेद सबसे पूज्य शास्त्र हैं। शास्त्रों का स्रोत ही वेद हैं। इस अवसर पर महावीर मन्दिर न्यास के सचिव आचार्य किशोर कुणाल ने अंगवस्त्र और महावीर मन्दिर प्रकाशन की पुस्तक भेंट कर अतिथियों का स्वागत किया। कार्यक्रम के दौरान महर्षि सान्दीपनि राष्ट्रीय वेद विद्या प्रतिष्ठान के उपाध्यक्ष प्रफुल्ल कुमार मिश्र, वैदिक सम्मेलन के संयोजक भवनाथ झा आदि मौजूद थे। मंच संचालन रामायण शोध संस्थान के प्राणशंकर मजूमदार ने किया। इसके पूर्व शुक्रवार को सुबह के दो सत्रों में छह राज्यों से आए वेद अध्यापकों ने चारों वेदों का पाठ किया।

वैदिक अध्यापकों और अतिथियों ने किया भ्रमण

वैदिक सम्मेलन के दूसरे दिन संध्या सत्र में वेद अध्यापकों और अन्य अतिथियों ने पटना के कुछ प्रमुख धार्मिक स्थलों का भ्रमण किया। महाराणा प्रताप भवन से वेद अध्यापकों का समूह पहले जल्ला महावीर मन्दिर गया। वहाँ हनुमान चालीसा का सामूहिक पाठ हुआ। वहाँ से वैदिक सम्मेलन के सहभागी पटना साहिब गुरूद्वारा पहुँचे और मत्था टेका। फिर पटन देवी में शीश नवाया। वैदिक सम्मेलन में भाग लेने आए इस समूह ने पटना के गंगा तटों का भी भ्रमण किया। आखिर में सभी महावीर मन्दिर पहुंचे और शाम की आरती में भाग लिया। पटना में तीन दिनों के इस वैदिक सम्मेलन में भाग लेने के लिए बिहार के अलावा उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, बंगाल, उड़ीसा और मणिपुर से वेद अध्यापक और विद्वान आए हैं।

वैदिक सम्मेलन के आखिरी दिन 100 वेद अध्यापकों को किया गया सम्मानित

संसार में कोई भाषा विश्व भाषा बन सकती है तो संस्कृत ही बन सकती है। संस्कृत में शब्दों को गढ़ने की क्षमता है। संस्कृत में 102 अरब शब्द हैं। जबकि अंग्रेजी के शब्दों की कुल संख्या लगभग 4 लाख है। संसार की अन्य भाषाओं में औसतन अधिकतम 80-85 हजार शब्द हैं। ये उद्गार हैं बिहार-झारखंड के पूर्व मुख्य सचिव विजय शंकर दूबे के, जो वैदिक सम्मेलन के समापन सत्र को संबोधित कर रहे थे। महाराणा प्रताप भवन में आयोजित तीन दिवसीय वैदिक सम्मेलन के आखिरी दिन शनिवार को समापन सत्र के मुख्य अतिथि विजय शंकर दूबे ने कहा कि ऋग्वेद की ऋचाएं लगभग 5500 साल पहले अवतरित हुईं थी। तब से आज तक ज्यों की त्यों हैं। इतने वर्षों तक ऋग्वेद के अपने वास्तविक स्वरूप में रहने की तारीफ यूनेस्को ने की है। पूर्व आईएएस अधिकारी ने कहा कि ऋग्वेद समेत सभी वेद अनन्त हैं। उन्हें किसी ने लिखा नहीं है। इन्हें पीढ़ि-दर-पीढ़ी आगे बढ़ाया गया। संसार की किसी सभ्यता में यह अनूठी

विशेषता नहीं है। महर्षि सान्दीपनि राष्ट्रीय वेद विद्या प्रतिष्ठान, उज्जैन और महावीर मन्दिर, पटना के संयुक्त तत्वावधान में आयोजित वैदिक सम्मेलन के समापन सत्र में 100 सहभागी वेद अध्यापकों को प्रमाण पत्र, अंग वस्त्र और महावीर मन्दिर की ओर विशेष उपहार के रूप में स्वर्ण परत वाला प्रतीक चिन्ह भेंट किया गया।

इस अवसर पर विशिष्ट अतिथि बिहार राज्य आपदा प्रबंधन प्राधिकरण के सदस्य उदयकान्त मिश्र ने कहा कि मौसम विज्ञान का पूर्वानुमान ज्योतिष विज्ञान पर आधारित होता है। भूकम्प, दुर्भिक्ष, वर्षा आदि के बारे में प्राच्य ज्ञान ज्यादा कारगर है। उन्होंने कहा कि मन्त्रोच्चार से देश की आपदाएं ठीक हो सकती हैं। इस अवसर पर वेद मर्मज्ञ देवी सहाय पांडेय ने हवन के दौरान स्वाहा बोलने का अर्थ समझाया।उन्होंने कहा कि स्वाहा उच्चारण करने से अहंकार का त्याग होता है। स्वाहा मतलब अर्पण करना है।

अपने सम्बोधन में महर्षि सान्दीपनि राष्ट्रीय वेद विद्या प्रतिष्ठान के सचिव विरूपाक्ष वि. जड्डीपाल ने कहा कि वेद सबसे पहला शास्त्र है। शास्त्रों में सूक्ष्म बातें हैं। इन्हें जीवन में टॉनिक की तरह थोड़ा-थोड़ा रसपान करते रहना चाहिए। जड्डीपाल ने बताया कि पिछले 36 वर्षों में महर्षि सान्दीपनि राष्ट्रीय वेद विद्या प्रतिष्ठान की ओर से 200 से ज्यादा वैदिक सम्मेलन हो चुके हैं। ऐसे सम्मेलनों का उद्देश्य वेद अध्ययन के लिए युवा पीढ़ी को सामने लाना है। प्रतिष्ठान के उपाध्यक्ष प्रफुल्ल कुमार मिश्र ने अपने संबोधन में कहा कि वेद अध्यापकों और विद्वानों द्वारा वेद पाठ और वेद के बारे में की गयी परिचर्चा बहुत उपयोगी सिद्ध होगी।

महावीर मन्दिर द्वारा वेद विद्यालय की स्थापना पर बड़ा आयोजन होगा

महावीर मन्दिर न्यास के सचिव आचार्य किशोर कुणाल ने मेजबान की भूमिका में वैदिक सम्मेलन में आए सभी वेद अध्यापकों और विद्वानों का स्वागत और आभार प्रकट किया। उन्होंने कहा कि महावीर मन्दिर द्वारा महर्षि सान्दीपनि राष्ट्रीय वेद विद्या प्रतिष्ठान के सहयोग से बिहार में वेद विद्यालय की स्थापना की जानी है। स्थापना के अवसर पर ऐसा ही बड़ा आयोजन होगा। उन्होंने वैदिक सम्मेलन के सभी सहभागियों को वेद विद्यालय के स्थापना समारोह में आने का अग्रिम न्योता भी दिया। समापन सत्र का संचालन महावीर मन्दिर की पत्रिका धर्मायण के संपादक पंडित भवनाथ झा और रामायण शोध संस्थान के प्राणशंकर मजूमदार ने किया। इसके पूर्व शनिवार को दो सत्रों में ऋग्वेद, यजुर्वेद, अथर्ववेद और सामवेद की विभिन्न शाखाओं के अध्यापकों ने वेद पाठ किया। पटना में पहली बार हुए वैदिक सम्मेलन में बिहार के अलावा उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, बंगाल, उड़ीसा और मणिपुर के वेद संस्थानों से 100 से अधिक अध्यापक और विद्वान आए थे।

महावीर मन्दिर में गोस्वामी तुलसीदासजी की जयंती, दिनांक 23 अगस्त, 2023ई.

महावीर मन्दिर प्रांगण में स्थापित गोस्वामी तुलसीदास जी की प्रतिमा पर माल्यार्पण कर उन्हें नमन किया गया। इसके बाद आरती हुई। शंखनाद भी हुआ। महावीर मन्दिर के पुजारी राजकुमार दास और ब्रह्मदेव दास ने गोस्वामी तुलसीदास का विधिवत पूजन किया। आखिर में उपस्थित भक्तों के बीच प्रसाद का वितरण किया गया। कार्यक्रम के मुख्य अतिथि आचार्य अशोक अंशुमाली ने इस अवसर पर कहा कि रामचरितमानस को पंचम वेद मानना अतिशयोक्ति नहीं होगी। उन्होंने कहा कि रामचरितमानस जिस प्रकार जनमानस में रचा-बसा हुआ है, उससे उसकी व्यापकता और संपूर्णता का अंदाजा लगाया जा सकता है। आचार्य अंशुमाली ने कहा कि आज से 500 वर्ष पूर्व जब भारतीय वाड़्मय संकटग्रस्त था, हमारी संस्कृति पर कुठाराघात हो रहा था, उसी संक्रमण काल में गोस्वामी तुलसीदास जी का अवतरण हुआ। गोस्वामी जी ने रामचरितमानस के जरिए संपूर्ण भारतीय वाड़्मय को एक सूत्र में पिरोया। आचार्य अंशुमाली ने कहा कि रामचरितमानस को संपूर्णता में समझने और उसका विश्लेषण करने से हम उसके सही भावार्थ को समझ सकते हैं।

महावीर मन्दिर की पत्रिका धर्मायण के संपादक पंडित भवनाथ झा ने इस अवसर पर गोस्वामी तुलसीदास जी को वंदन करते हुए कहा कि गोस्वामी जी ने रामचरितमानस के अलावा एक दर्जन प्रमुख ग्रन्थों आदि की रचना की। इनमें विनय-पत्रिका, कवितावली, दोहावली, पार्वती मंगल, रामलला नहछू, बैरवे रामायण आदि प्रमुख हैं। घर-घर पाठ होने वाले हनुमान चालीसा की रचना कर वे जन-जन की वाणी में बसे हुए हैं। महावीर मन्दिर में आयोजित गोस्वामी तुलसीदास जी जयंती समारोह महावीर मन्दिर के अधीक्षक के सुधाकरन, वरीय प्रबन्धक पी एस चन्द्रन, ज्योतिषाचार्य मुक्ति कुमार झा आदि उपस्थित थे।

महावीर मन्दिर में झूले पर दर्शन दे रहे सीता-राम

सावन की झड़ी के बीच महावीर मन्दिर के गर्भगृह में विराजमान श्रीराम अपनी भार्या सीताजी और भ्राता लक्ष्मण संग गर्भगृह से निकलकर झूले पर भक्तों को दर्शन दे रहे हैं। शालीग्राम भगवान् भी झूले पर विराजमान रहते हैं। नागपंचमी के दिन विगत सोमवार की शाम से भक्त प्रतिदिन संध्या काल में ठाकुर जी का झूले पर विराजमान स्वरूप का दर्शन कर रहे हैं। गजेन्द्र महाराज के नेतृत्व में भजन-कीर्तन की मंडली ठाकुर जी को प्रतिदिन संध्याकाल में संगीतमय भजन सुना रही है। एक दर्जन से ज्यादा कलाकार ठाकुर जी को ढोलक-झाल और अन्य वाद्ययंत्रों के साथ भजन सुना रहे हैं। सावन के हरे-

भरे सुहाने मौसम का आनंद जैसे ठाकुर जी भी उठा रहे हैं। भक्तगण भी ठाकुर जी को झूला झूलाकर भक्तिरस में सराबोर हो रहे हैं। ठाकुर जी को झूला झुलाने के लिए भक्तों के बीच होड़-जैसी रहती है। प्रतिदिन शयन आरती के समय ठाकुर जी वापस गर्भगृह में शयन के लिए चले जाते हैं। महावीर मन्दिर न्यास के सचिव आचार्य किशोर कुणाल ने बताया कि विगत कई दशकों से महावीर मन्दिर में यह परम्परा चल रही है। सावन महीने में नागपंचमी से पूर्णिमा तक कुल 11 दिन भगवान् झूले पर भक्तों को दर्शन देते हैं। बांके बिहारी समेत ठाकुरजी के दूसरे प्रमुख मन्दिरों की तरह महावीर मन्दिर में भी सावन महीने में ठाकुर जी का यह स्वरूप भक्त देख पाते हैं।

महावीर आरोग्य संस्थान में कांप्लेक्स सिस्टिक ओवेरियन मास का सफल ऑपरेशन

महावीर आरोग्य संस्थान में डॉ.क्टरों ने सिस्टिक ओवेरियन मास का सफल ऑपरेशन किया है। ऑपरेशन के जरिए रांची की 50 वर्षीया महिला बेबी कुमारी के पेट से 5 किलोग्राम वजन का बड़ा गोला निकाला गया। महिला पिछले पांच वर्षों से पेट दर्द से परेशान थी। रांची में काफी इलाज के बाद भी राहत नहीं मिलने पर महिला ने पटना आकर महावीर आरोग्य संस्थान में दिखलाया। महावीर मन्दिर न्यास द्वारा संचालित महावीर आरोग्य संस्थान के स्त्री रोग विभाग की डॉ.क्टर रावी और डा. श्वेता गुप्ता ने मरीज को देखा। फिर महिला का सिटी स्कैन और एमआरआई जांच कराया गया। उसमें महिला के पेट में कांप्लेक्स सिस्टिक ओवेरियन मास का पता चला। महावीर आरोग्य संस्थान के गैस्ट्रो सर्जन डा.संजीव कुमार के नेतृत्व में डा. रावी, डा. श्वेता और निश्चेतना चिकित्सक डा. अरविन्द आदित्य की टीम ने सर्जरी के जरिए कॉम्प्लेक्स सिस्टिक ओवेरियन मास को निकाल कर महिला को राहत दिलाई। डा.संजीव ने बताया कि महिला के पेट में बड़ा गोला होने के कारण उसकी आंत पर बहुत दबाव हो रहा था। उसके कारण महिला को दैनिक क्रियाकर्म करने में भी बहुत पीड़ा होती थी। डा.संजीव ने बताया कि पोस्ट ऑपरेशन समुचित देखभाल के बाद महिला को महावीर आरोग्य संस्थान से शुक्रवार को छुट्टी दे दी गयी। अस्पताल के शासी निकाय के अध्यक्ष रासबिहारी सिंह और कार्यकारी निदेशक डा.अभय प्रसाद ने पड़ोसी राज्य से आयी मरीज की जटिल सफल सर्जरी के लिए डॉक्टरों की टीम को बधाई दी है।

(महावीर मन्दिर के जनसम्पर्क पदाधिकारी श्री विवेक विकास द्वारा जारी प्रेस विज्ञप्ति से सम्पादित)

***

महावीर मन्दिर, पटना के सह-संयोजकत्व में आयोजित

क्षेत्रीय वैदिक सम्मेलन में भाग लेने वाले वैदिकों की सूची

1. श्री रूप कुमार मिश्र, श्री सीताराम वैदिक विश्वविद्यालय, सामवेद कौथुम शाखा, पश्चिम बंगाल
2. श्री चेतन शर्मा, महर्षि वशिष्ट वैदिक गुरुकुल, शुक्ल यजुर्वेद काण्व शाखा, मुरैना
3. श्री श्यामसुंदर तिवारी, अन्नपूर्णेश्वरी वेद पाठशाला, शिवनी, सामवेद कौथुम शाखा गुर्जर पद्धति, शिवनी
4. श्री अक्षय तिवारी, संत पशुपति नाथ आदर्श संस्थान, शुक्ल यजुर्वेद माध्यन्दिन शाखा, बिहार
5. श्री अजीत कुमार तिवारी, संत पशुपति नाथ आदर्श संस्थान, अथर्ववेद शौनक शाखा, बिहार
6. श्री अनिल कुमार चौबे, संत गोपिया बाबा संस्कृत वेद विद्यालय, शुक्ल यजुर्वेद माध्यन्दिन शाखा, बिहार
7. श्री कौशल किशोर पाण्डेय, श्री जगन्नाथ वेद विद्यापीठ, अथर्ववेद शौनक शाखा, बिहार
8. श्री पवन दुबे, बाबा हरिराम ब्रह्मवेद विद्यालय, शुक्ल यजुर्वेद माध्यन्दिन शाखा, बिहार
9. श्री राधेश्याम झा, सूर्यनारायण मिश्र मधुबनी, शुक्ल यजुर्वेद माध्यन्दिन शाखा, बिहार
10. श्री विकास कुमार पाण्डेय, श्री सीताराम वेद वेदांग शिक्षण अनुसंधान केन्द्र, अथर्ववेद शौनक शाखा, बिहार
11. श्री अविनाश कुमार पाण्डेय, बाबा ब्रह्मेश्वरनाथ वेद विद्यालय, अथर्ववेद शौनक शाखा, बिहार
12. श्री सर्वेश कुमार तिवारी, पं. लक्ष्मीकांत तिवारी वेदविद्या संस्थान, शुक्ल यजुर्वेद माध्यन्दिन शाखा, बिहार
13. श्री हरप्रसाद झा, संत पशुपतिनाथ आदर्श संस्थान, शुक्ल यजुर्वेद माध्यन्दिन शाखा, बिहार
14. श्री विवेकानंद चौबे, श्री गायत्री वेद विद्यालय, अथर्ववेद शौनक शाखा, बिहार
15. श्री शशि कुमार मिश्र, श्री सीताराम वेद वेदांग शिक्षण, शुक्ल यजुर्वेद माध्यन्दिन शाखा, बिहार
16. श्री निखिल त्रिवेदी, स्वामी वेदांती वेद विद्यापीठ, वाराणसी, शुक्ल यजुर्वेद काण्व शाखा, उत्तर प्रदेश
17. श्री महेश तिवारी, स्वामी वेदांती वेद विद्यापीठ, वाराणसी, अथर्ववेद शौनक शाखा, उत्तर प्रदेश
18. श्री ज्ञानेन्द्र चन्द्र तिवारी, स्वामी वेदांती वेद विद्यापीठ, वाराणसी, ऋग्वेद शाकल शाखा, उत्तर प्रदेश
19. श्री अविनाश पाण्डेय, स्वामी वेदांती वेद विद्यापीठ, वाराणसी, सामवेद राणायनीय शाखा, उत्तर प्रदेश
20. श्री रामजी प्रसाद मिश्र, गरुडध्वज वेद पाठशाला, नैमिषारण्य, शुक्ल यजुर्वेद माध्यन्दिन शाखा, उत्तर प्रदेश
21. श्री द्वारिकानाथ मिश्र, श्री राधाकृष्ण वेद विद्यालय, झूसी, ऋग्वेद शाकल शाखा, उत्तर प्रदेश
22. श्री इन्द्रदेव मिश्र, श्रीराम वेद विद्यालय, अयोध्या, शुक्ल यजुर्वेद माध्यन्दिन शाखा, उत्तर प्रदेश
23. श्री ऋषभ शर्मा, श्रीराम वेद विद्यालय, अयोध्या, सामवेद कौथुम शाखा, उत्तर प्रदेश
24. श्री अनन्तेश्वर कुमार मिश्र, आचार्य गोपालचन्द्र मिश्र वैदिक उन्नयन संस्थान, वाराणसी, ऋग्वेद शाकल शाखा, उत्तर प्रदेश
25. श्री हरेकृष्ण पण्डा, जयेन्द्र सरस्वती वेद पाठशाला, चित्रकूट, अथर्ववेद पैप्लाद शाखा, उत्तर प्रदेश
26. श्री संतोष पाठक, जयेन्द्र सरस्वती वेद पाठशाला, चित्रकूट, सामवेद कौथुम शाखा, उत्तर प्रदेश
27. श्री श्रीनिवास एल. पुराणिक, श्री पट्टाभिराम शास्त्री वेद मीमांसा अनुसंधान केन्द्र, वाराणसी, शुक्ल यजुर्वेद

काण्व शाखा, उत्तर प्रदेश

28. श्री ज्योति स्वरूप तिवारी, श्री पट्टाभिराम शास्त्री वेद मीमांसा अनुसंधान केन्द्र, वाराणसी, अथर्ववेद शौनक शाखा, उत्तर प्रदेश
29. श्री जयन्तपति त्रिपाठी, स्वामी नारायणानन्द तीर्थ वेद विद्यालय, वाराणसी, अथर्ववेद शौनक शाखा, उत्तर प्रदेश
30. श्री सुरेश शर्मा, स्वामी नारायणानन्द तीर्थ वेद विद्यालय, वाराणसी,कृष्णयजुर्वेद हिरण्यकेशी शाखा, उत्तर प्रदेश
31. श्री ओमप्रकाश द्विवेदी, भारतीय चतुर्धाम वेद भवन न्यास, प्रयागराज, अथर्ववेद शौनक शाखा, उत्तर प्रदेश
32. श्री दिलीप राम नागर,जगद्गुरु शंकराचार्य स्वामी स्वरूपानन्द सरस्वती न्याय-वेदान्त महाविद्यालय, सामवेद कौथुम शाखा गुर्जर पद्धति, उत्तर प्रदेश
33. श्री महेश कुलकर्णी जगद्गुरु शंकराचार्य स्वामी स्वरूपानन्द सरस्वती न्याय-वेदान्त महाविद्यालय, सामवेद जैमिनि शाखा, उत्तर प्रदेश
34. श्री मणि कुमार झा, जगद्गुरु शंकराचार्य स्वामी स्वरूपानन्द सरस्वती न्याय-वेदान्त महाविद्यालय, शुक्ल यजुर्वेद माध्यन्दिन शाखा, उत्तर प्रदेश
35. श्री उमेश कुमार पाठक, श्री बाबा नीम करोरी जी वेद विद्यालय, लखनऊ, सामवेद कौथुम शाखा, उत्तर प्रदेश
36. श्री ब्रजमोहन पाण्डेय, स्वामी नरोत्तमानन्द गिरि वेद विद्यालय, झूंसी, सामवेद कौथुम शाखा उत्तर प्रदेश
37. श्री खेमलाल न्यौपाने, स्वामी नरोत्तमानन्द गिरि वेद विद्यालय, झूंसी, अथर्ववेद शौनक शाखा, उत्तर प्रदेश
38. श्री रंजीत तिवारी, पाणिनी कन्या महाविद्यालय वाराणसी, अथर्ववेद शौनक शाखा, उत्तर प्रदेश
39. श्री मणिकान्त मिश्र, श्री रामदास काठियाबाबा वेद पाठशाला, वाराणसी, ऋग्वेद शाकल शाखा, उत्तर प्रदेश
40. श्री गोपाल दहाल, महर्षि भारद्वाज वैदिक गुरुकुल, कानपुर, शुक्ल यजुर्वेद माध्यन्दिन शाखा, उत्तर प्रदेश
41. श्री गौकुल भण्डारी चल्ला सुबा रावशास्त्री वेद विद्यालय एवं न्याय अनुसंधान केन्द्र, वाराणसी, शुक्ल यजुर्वेद माध्यन्दिन शाखा, उत्तर प्रदेश
42. श्री पद्मभूषण मिश्र, श्री रामदास काठियाबाबा वेद पाठशाला, वाराणसी, सामवेद कौथुम शाखा, उत्तर प्रदेश
43. श्री राकेश भट्ट, स्वामी करपात्री वेद शास्त्र अनुसन्धान केन्द्र, वाराणसी, अथर्ववेद शौनक शाखा, उत्तर प्रदेश
44. श्री राहुल पाण्डेय, चल्ला सुब्बा राव शास्त्री वेद विद्यालय एवं न्याय अनुसंधान केन्द्र, वाराणसी, सामवेद कौथुम शाखा, उत्तर प्रदेश
45. श्री विद्यानन्द झा, श्री रामदास काठियाबाबा वेद पाठशाला, वाराणसी, शुक्ल यजुर्वेद माध्यन्दिन शाखा , उत्तर प्रदेश
46. श्री विपिन चन्द्र झा, स्वामी करपात्री वेद शास्त्र अनुसंधान केन्द्र, वाराणसी, सामवेद कौथुम शाखा, उत्तर प्रदेश
47. श्री संजय कुमार पाण्डेय, श्री रामदास काठियाबाबा वेद पाठशाला, वाराणसी, शुक्ल यजुर्वेद माध्यन्दिन शाखा, उत्तर प्रदेश
48. श्री सनत कुमार त्रिपाठी, आचार्य श्री नाथ शास्त्री वेद पाठशाला, अस्सी, वाराणसी, शुक्ल यजुर्वेद माध्यन्दिन शाखा, उत्तर प्रदेश

49. श्री पूरण अधिकारी, त्रिवेणी संस्कृत वेद विद्यापीठ, सिलीगुडी, शुक्ल यजुर्वेद माध्यन्दिन शाखा
50. श्री महामाया दत्त पाराशर, ग्राम बरगदी पो. कुम्हराळे, लखनऊ, शुक्ल यजुर्वेद माध्यन्दिन शाखा, उत्तर प्रदेश
51. श्री अजय शुक्ला, अमितारंजन शंकरीबाल वेद विद्या मन्दिर, होमोगली, शुक्ल यजुर्वेद काण्व शाखा, पश्चिम बंगाल
52. श्री राजन कुमार पाण्डेय, आर्षविद्या शिक्षण प्रशिक्षण सेवा संस्थान, मोतिहारी, ऋग्वेद शाकल शाखा, बिहार
53. श्री विकास कुमार पाण्डेय, आर्षविद्या शिक्षण प्रशिक्षण सेवा संस्थान, मोतिहारी, कृष्ण यजुर्वेद तैत्तिरीय शाखा, बिहार
54. श्री सुधाकर पाण्डेय, आर्षविद्या शिक्षण प्रशिक्षण सेवा संस्थान, मोतिहारी, शुक्ल यजुर्वेद माध्यन्दिन शाखा, बिहार
55. श्री सुधीर दत्त पाराशर, आर्षविद्या शिक्षण प्रशिक्षण सेवा संस्थान, मोतिहारी, शुक्ल यजुर्वेद माध्यन्दिन शाखा, बिहार
56. श्री कुन्दन कुमार पाठक, आर्षविद्या शिक्षण प्रशिक्षण सेवा संस्थान, मोतिहारी, कृष्ण यजुर्वेद तैत्तिरीय शाखा, बिहार
57. श्री अलकेश पाण्डेय, जयेन्द्र सरस्वती वेद पाठशाला मेदिनीपुर, अथर्ववेद शौनक शाखा
58. श्री ईश्वर पोखरेल, सतीदेव भाषा शिक्षा निकेतन , नदीया, शुक्ल यजुर्वेद माध्यन्दिन शाखा, पश्चिम बंगाल
59. श्री महेन्द्र नाथ बस्याल, जयेन्द्र सरस्वती वेद पाठशाला, मेदिनीपुर, शुक्ल यजुर्वेद माध्यन्दिन शाखा, पश्चिम बंगाल
60. श्री जय प्रकाश पाठक, अनुपपुर, शुक्ल यजुर्वेद माध्यन्दिन शाखा,
61. श्री भैरव पाठक, कोलकाता, शुक्ल यजुर्वेद माध्यन्दिन शाखा , पश्चिम बंगाल
62. श्री हेम अधिकारी, श्री त्रिवेणी संस्कृत वेद विद्यापीठ, सिलीगुडी, शुक्ल यजुर्वेद माध्यन्दिन शाखा, पश्चिम बंगाल
63. श्री प्रवीण कोईराला, धर्मोदय वेद विज्ञान गुरुकुलम, मणीपुर, सामवेद कौथुम शाखा, मणीपुर
64. श्री उत्तम कुमार पाठक, कोलकाता, शुक्ल यजुर्वेद माध्यन्दिन शाखा, पश्चिम बंगाल
65. श्री सोमनाथ गांगुली , श्री सीताराम वैदिक महाविद्यालय, कोलकाता, शुक्ल यजुर्वेद माध्यन्दिन शाखा, पश्चिम बंगाल
66. श्री विरेन्द्र नाथ बस्याल, श्री जयेन्द्र सरस्वती वेद पाठशाला, सीतापुर, सामवेद कौथुम शाखा, उत्तर प्रदेश
67. श्री राजकुमार मिश्र, श्री सीताराम दास ओंकारनाथ संस्कृत शिक्षा संस्थान, सामवेद कौथुम शाखा, पश्चिम बंगाल
68. श्री सतीनाथ मिश्र, शुक्ल यजुर्वेद काण्व शाखा, पश्चिम बंगाल
69. श्री राहुल कुमार मिश्र, श्री गुरुकुल, कोलकाता, सामवेद कौथुम शाखा, ओडिशा
70. श्री सत्यनारायण दास, पं. गोपाल चन्द्र वेद ज्योतिर्विज्ञान विद्यापीठ, नीलगिरि, शुक्ल यजुर्वेद काण्व शाखा, ओडिशा
71. श्री रतिकान्त पाणिग्रही, पं. गोपाल चन्द्र वेद ज्योतिर्विज्ञान विद्यापीठ, नीलगिरि, शुक्ल यजुर्वेद काण्व शाखा, ओडिशा

72. श्रीकुमार महापात्र, पुरी, शुक्ल यजुर्वेद काण्व शाखा, ओडिशा
73. जॉय बैनर्जी, कोलकाता, सामवेद कौथुम शाखा, पश्चिम बंगाल
74. पार्थ प्रतिम चक्रबोर्ती, कोलकाता, शुक्ल यजुर्वेद माध्यन्दिन शाखा, पश्चिम बंगाल
75. श्री रितिक तिवारी, कोलकाता, सामवेद कौथुम शाखा, पश्चिम बंगाल
76. श्री मलय कुमार गोस्वामी, कोलकाता, सामवेद कौथुम शाखा, पश्चिम बंगाल
77. श्री परमानन्द झा, शुक्ल यजुर्वेद माध्यन्दिन शाखा,
78. श्री अंकुर कुमार मिश्र, श्री गौरांग वेद विद्यालय, सोनारपुर
79. श्री शौविक पहारी, श्री सीताराम दास ओंकारनाथ संस्कृत शिक्षा संस्थान, शुक्ल यजुर्वेद माध्यन्दिन शाखा
80. श्री देवाशीष पाहाडी, कोलकाता, शुक्ल यजुर्वेद माध्यन्दिन शाखा
81. श्री जय शरण झा, कोलकाता, शुक्ल यजुर्वेद माध्यन्दिन शाखा
82. कौशिक पहारी, दत्तपुकुर, शुक्ल यजुर्वेद माध्यन्दिन शाखा
83. अमित कुमार पाण्डेय, पशुपतिनाथ वेद विद्यालय, पटना, शुक्ल यजुर्वेद माध्यन्दिन शाखा,
84. अमित कुमार तिवारी, पशुपतिनाथ वेद विद्यालय, पटना, शुक्ल यजुर्वेद माध्यन्दिन शाखा,
85. आनन्द मोहन तिवारी, पशुपतिनाथ वेद विद्यालय, पटना, शुक्ल यजुर्वेद काण्व शाखा,
86. अमित पाण्डेय, सामवेद जैमिनि शाखा
87. चन्द्रभूषण राय झा, समस्तीपुर, बिहार

मंगोलियाई रामकथा में शापकथा का उल्लेख

मंगोलियाई भाषा में लिखित चार राम कथाओं की खोज की है। इनमें राजा जीवक की कथा है जिसकी पाण्डुलिपि लेलिनगार्द में सुरक्षित है। जीवक जातक की कथा का अठारहवीं शताब्दी में तिब्बती से मंगोलियाई भाषा में अनुवाद हुआ था जिसके मूल तिब्बती ग्रन्थ की कोई जानकारी नहीं है। इसमें सर्वप्रथम गुरु तथा बोधिसत्त्व मञ्जुश्री की प्रार्थना की गयी है। इसके अनुसार जीवक पूर्व जन्म में बौद्ध सम्राट् थे। उन्होंने अपनी पत्नी तथा पुत्र का परित्याग कर दिया। इसी कारण उन्हें दोनों ने शाप दे दिया कि अगले जन्म में वे सन्तानहीन हो जायेंगे। जीवक की भेंट भगवान् बुद्ध से हुई। उन्होंने श्रद्धा के साथ उनका प्रवचन सुना और उन्हें अपने निवास स्थान पर आमन्त्रित किया। इस घटना के बाद जीवक की भेंट दस हजार मछुआरों से हुई। उन्होंने उन्हें अहिंसा का उपदेश दिया।

व्रत-पर्व

भाद्र, 2080 वि. सं. (1 सितम्बर-29 सितम्बर, 2023ई.)

पं. मुक्ति कुमार झा, ज्यौतिष परामर्शदाता, महावीर ज्योतिष मण्डप, महावीर मन्दिर, पटना

1. बहुला पूजा, भाद्रकृष्ण चतुर्थी, दि. 3 सितम्बर 2023ई.

बहुला चतुर्थी के दिन गौ माता की पूजा की जाती है। इस दिन गौ पूजन का महत्त्व सबसे अधिक है।

2. कृष्णजन्म की मोहरात्रि, जयन्ती-व्रत, दि. 6 सितम्बर, 2023ई.

इस रात्रि 8:07 मिनट के बाद अष्टमी तिथि हो जाती है। मध्यरात्रि में अष्टमी होने के कारण कृष्णजन्म की वेला इसी रात्रि होगी। जो लोग व्रत कर जन्मकालिक पूजा-उपासना कर पारणा करते हैं वे इस दिन व्रत करेंगे। इस वर्ष रोहिणी दि. 6 सितम्बर के दिन 2:50 से आरम्भ होकर दि. 7 को 3:17 तक है। अतः 6 की रात में अष्टमी तथा रोहिणी नक्षत्र का भी योग होने के कारण इस वर्ष का जयन्ती व्रत महत्त्वपूर्ण हो जाता है। वास्तव में श्रीकृष्ण के अवतार के उपलक्ष्य में तीन प्रकार के व्रत होते हैं- जयन्ती व्रत, जन्माष्टमी व्रत एवं जन्मोत्सव व्रत। कौन व्यक्ति कैसा व्रत रखते हैं, यह उनकी अपनी परम्परा पर निर्भर करती है। कई वर्ष जयन्ती व्रत एवं जन्माष्टमी व्रत एक दिन होता है, किन्तु इस वर्ष जन्माष्टमी व्रत तथा जन्मोत्सव व्रत एक दिन पड़ रहा है।

3. कृष्णजन्माष्टमी व्रत एवं जन्मोत्सव व्रत, 7 सितम्बर, 2023ई.

इस दिन अष्टमी पिछली रात्रि 8:07 से आरम्भ होकर इस रात्रि 8:01 बजे तक है। इस प्रकार, इस वर्ष सम्पूर्ण दिन अष्टमी तिथि है। ऐसी स्थिति में जो कृष्णजन्म के बाद पूजन करते हुए व्रत रखते हैं वे इस दिन करेंगे। इस वर्ष जन्माष्टमी व्रत तथा जन्मोत्सव व्रत एक ही दिन हो रहा है।

4. जया एकादशी, भाद्र कृष्ण एकादशी, दि. 10 सितम्बर, 2023ई. (सबका)

5. कुशी अमावस्या, दि. 14 सितम्बर, 2023ई.

देवकर्म एवं पितृकर्म के लिए कुश उखाड़ने का यह दिन मान्य है। मान्यता है कि इस दिन उखाड़ा गया कुश एक वर्ष तक बासी नहीं होता है।

6. विश्वकर्मा पूजा, सितम्बर. 17 सितम्बर, 2023ई.

विश्वकर्मा पूजा के सम्बन्ध में कुछ विद्वानों का मत है कि इसे संक्रान्ति के पुण्यकाल में मनाया जाना चाहिए। इसके अनुसार दि. 18 सितम्बर को सिंह की संक्रान्ति का पुण्यकाल होता है।

7. हरितालिका (तीज), भाद्र शुक्ल तृतीया, 18 सितम्बर, 2023ई.

8. गणेश चतुर्थी, भाद्र शुक्ल चतुर्थी, 18 सितम्बर, 2023ई.

9. चौठचन्द्र पर्व (मिथिला) भाद्र शुक्ल चतुर्थी (सायंकालिक), 18 सितम्बर, 2023ई.

10. ऋषिपंचमी, भाद्र शुक्ल पंचमी, 20 सितम्बर, 2023ई0

11. कर्माधर्मा एकादशी, भाद्र शुक्ल एकादशी, दि. 25 सितम्बर, 2023ई.

12. इन्द्रपूजा आरम्भ, भाद्र शुक्ल द्वादशी, 26 सितम्बर, 2023ई.

13. अनन्तपूजा, भाद्र शुक्ल चतुर्दशी, गणेश-पूजा विसर्जन, पूर्णिमा व्रत, 28 सितम्बर, 2023ई.

14. अगस्त्यार्घ्य दान, 29 सितम्बर, 2023ई.

***

रामावत संगत से जुड़ें

1) रामानन्दाचार्यजी द्वारा स्थापित सम्प्रदाय का नाम रामावत सम्प्रदाय था। रामानन्द-सम्प्रदाय में साधु और गृहस्थ दोनों होते हैं। किन्तु यह रामावत संगत गृहस्थों के लिए है। रामानन्दाचार्यजी का उद्घोष वाक्य– 'जात-पाँत पूछ नहीं कोय। हरि को भजै सो हरि को होय' इसका मूल सिद्धान्त है।

2) इस रामावत संगत में यद्यपि सभी प्रमुख देवताओं की पूजा होगी, किन्तु ध्येय देव के रूप में सीताजी, रामजी एवं हनुमानजी होंगे। हनुमानजी को रुद्रावतार मानने के कारण शिव, पार्वती और गणेश की भी पूजा श्रद्धापूर्वक की जायेगी। राम विष्णु भगवान् के अवतार हैं, अतः विष्णु भगवान् और उनके सभी अवतारों के प्रति अतिशय श्रद्धाभाव रखते हुए उनकी भी पूजा होगी। श्रीराम सूर्यवंशी हैं, अतः सूर्य की भी पूजा पूरी श्रद्धा के साथ होगी।

3) इस रामावत-संगत में वेद, उपनिषद् से लेकर भागवत एवं अन्य पुराणों का नियमित अनुशीलन होगा, किन्तु गेय ग्रन्थ के रूप में रामायण (वाल्मीकि, अध्यात्म एवं रामचरितमानस) एवं गीता को सर्वोपरि स्थान मिलेगा। 'जय सियाराम जय हनुमान, संकटमोचन कृपानिधान' प्रमुख गेय पद होगा।

4) इस संगत के सदस्यों के लिए मांसाहार, मद्यपान, परस्त्री-गमन एवं परद्रव्य-हरण का निषेध रहेगा। रामावत संगत का हर सदस्य परोपकार को प्रवृत्त होगा एवं परपीड़न से बचेगा। हर दिन कम-से-कम एक नेक कार्य करने का प्रयास हर सदस्य करेगा।

5) भगवान् को तुलसी या वैजयन्ती की माला बहुत प्रिय है अतः भक्तगण को इसे धारण करना चाहिए। विकल्प में रुद्राक्ष की माला का भी धारण किया जा सकता है। ऊर्ध्वपुण्ड्र या ललाट पर सिन्दूरी लाल टीका (गोलाकार में) करना चाहिए। पूर्व से धारित तिलक, माला आदि पूर्ववत् रहेंगे। स्त्रियाँ मंगलसूत्र-जैसे मांगलिक हार पहनेंगी, किन्तु स्त्री या पुरुष अनावश्यक आडम्बर या धन का प्रदर्शन नहीं करेंगे।

6) स्त्री या पुरुष एक दूसरे से मिलते समय राम-राम, जय सियाराम, जय सीताराम, हरि -जैसे शब्दों से सम्बोधन करेंगे और हाथ मिलाने की जगह करबद्ध रूप से प्रणाम करेंगें।।

7) रामावत संगत में मन्त्र-दीक्षा की अनूठी परम्परा होगी। जिस भक्त को जिस देवता के मन्त्र से दीक्षित होना है, उस देवता के कुछ मन्त्र लिखकर पात्र में रखे जायेंगे। आरती के पूर्व गीता के निम्नलिखित श्लोक द्वारा भक्त का संकल्प कराने के बाद उस पात्र को हनुमानजीके गर्भगृह में रखा जायेगा।

कार्पण्यदोषोपहतस्वभावः पृच्छामि त्वां धर्मसम्मूढचेताः।
यच्छ्रेयः स्यान्निश्चितं ब्रूहि तन्मे शिष्यस्तेऽहं शाधि मां त्वां प्रपन्नम्।। (गीता, 2.7)

8) आरती के बाद उस भक्त से मन्त्र लिखे पुर्जा में से कोई एक पुर्जा निकालने को कहा जायेगा। भक्त जो पुर्जा निकालेगा, वही उस भक्त का जाप्य-मन्त्र होगा। मन्दिर के पण्डित उस मन्त्र का अर्थ और प्रसंग बतला देंगे, बाद में उसके जप की विधि भी। वही उसकी मन्त्र-दीक्षा होगी। इस विधि में हनुमानजी परम-गुरु होंगे और वह मन्त्र उन्हीं के द्वारा प्रदत्त माना जायेगा। भक्त और भगवान् के बीच कोई अन्य नहीं होगा।

9) रामावत संगत से जुड़ने के लिए कोई शुल्क नहीं है। भक्ति के पथ पर चलते हुए सात्त्विक जीवन-यापन, समदृष्टि और परोपकार करते रहने का संकल्प-पत्र भरना ही दीक्षा-शुल्क है। आपको सिर्फ https://mahavirmandirpatna.org/Ramavat-sangat.html पर जाकर एक फार्म भरना होगा। मन्दिर से सम्पुष्टि मिलते ही आप इसके सदस्य बन जायेंगे।

***

वैदिक सम्मेलन में आयोजित नाटक के कुछ दृश्य

पत्रिका-पंजीयन सं. 52257/90

श्री महावीर स्थान न्यास समिति के लिए वीर बहादुर सिंह, महावीर मन्दिर, पटना- 800001 से ई-पत्रिका के रूप में https://mahavirmandirpatna.org/dharmayan/ पर निःशुल्क वितरित। सम्पादक : भवनाथ झा।